महाभारत भाषा

आश्रमवास, मुशल, महाप्रस्थान और स्वर्गारोहणपर्व

पांडवों का अशकुन देखना, यदुवंशियों का नाश और पांडवों का स्वर्गगमन वर्णित है।

श्रीभार्गवश्रेष्ठ मुंशी नवलकिशोर सी. आई. ई., की आज्ञानुसार पण्डित कालीचरण द्वारा अनुवादित।

तीसरी बार

लखनऊ

सुपरिंटेंडेंट बाबू मनोहरलाल भार्गव बी. ए., के प्रबन्ध से

मुंशी नवलकिशोर सी. आई. ई., के छापेखाने में छपा
सन् १९१५ ई०।

सूचीपत्र

आश्रमवासपर्व ।

मुशलपर्व ।

महाप्रस्थानपर्व ।

स्वर्गारोहणपर्व ।

श्रीनिकुञ्जविहारिणे नमः ॥

महाभारतभाषा आश्रमवासपर्व ।

मंगलाचरणम् ।

श्लोक ॥ नव्याम्भोधरवृन्दवन्दितरुचिं पीताम्बरालंकृतं प्रत्यग्रस्फुटपुण्डरीकनयनं सान्द्रप्रमोदास्पदम् ॥ गोपीचित्तचकोरशीतकिरणं पापाटवीपावकं स्वाराणमस्तकमाल्यलालितपदं वन्दामहे केशवम् १ या भाति वीणामिव वादयन्ती महाकवीनां वदनारविन्दे ॥ सा शारदा शारदचन्द्रबिम्बा ध्येयप्रभा नः प्रतिभां व्यनक्तु २ पाण्डवानां यशो वर्ष्म सकृष्णमपि निर्मलम् ॥ व्यधायि भारतं येन तं वन्दे बादरायणम् ३ विद्याविदग्रेसरभूषणेन विभूष्यते भूतलमद्य येन ॥ तं शारदा लब्धवरप्रसादं वन्दे गुरुं श्रीसरयूप्रसादम् ४ विप्राग्रणीगोकुलचन्द्रपुत्रः स विन्नकालीचरणाभिधानः ॥ कथानुगं आश्रमवासपर्व भाषानुवादं विदधाति सम्यक् ५ ॥

पहिला अध्याय ।

श्रीगणेश, नारायण और सरस्वती को नमस्कारपूर्वक 'जय' इतिहास कहता हूं १ पूर्व में अङ्ग उपांगों समेत ब्रह्मविद्या को समाप्त किया। उसमें भोग के त्याग द्वारा वनवासियों को शम, दम आदिक की प्राप्ति होती है। उसे ही धृतराष्ट्र के आचार द्वारा दिखलाकर प्रकट करते और उससे प्राप्त होने योग्य जीव-ईश्वर का तत्त्व अपूर्व चमत्कारों से दिखलाते हुए कथा प्रारम्भ करते हैं। जनमेजयने पूछा कि मेरे पितामह महात्मा पाण्डवोंने राज्य पाकर महात्मा धृतराष्ट्रसे किस प्रकार उपकारपूर्वक वर्ताव किया, जिसके कि पुत्र और मंत्री मारेगये? रक्षा का आश्रय न रखनेवाले ऐश्वर्य से रहित राजा धृतराष्ट्र और यशस्विनी गान्धारी की क्या दशा हुई २ मेरे पूर्व पितामह पाण्डव कब तक राज्य करते रहे? इसे आप मुझसे कहिये ३ वैशम्पायन बोले कि जिनके शत्रु मारेगये, उन महात्मा पाण्डवोंने राज्य पा धृतराष्ट्र को अग्रवर्ती करके सब पृथ्वीका पालन पोषण किया ४ हे कौरवोत्तम! वह सञ्जय, बुद्धिमान् युयुत्सु

और दासीपुत्र विदुर धृतराष्ट्र की सेवा करने लगे ५ पाण्डवोंने पन्द्रहवर्ष तक राज्यके सब कार्य राजा धृतराष्ट्र से पूछे और आज्ञानुसार सब काम किये ६ धर्मराजकी आज्ञा से उन वीरों ने सदैव उनके चरणोंको दण्डवत् कर राजाको प्रतिदिन हाज़िरी दी ७ मस्तक सूंघे हुए उन पाण्डवोंने राज्यके सब कार्य किये और कुन्ती भी गान्धारी के पास रहकर आज्ञानुसारिणी रही। द्रौपदी, सुभद्रा आदि पाण्डवों की सब स्त्रियों ने विधिपूर्वक उन दोनों सास ससुर के साथ अच्छा वर्ताव किया ८-९ युधिष्ठिर ने राजाओं के योग्य बहुमूल्य वस्त्र, भूषण, पलँग और नाना प्रकार के भक्ष्य भोज्य सब पदार्थ १० धृतराष्ट्र को भेट किये। उसी प्रकार कुन्ती ने भी गान्धारी के साथ गुरुवृत्ति का वर्ताव किया ११ हे कौरव ! विदुर, सञ्जय और युयुत्सुने उस वृद्ध राजाकी उपासना की जिसके कि सब पुत्र मारे गये थे १२ द्रोणाचार्य के साले, ब्राह्मणों में बड़े उत्तम धनुर्धर कृपाचार्यजी राजाके साथ प्रीति करनेवाले हुए १३ देवता, ऋषि, पितृ और राक्षसोंकी कथा कहते पुराण ऋषि भगवान् व्यासजी भी सदैव राजा के समीप रहे १४ फिर धृतराष्ट्र की आज्ञा से विदुरजी ने वे कर्म कराये जो धर्म व्यवहार संयुक्त थे १५ विदुरजी की श्रेष्ठ नीति से धृतराष्ट्र के अनेक अभीष्ट कार्य थोड़े ही धन से सामन्तों द्वारा प्राप्त होते थे। राजा धृतराष्ट्रने वन्दियों को मुक्त किया और मारने योग्य मनुष्यों को छोड़ा, परंतु राजा युधिष्ठिर ने कभी कुछ नहीं किया १६-१७ फिर महातेजस्वी कौरवराज युधिष्ठिर ने विहार यात्राओं में सब अभीष्ट पदार्थ राजा धृतराष्ट्र को भेट किये १८ आरालक (शाकादि बनानेवाले), सूपकार (रसोई बनानेवाले), रागखांडूक (सोंठ, शर्करा युक्त पूप बनानेवाले) प्रभृति राजा धृतराष्ट्रके पास पहले की भाँतिही नियत रहे १९ पाण्डवों ने प्रतिदिन बहुमूल्य वस्त्र और नितनयी विविध फूलमालाएं न्यायके अनुसार धृतराष्ट्र को भेट कीं २० मैरेय नामक आसव, मांस, मत्स्य, खाने पीने की वस्तुएं और अपूर्व भोजन प्रथम ही की भाँति राजाको निवेदन किये २१ जो राजालोग यहां वहांसे आये, वे सब पूर्वकी नाईं कौरवेन्द्र धृतराष्ट्र के पास वर्तमान हुए २२ कुन्ती, द्रौपदी, यशस्विनी सुभद्रा, नागकन्या उलूपी देवी, चित्राङ्गदा २३ धृष्टकेतुकी बहिन और जरासन्धकी पुत्री आदि के सिवाय अन्य बहुतसी स्त्रियां २४ सेवा में नियत होकर गान्धारी के पास वर्तमान हुईं। और ऐसी सेवा की जिसमें कि पुत्रों से रहित धृतराष्ट्र किसी प्रकार दुःख न पावें २५

युधिष्ठिर ने भी सदैव अपने भाइयों को यही आज्ञा दी । भीमसेन को छोड़ तीनों पाण्डवों ने इस प्रकार धर्मराज का सार्थक वचन सुनकर २६ अधिकता से उपयोग किया परन्तु उस वीर भीमसेन के हृदय से वह बात दूर नहीं होती थी जो कि धृतराष्ट्र की दुर्मतिसे द्यूतके द्वारा उत्पन्न हुई थी २७ ॥

इति श्रीमहाभारतेआश्रमवासकेपर्वणि प्रथमोऽध्यायः १ ॥

दूसरा अध्याय ।

वैशम्पायन बोले कि इस प्रकार पाण्डवों से पूजित,ऋषियोंके साथ बैठे हुए राजा धृतराष्ट्र ने पहले की भाँति विहार किया १ उन्होंने ब्राह्मणों के देने योग्य देवपूजा आदिक दीं, राजा युधिष्ठिरने सबको विधि के अनुसार किया। दयावान्, प्रीतिमान्, राजा धर्मराज ने भाइयों और मंत्रियों से कहा २-३ कि राजा धृतराष्ट्र मुझसे और आप लोगों से पूजन करने योग्य है। जो मनुष्य धृतराष्ट्र की आज्ञा में नियत रहता है, वह मेरा प्यारा है; उसके विपरीत कर्म करनेवाला मनुष्य मेरा विरोधी होकर दंडके योग्य होगा। पुत्रोंके श्राद्धमें ४-५ और सब ज्ञाति बांधव या नातेदारों के श्राद्ध में जितने कर्म करने की इनकी इच्छा हो, सब इन्हें करने दो। इसके पश्चात् बड़े साहसी राजा धृतराष्ट्र ने ६ ब्राह्मणोंको, उनकी योग्यताके अनुसार,बहुतसा धन दिया। धर्मराज, भीमसेन, अर्जुन और नकुल-सहदेव ने भी ७ उनके प्रिय करने की इच्छा से उनकी सब प्रकारकी आज्ञाओं का पालन किया। पुत्र पौत्रोंके मरने से पीड़ावान् वह वृद्ध राजा ८ उन्होंने यह विचारकर बड़ी सावधानी से रक्षा की कि किसीप्रकार से भी हमारे शरीरों से उत्पन्न शोकसे इन्हें कष्ट न पहुँचे। पुत्रोंकी जीवितावस्था में उस कौरव वीरको जितना सुखथा ९ उससे कहीं अधिक अन्यान्य भोग उसने प्राप्तकिये। सभी पाण्डवों का यही निश्चय था। इसीसे उस प्रकार स्नेह भाव रखनेवाले वे पांचों पाण्डव मिलकर १० अच्छी रीति से धृतराष्ट्र की आज्ञा में रहे। धृतराष्ट्र भी उन सबको नम्रतायुक्त; नियममें नियत ११ और शिष्यता की रीति से युक्त देखकर गुरुके समान वर्ताव करने लगे। गांधारीने भी पुत्रों के अनेक प्रकार श्राद्धों में १२ वेदपाठी ब्राह्मणों को अभीष्ट वस्तुएं देकर अनृणता प्राप्त की। इस प्रकार धर्मधारियों में श्रेष्ठ बुद्धिमान् युधिष्ठिरने भाइयों समेत उस राजा का पूजन किया १३ वैशम्पायन बोले कि इसके पीछे

महातेजस्वी कौरवकुल के पोषण करनेवाले वृद्ध राजा धृतराष्ट्रने पाण्डुनन्दन युधिष्ठिर में कोई अप्रिय बात नहीं देखी १४ महात्मा पाण्डवों के शुभ रीति-कर्मी होने पर अम्बिका के पुत्र राजा धृतराष्ट्र प्रसन्न हुए १५ और सौबलकी पुत्री गान्धारी भी उस पुत्रशोक को दूर कर सदैव ऐसी प्रसन्न हुई जैसे कि अपने पुत्रोंपर रहती थीं १६ कौरवों के पोषक,पराक्रमी राजा युधिष्ठिरने राजा धृतराष्ट्र के सब अभीष्ट ही किये १७ महाराज जनमेजय ! राजा धृतराष्ट्र और तपस्विनी गान्धारी दोनों जो कुछ छोटा बड़ा कार्य कहते थे, शत्रुओं के नाशक पाण्डवों के धुरन्धर राजा युधिष्ठिर उनके वचनों का आदर कर उस कार्यको करदेते थे १८-१९ राजा उनके इस व्यवहार से अत्यन्त प्रसन्न हुआ और अपने निर्बुद्धि पुत्र दुर्योधन का स्मरण करके पश्चात्ताप किया करते । प्रातःकालके समय उठकर, स्नान जपादिक से निवृत्त राजा धृतराष्ट्र सदैव पाण्डवों को आशीर्वाद दिया करते कि युद्धों में इनकी विजय हो २०-२१ राजाने ब्राह्मणों से स्वस्तिवाचनपूर्वक अग्नि में हवनकरके पाण्डवों की दीर्घायु चाही २२ उस समय राजा धृतराष्ट्र ने पाण्डवों से जैसी प्रसन्नता पाई वैसी कभी अपने पुत्रों से न पाई थी २३ और वह जैसे ब्राह्मण और क्षत्रियों के प्यारे थे वैसेही वैश्य और शूद्रों के समूहों को भी प्रिय थे २४ उस समय धृतराष्ट्र के पुत्रों के पापों को हृदय से भूलकर राजा युधिष्ठिर धृतराष्ट्र के आज्ञाकारी हुए २५ राजा धृतराष्ट्र का अप्रिय करनेवाला मनुष्य बुद्धिमान् युधिष्ठिर की शत्रुता प्राप्त करता था २६ किसी भी मनुष्यने युधिष्ठिर के भयसे राजा धृतराष्ट्र और दुर्योधनके बुरे कर्मों का उल्लेख नहीं किया २७ हे शत्रुञ्जय ! गान्धारी और विदुर महाराज युधिष्ठिर के बाहरी-भीतरी धैर्य और पवित्रता से प्रसन्न हुए परन्तु भीमसेन के गुणों से अप्रसन्न रहे २८ निश्चय करनेवाले धर्म-पुत्रभी राजा धृतराष्ट्र के इच्छानुसार कर्म करते और उन्हें देखकर सदैव चित्त से दुखी होतेथे २९ शत्रुओं का विजयकरनेवाला, हृदयसे हाराहुआ धृतराष्ट्र उस अपने आज्ञाकारी धर्मपुत्र भी राजायुधिष्ठिर के समान कर्म कियाकरता था ३०॥

इति श्रीमहाभारतेआश्रमवासकेपर्वणि द्वितीयोऽध्यायः २ ॥

तीसरा अध्याय ।

वैशम्पायन बोले कि सम्पूर्ण राज्य में मनुष्योंने राजा युधिष्ठिर और दुर्योधन

के पिताकी प्रीति में अन्तर नहीं देखा १ जब जब कौरव राजा धृतराष्ट्र अपने दुर्बुद्धि पुत्रको याद करते तब तब हृदय से भीमसेन को गालियां दिया करते थे २ हे राजन्! उसी प्रकार भीमसेनने भी सदैव विरुद्धचित्त से राजा धृतराष्ट्र को नहीं सहा ३ भीमसेनने गुप्तरूपसे इसके अप्रिय कर्म किये और राजसेवकों के द्वारा इसकी आज्ञाओं को भी विपरीत कराया ४ फिर उसके दुराचार और बुरे चलनों का स्मरण कर भीमसेनने सुहृज्जनोंके बीच भुजाका शब्द किया ५ क्रोधयुक्त, अशान्तचित्त भीमसेनने अपने शत्रु दुर्योधन, कर्ण और दुश्शासन की याद कर धृतराष्ट्र और गान्धारी को सुनाते हुए ६ कहा कि परिघके समान भुजा रखनेवाले मैंने अन्धे राजा के नानाप्रकार के शस्त्रों से लड़नेवाले सब पुत्रों को ७ परलोक में पहुँचाया। मेरी ये दोनों भुजाएं परिघरूप महादुर्जय हैं ८ जिन दोनों भुजाओं के मध्य को पाकर धृतराष्ट्र के पुत्रोंका नाश हुआ, और जिनके द्वारा पुत्र और बान्धवों समेत दुर्योधन नाश किया गया; वे पूजने के योग्य चन्दनसे चर्चित हैं ९ हे राजन्! ऐसे ऐसे अनेक बाणरूप वचन उसने कहे १० भीमसेनके ये वचन सुनकर धृतराष्ट्र को वैराग्य हुआ। उस बुद्धिमती, समय की लौटपौट को जाननेवाली ११ सर्वधर्मज्ञ गान्धारी ने उन अप्रिय वचनों को सुना और पन्द्रहवां वर्ष व्यतीत होनेपर १२ भीमसेनके वचनरूपी बाणों से पीड़ित राजा धृतराष्ट्र को वैराग्य हुआ परन्तु कुन्ती के पुत्र राजा युधिष्ठिर ने यह कुछ भी नहीं जाना १३ अर्जुन, कुन्ती, यशस्विनी, द्रौपदी और धर्मज्ञ नकुल-सहदेव राजाके चित्तकी इच्छा के समान कर्म करते थे १४ राजा के चित्तकी रक्षा करते हुए उन लोगोंने कुछ अप्रिय कभी नहीं कहा। फिर धृतराष्ट्र ने अपने भाई बन्धु, नातेदार आदिका अच्छी रीति से पूजन किया १५ और नेत्रोंमें आँसू भरकर शोकयुक्तहो उनसे कहा कि यह तो आप को विदितही है कि जिस प्रकारसे कौरवोंका नाश हुआ १६ उस सब नाश को कौरवों ने मेरेही अपराधसे जाना है जो मुझ निर्बुद्धिने उस दुर्बुद्धि, बिरादरीके भयकी वृद्धि करनेवाले दुर्योधनका कौरवीय राज्यपर अभिषेक कराया; जो मैंने वासुदेवजी के उन सार्थक वचनों को नहीं सहा कि "अच्छाहो यदि यह निर्बुद्धि पापी दुर्योधन मन्त्रियों समेत बन्धन में कियाजाय" १७-१८ और विदुर, भीष्म, द्रोणाचार्य एवं कृपाचार्य प्रमुख ज्ञानियों ने भी पुत्रकी प्रीति में फँसे हुए मुझसे अनेक हितकारी वचन कहे १९ और प्रत्येक स्थानमें महात्मा

व्यास, सञ्जय तथा गान्धारीने भी मुझे समझाया। वेही बातें अब मुझे दुःख-दायक होकर पश्चात्ताप कराती हैं २० यह बात मुझको दुःख देती है कि मैंने बाप दादोंकी यह प्रकाशवान् सम्पत्ति महात्मा पाण्डवों को नहीं दी २१ उस दुःखदायक सब राजाओं के होनेवाले विनाश को जानकर श्रीकृष्णजीने इस राज्य के विभाग होजाने को बहुत कल्याणरूप माना २२ मैं इन भूतकाल के शूलरूपी, अपने किये हुए हजारों दोषोंको अपने हृदय में धारण करताहूं २३ अब पन्द्रहवें वर्षमें अधिकतर देखता हूं। इस हेतु मैं दुर्बुद्धि इस पापकी शुद्धिके लिये नियम करनेवाला हूं २४ चौथे दिन और कभी कभी आठवें दिन भी इतनाही भोजन करता हूं कि जिससे केवल क्षुधा-तृषा शान्त हो और शरीर बना रहे। गान्धारी मेरे उस व्रतको जानती है २५ सब भाई, बन्धु, नातेदार युधिष्ठिर के भयसे यही जानते हैं कि यह सदैव भोजन करता है क्योंकि मेरा भूखा रहना सुनकर वह युधिष्ठिर अत्यन्त शोच करता है २६ मैं जपमें प्रवृत्तहो नियम के बहाने पृथ्वीपर मृगचर्म के आसनों पर सोता हूं और यही हाल यशस्विनी गान्धारीका भी है २७ हम दोनों के युद्धमें मुख न मोड़नेवाले सौ पुत्र मारेगये। मैं उनका शोच नहीं करताहूं क्योंकि उसको क्षत्रियधर्म जाना है २८ यह कहकर कौरव धृतराष्ट्रने धर्मराजसे कहा कि हे कुन्ती के पुत्र! तुम्हारा कल्याण हो। तुम मेरे इस वचन को समझो २९ हे पुत्र! तुमसे सेवा किया हुआ मैं सुखसे ठहरा हुआ हूं और बारम्बार बड़े बड़े दान और श्राद्धभी मैंने किये ३० हे पुत्र! मैंने बलके समान बड़ा सुकृत प्राप्त किया है। यह गांधारी, जिसके सौपुत्र मारेगये हैं, धैर्यसे मेरी ओर देखतीहै ३१ द्रौपदीके अप्रिय करने-वाले और तुम्हारा ऐश्वर्य हरनेवाले वे सब निर्दयी समाप्त हुए, युद्ध में अपने धर्म से मारे गये ३२ हे कौरवनन्दन! उन्हींके विषय में प्रायश्चित्तादिक कर्म नहीं देखताहूं क्योंकि सम्मुख युद्ध करनेवाले वे सब शस्त्रोंसे विजय किये हुए लोकों को गये ३३ हे राजेन्द्र! अब अपना और गांधारीका हित करनेवाला पवित्र कर्म करनेके योग्य है। तुम आज्ञा देने योग्यहो ३४ तुम धर्मधारियों में श्रेष्ठ और सदैव धर्मवत्सल हो; प्राणियों के राजा और गुरु हो। इसीलिये मैं कहता हूं ३५ हे वीर! इस गान्धारी समेत मैं चीरवल्कलधारी होकर तुम्हारी आज्ञा से वनों में निवास करूंगा ३६ हे भरतर्षभ, तात, युधिष्ठिर! मैं तुझको आशीर्वाद देता हुआ वनचारी होऊंगा। हमारे कुल में, वृद्धावस्था में ऐसा

वनवास करना सभीको योग्य है ३७ कि अवस्था के अन्तसमय अपने पुत्रों को ऐश्वर्य देकर वनको जायँ। हे राजन्! वहां जाकर मैं वायुभक्षी अथवा निराहार होकर भी निवास करता हुआ ३८ अपनी पत्नीसमेत उत्तम तप करूंगा। हे वीर पुत्र! तुमभी तपस्या का फल पाओगे, क्योंकि राजा हो और राजा लोग प्रजाके शुभाशुभ कर्म के फलभागी हैं ३९ युधिष्ठिरने कहा हे राजन्! आपके इस प्रकार दुःखी होने पर राज्यसे मुझको आनन्द नहीं होता है। मुझ अत्यन्त दुर्बुद्धि अचेत और राज्यमें प्रवृत्तचित्तको धिक्कार है ४० जो मैं भाइयों समेत इस दुःख से पीड़ित, व्रत करने से अत्यन्त दुर्बल, क्षुधाके जीतनेवाले और पृथ्वी पर सोनेवाले को नहीं जानता ४१ पश्चात्ताप है कि मैं अज्ञानी गंभीर बुद्धिवाले तुमसे ठगा गया। प्रथम मुझे विश्वास देकर इस दुःख को भोगते हो ४२ हे राजन्! मुझको राज्य, भोग, यज्ञ और सुखसे क्या प्रयोजन है? आप सरीखे मेरे वृद्धने ये दुःख पाये ४३ हे राजन्! तुम दुखिया के इन वचनों से सम्पूर्ण राज्यसमेत अपनी आत्माको भी पीड़ित जानता हूं ४४ आप पिता हो, माता हो और हमारे परम गुरु हो। आप से पृथक् होकर हम कहां रहेंगे ४५ हे राजाओं में बड़े साधु! आपका औरस पुत्र युयुत्सु है। हे महाराज! वह राजा हो, या आप जिसे चाहते हों, वह राजा किया जाय ४६ मैं वनको जाऊंगा, आप राज्यमें राजशासन करो। अपकीर्ति से भस्म होनेवाले मुझको आप भस्म करने के योग्य नहीं हो ४७ मैं राजा नहीं हूं, राजा आपही हैं। मैं आपसे सनाथ हूं, मैं तुम धर्मज्ञ गुरु को आज्ञा देने का उत्साह कैसे कर सकता हूं ४८ हे निष्पाप! हमारे हृदयमें दुर्योधनकी ओरसे कुछ भी क्रोध नहीं है। वह वैसी ही होनी थी। हम और अन्य सभी लोग मोहमें अचेत होगये ४९ हम आपके वैसे ही पुत्र हैं जैसे कि दुर्योधनादिक थे। मेरे मत से गान्धारी और कुन्ती में किसी प्रकार का भी भेद नहीं है ५० हे राजेन्द्र! जो आप मुझको छोड़कर जाओगें, तो शपथसे कहताहूं कि मैं आपके पीछे पीछे चलूंगा ५१ धनसे पूर्ण, सागररूप मेखला रखनेवाली यह पृथ्वी आपसे जुदे होने पर मुझे प्रसन्नता न देगी ५२ हे राजेन्द्र! यह सब आपका है, मैं आपको हृदय से प्रसन्न करता हूं। हम आपके आधीन हैं, आपके चित्तका सन्ताप दूर हो ५३ हे राजन्! मैं मानता हूं कि तुमने होनहार को प्राप्त किया; मैं प्रारब्ध से आपकी सेवा कर चित्तके

तापको दूर करूंगा ५४ धृतराष्ट्र बोले कि हे कौरवनन्दन, प्रभु, युधिष्ठिर ! मेरा चित्त तपमें प्रवृत्त है और वनमें जाना हमारे कुलके योग्य है ५५ हे पुत्र ! मैंने बहुत कालतक निवास किया और तुमने भी मुद्दत तक खूब सेवा की । हे राजन् ! तुम मुझ वृद्धको आज्ञा देने योग्य हो ५६ वैशम्पायन बोले कि उन कम्पायमान और आशीर्वाद देने के लिये अञ्जलि करनेवाले राजा धृतराष्ट्र ने धर्मराज से यह कहकर ५७ महारथी कृपाचार्य और सञ्जय से भी यही कहा कि मैं आप दोनों के द्वारा राजा युधिष्ठिरको समझाया चाहता हूं ५८ बड़ी अवस्था और वार्तालाप करने से मेरा चित्त म्लान होता है और मुख सूखता है ५९ बुद्धिमान् धर्मात्मा वृद्ध राजा धृतराष्ट्र ने यह कहकर अकस्मात् निर्जीव के समान हो गान्धारी का सहारा लिया ६० शत्रुओं के विजय करनेवाले राजा युधिष्ठिरने राजाको अचेत देखकर बड़ा कठिन कष्ट पाया ६१ युधिष्ठिर बोले कि जिनका बल-पराक्रम साठ हज़ार हाथी के समान था, वही राजा स्त्री के सहारे शयन करते हैं ६२ जिन्होंने पूर्वसमय में भीमसेन की ख़ालिस लोहेकी मूर्तिको चूर्ण कर डाला, वे अबला स्त्री के आश्रयमें हैं ६३ मुझ धर्म से अज्ञान रहनेवाले को धिक्कार है । मेरी बुद्धि और ज्ञान को धिक्कार है जिसके कारणसे राजा इस दशामें शयन करते हैं ६४ मैं भी इन्हींके समान उपवास करूंगा जैसा कि ये मेरे गुरु करते हैं । राजा धृतराष्ट्र और यह यशस्विनी गान्धारी भोजन नहीं करती हैं तो मैं भी भोजन त्यागदूंगा ६५ वैशम्पायन बोले कि हे राजा जनमेजय ! इसके अनन्तर धर्मज्ञ राजा युधिष्ठिरने शीतल जल और हाथसे उनकी छाती और मुखको धीरे धीरे स्पर्श किया ६६ राजा युधिष्ठिरके रत्न, औषधियों से युक्त पवित्र और सुगन्धित हाथ के स्पर्श से राजा धृतराष्ट्र सचेत हुए ६७ धृतराष्ट्र बोले हे कमललोचन पाण्डव ! तुम हाथ से मुझको फिर स्पर्श करके मिलो । मैं तुम्हारे अत्यन्त स्पर्शसे सजीव होता हूं ६८ हे राजन् ! मैं हाथों से तुमको स्पर्श करता हुआ तुम्हारे मस्तकको सूंघना चाहता हूं; इसमें मुझे बड़ा आनन्द है ६९ हे कौरवोंमें श्रेष्ठ ! अब आहार त्यागे आठवां दिन है, जिससे मैं अधिक चेष्टा करने में समर्थ नहीं हूं ७० तुमसे प्रार्थना कर मैंने यह कठिन परिश्रम किया है । हे तात ! इसी हेतु निर्बलचित्त होकर मैं अचेतसा होगया हूं ७१ हे कौरवकुल के उद्धार करनेवाले, समर्थ युधिष्ठिर ! मैं मानताहूं कि अमृत रस की समान तेरे इस हाथ के स्पर्श से मैं

सजीव होगया हूं ७२ वैशम्पायन बोले कि हे भरतवंशिन् ! ताऊकी इन बातों को सुनकर युधिष्ठिर ने पिताकीसी प्रीति से उनके सब अंगों को बड़े धीरे धीरे स्पर्श किया ७३ फिर राजा धृतराष्ट्रने सावधान होकर युधिष्ठिर को भुजाओं से अपनी बगल में लेकर मस्तक सूंघा ७४ तब अत्यन्त दुःखी होकर विदुरादिक रोने लगे और बड़े दुःख से राजा युधिष्ठिरको कुछ नहीं कहा ७५ हे राजन् ! चित्त में कठिन दुःख पानेवाली, धर्मज्ञ गान्धारी ने उन दुःखों को सहकर कहा कि इस प्रकार से दुःखी न होना चाहिये ७६ कुन्ती समेत दुःखी अन्यान्य स्त्रियां आंसुओं से नेत्र भरे उसको घेरकर चारों ओर नियत हुईं ७७ धृतराष्ट्रने युधिष्ठिरसे फिर कहा कि हे भरतवंशियों में श्रेष्ठ, राजा युधिष्ठिर ! मुझे आज्ञा दो, मैं तप करूंगा ७८ हे तात ! बारम्बार वार्तालाप करने से मेरा चित्त भयभीत होकर उचटता है । हे पुत्र ! अब इसके पीछे तुम मुझे दुःख देनेके योग्य नहीं हो ७९ युधिष्ठिरसे उन कौरवेन्द्र के यह कहने पर सब जीवधारियों के बड़े दुःखकारी शब्द उत्पन्न हुए ८० धर्मपुत्र युधिष्ठिर ने इस दशा के अयोग्य, विपरीतरूप, दुर्बल, व्रत से अत्यन्त क्षीण केवल अस्थिचर्मयुक्त शरीर, महाप्रभु अपने ताऊको देख शोक के आंसू गिराते हुए कहा ८१-८२ हे परन्तप, नरोत्तम, राजा धृतराष्ट्र ! मैं अपने जीवन और सम्पूर्ण पृथ्वी के राज्य को उतना नहीं चाहता हूं जितना कि आपका प्रिय करना चाहता हूं ८३ जो मैं पोषण के योग्य हूं और आपका प्यारा भी हूं तो भोजन कीजिये; इसके पीछे आपकी दूसरी बातों को जानूंगा और सुनूंगा ८४ तब महातेजस्वी धृतराष्ट्रने कहा कि हे बेटा ! मैं चाहताहूं कि तेरी आज्ञा से भोजन करूं ८५ महाराज धृतराष्ट्र के युधिष्ठिर से इस प्रकार कहने पर सत्यवती के पुत्र व्यासऋषिने सम्मुख आकर यह कहा ८६ ॥

इति श्रीमहाभारतेआश्रमवासकेपर्वणि तृतीयोऽध्यायः ३ ॥

चौथा अध्याय ।

व्यासजी बोले कि हे महाबाहु, कौरवनन्दन युधिष्ठिर ! महातेजस्वी धृतराष्ट्र ने जो कहा है, उसमें किसी प्रकार का विचार न कर उसे करो १ यह राजा वृद्ध है, मुख्यकर इसके पुत्र मारे गये; मेरी समझ में यह ऐसे ऐसे दुःखों को नहीं सहसकेगा २ महाराज ! यह ज्ञानवती, दयालुचित्त, भाग्यवती गान्धारी भी अपने पुत्रोंके कठिन शोकों को बड़े धैर्य से सहती है ३ मैं भी तुम से यही कहता हूं ! तुम मेरी बात मानकर इसे आज्ञा देदो नहीं तो यह यहीं व्यर्थ मर

जायगा ४ यह राजा प्राचीन राजर्षियों की सी गति पावेगा । अवस्था के अन्तपर सब राजर्षियों को वनवास होता है ५ वैशम्पायन बोले, तब अपूर्व-कर्मी व्यास से इस प्रकार शिक्षा पाकर महातेजस्वी धर्मराज ने महामुनि को उत्तर दिया ६ कि भगवन्! आपही हमारे बड़े हैं, आपही हमारे गुरु हैं और आपही इस राज्य और कुलके रक्षाश्रय हैं ७ मैं आपका पुत्र हूं । भगवन्! आपही मेरे पिता, राजा और गुरु हैं । पिताकी आज्ञापर चलनेवाला मनुष्य ही धर्मसे पुत्र होता है ८ वेदज्ञों में श्रेष्ठ, महातेजस्वी, महाकवि व्यासजी ने युधिष्ठिर से फिर कहा कि ९ हे महाबाहो! यह इसी प्रकार है जैसा कि तुम कहते हो परन्तु यह राजा वृद्ध है और उपनिषद् मतमें नियत है १० सो मेरी और तुम्हारी-दोनों की आज्ञा से इसे अपने चित्त का अभीष्ट करने दो; तुम इसके विघ्नकर्ता मत बनो ११ हे युधिष्ठिर! राजर्षियों का परमधर्म यही है कि युद्धमें अथवा वनमें विधिके अनुसार अपना शरीर त्यागें १२ हे राजेन्द्र! यह राजा धृतराष्ट्र तुम्हारे पिता राजा पाण्डु से पूजन कियाजाता था और वे शिष्यता की रीति से धृतराष्ट्र को अपने गुरु के समान उपासना करते थे १३ तुमलोगों ने रत्नों के पहाड़ों से शोभायमान दक्षिणावाले यज्ञों से पूजन किया, पृथ्वी को भोगा और प्रजाका पालन किया १४ तुम्हारे वनवासी होनेपर धृतराष्ट्रने पुत्रकी स्वाधीनता में होकर इस बड़े राज्यको तेरह वर्षतक भोगा और नाना प्रकारका धन दान किया १५ हे निष्पाप, नरोत्तम! भृत्यादिकों समेत तुमने गुरुसेवासे राजा धृतराष्ट्र और यशस्विनी गान्धारी की आराधना की १६ अब अपने ताऊ की आज्ञा मानो क्योंकि यह समय तप करने का है । इसकी कोई अल्पमृत्यु भी वर्तमान नहीं है १७ इतना कह, राजा को आशीर्वाद दे और राजा युधिष्ठिर से यह कहलाकर कि 'ऐसा ही होगा' व्यासजी वनको चलेगये १८ भगवान् व्यासदेव के चले जाने पर झुके हुए राजा युधिष्ठिरने वृद्ध ताऊ से कहा १९ कि व्यासजीने जो कहा और जो आपके चित्तकी इच्छाभी है और जिसप्रकार बड़े धनुर्धर कृपाचार्य, विदुर, युयुत्सु और सञ्जयने भी कहा है; मैं शीघ्रही उसे करूंगा । इस कुलकी वृद्धि चाहनेवाले आप सब लोग मुझसे पूजन के योग्य हैं २०-२१ हे राजन्! शिर झुकाकर मैं आपसे यह प्रार्थना करताहूं कि जब तक आप आश्रमको न जायँ तबतक आहार पानादिक करते रहें २२ ॥

इति श्रीमहाभारतेआश्रमवासकेपर्वणि चतुर्थोऽध्यायः ४ ॥

पांचवां अध्याय ।

वैशम्पायन बोले कि राजा युधिष्ठिर से विदा किये हुए प्रतापी राजा धृतराष्ट्र जिनके पीछे गान्धारी थीं, अपने महल को गये १ वृद्ध गजराज की भांति शिथिलेन्द्रिय, बुद्धिमान् राजा धृतराष्ट्र बड़े कष्टसे पैर उठाते हुए चले २ ज्ञानी विदुर, सूतसञ्जय और बड़े धनुर्धर शारद्वत कृपाचार्य भी पीछे पीछे चले ३ हे राजन्! महल में प्रवेशकर दिनके प्रथमभाग की सन्ध्यादिक क्रियाएं कर तथा उत्तम ब्राह्मणों को तृप्त करके उन्होंने भोजन किया ४ हे भरतवंशिन् ! सेवकों की सेवासे पूजित,धर्मज्ञ सावधानचित्त गान्धारी ने भी कुन्ती और सब बन्धुओं समेत भोजन किया ५ भोजन करनेवाले उन सब विदुर आदिक पाण्डवों ने भी भोजन से निवृत्तहुए राजा धृतराष्ट्र को हाज़िरी दी ६ इसके पीछे पास बैठे हुए युधिष्ठिरकी पीठपर हाथ फेरकर धृतराष्ट्रने कहा कि ७ हे राजर्षभ कौरव-नन्दन ! जिसमें धर्म मुख्यता से है उस आठ अङ्ग (स्वामी अमात्यादिकसे) युक्त राज्य के मध्य में तुमको सब दशा में सावधानी करनी उचित है ८ हे युधिष्ठिर ! वह रक्षा राजधर्म से होनी सम्भव है । तुम बुद्धिमान् हो, उसको समझो ९ तुम सदैव उनकी उपासना करो जो विद्यासे वृद्ध हैं। वे जो आज्ञा दें उसको सुनो और विना विचार किये उसका पालन करो १० प्रातःकाल उठकर बुद्धिके अनुसार उनका पूजनकर कर्म का समय होने पर अपना कार्य उनसे पूछो । तुम इच्छावान् सफलकर्मी से पूजित होकर वे करने के योग्य कर्म बतलावेंगे । हे भरतवंशिन् ! वह धर्म सब दशामें तुम्हारे अभीष्ट का दाता है ११-१२ सब इन्द्रियोंकी घोड़े के समान रक्षा करो । वे तेरे मनोरथ सिद्ध करने के कर्म ऐसे करें जैसे कि बाप दादोंसे प्राप्त रक्षित धन १३ छलहीन,पवित्र जन्म, शिक्षायुक्त, पवित्र मन्त्रियोंको सब अधिकारों पर नियत करो १४ शत्रुओं से परोक्ष होकर अपने देशवासी सुपरीक्षित दूतों से समाचार मँगवाओ १५ तुम्हारा नगर सब दिशाओं में दृढ़ प्राकार, तोरण और नगर के बाहरी द्वार से युक्त अट्ट, अट्टालिकाओं से सम्बन्धित उत्तम स्थानों समेत श्रेष्ठ रीतिसे रक्षित हों १६ उसके सब बड़े बड़े द्वार सब दोषों से रहित, सबओर से शोभायमान रचना और उपायोंसे रक्षित हों। कुल और स्वभाव में परीक्षा किये हुए मनुष्योंसे तेरे राज्य के कार्य शोभा पावें। हे भरतवंशिन् ! भोजनादिक में सदैव अपना

शरीर रक्षा के योग्य है १७-१८ विश्वस्त वृद्ध पुरुषों के आधीन तुम्हारी स्त्रियां विहार, भोजन और पुष्पशय्या आदिकों पर निवास करने के समय भी भलीभांति रक्षितहों १९ हे युधिष्ठिर ! सुन्दर स्वभाव के ज्ञानी और कुलीन ब्राह्मणों को मन्त्री बनाओ । जो ब्राह्मण पण्डित, विद्यावान्, शान्तप्रकृति, कुलीन, धर्म-अर्थ में सावधान और सत्यवक्ता हों तुम उनके साथ सलाह करो, बहुतसे मनुष्यों से मत करो—किसी बहाने से सब मन्त्रियों समेत अच्छे सुरक्षित विचारालय में अथवा किसी स्थल में नियत होकर प्रत्येक के साथ सलाह करो २०—२२ वृक्षादिकों से रहित वनमें सलाह करो परन्तु रात्रि के समय कभी सलाह मत करो । बन्दर, पक्षी और जो दूत मनुष्य अथवा विक्षिप्त और कुटिल मनवालों को सलाह करने के स्थानमें न बुलाना चाहिये । राजाओंके मन्त्रभेदमें जो दोष होते हैं, वे किसी प्रकारसे भी दूर नहीं होसकते, यह मेरा मत है । तुम मन्त्रियों के मण्डल में मन्त्रभेद के दोषोंको वर्णन करो २३—२५ हे शत्रुविजेता,राजा युधिष्ठिर ! मन्त्रभेद न होनेके गुणोंको बारम्बार वर्णन करो पुरवासियों और देशवासियोंके शौचाशौच जैसे विदितहों उसीप्रकार व्यवहार करना चाहिये । हे कौरव ! तुम्हारा व्यवहार सदैव विश्वस्त सेवकों की आधीनतामें हो । हे युधिष्ठिर ! तेरे कार्यकर्ता न्याय के अनुसार अपराध के परिमाण को जानकर अपराधियों पर दण्ड नियत करें २६—२७ आदानी (रिशवतखोर) दूसरे की स्त्री से कुकर्म करनेवाले २८ कठिन दण्डको उत्तम जाननेवाले, अधिकारी न्यायविरोधी (क़ानूनसे विपरीत बातें करनेवाले) अपकीर्ति देनेवाले आदि लोभी, चोर, बे सोचे समझे काम करनेवाले २९ सभा और विहार स्थानों के बिगाड़नेवाले, वर्णों के बिगाड़नेवाले ये सब मनुष्य देश, काल के अनुसार हिरण्यदण्ड (जुर्माना) और मारने का दण्ड देने योग्यहैं ३० प्रातःकालही खज़ाने के रक्षकोंको देखो, फिर भोजन करो और पोशाक आदि से शरीर अलंकृत करो ३१ इसके पीछे सबको प्रसन्न करते हुए तुम सेना के लोगों को सदैव देखा करो । तेरे दूत और जासूसों के देखने का समय प्रदोष काल हो ३२ सदैव रात्रिके पिछले पहरमें कार्यार्थ का निर्णय और मध्यरात्रि में विहार हो ३३ हे भरतर्षभ ! करने के योग्य कर्मों के सब समय युक्ति और उपायों से प्राप्त हैं । इसीप्रकार राज्यकी पोशाकों से अलंकृत होकर समय पर अपने राज्यसिंहासन पर बैठो ३४ हे तात ! राज्यके कार्यों का क्रम और अव-

काश सदैव चक्रके समान दृष्टि पड़ता है। महाराज ! तुम सदैव न्याय के अनुसार नाना प्रकार के खज़ाने इकट्ठे करनेका उपाय करो ३५ और विपरीत कर्म त्यागो। जो मनुष्य राजाओंके छिद्र चाहनेवाले और शत्रु हैं दूतोंके द्वारा उनका भेद लेकर ३६ विश्वस्त मनुष्यों के द्वारा दूरसेही उन्हें मरवादो। हे कौरव! तुम कर्म देखकर सेवकों को नियत करो ३७ न्याय से कर्म करनेवाले अधिकारियों से राज्य के कार्य पूरे कराओ। तुम्हारी सेनाका अधिपति दृढ़व्रत रखनेवाला ३८ शूर, दुःख सहनेवाला, शुभचिन्तक और भक्त मनुष्य हो। हे पाण्डव! सब देशवासी कारीगर आदिक तुम्हारे कर्मों को शीघ्रतापूर्वक अपने धनके अनुसार करें। अपने नौकर-चाकर और शत्रुओं में अपना और शत्रु का छिद्र ३९-४० तुमको सदैव देखना योग्य है। अपने कर्मों के उद्योगी देशवासी शुभचिन्तक मनुष्यों की ४१ उचित उपायोंसे तुम चेंटीके समान रक्षा और कृपा किया करो। हे राजन् ! ज्ञानी राजाको गुणग्राही मनुष्यों का गुण प्रकट करना उचित है। पर्वतके समान अपने कर्मपर उन लोगोंका नियत करना तुमको उचित है ४२-४३ ॥

इति श्रीमहाभारतेआश्रमवासकेपर्वणि पञ्चमोऽध्यायः ५ ॥

छठा अध्याय।

धृतराष्ट्र बोले कि हे भरतर्षभ! अपने और शत्रुओं के सब मण्डल (मित्र, मध्यस्थ और उदासीनों के मण्डलों) को जानो १ हे शत्रुओंको जीतनेवाले! अपने शत्रुकी ओर के शत्रु मित्रादिक चार राजाओं को भी जानो! मित्र और उसका मित्र भी तुमको जानना योग्य है। उसी प्रकार मन्त्री, देश, नानाप्रकारके गढ़ और सेनाएं भी जानने योग्य हैं क्योंकि उनका विरोधादिक इच्छाके समान होता है २-३ हे कुन्ती के पुत्र! राजाओं के विषयरूपी विरोधादिक बारह हैं और मन्त्रिप्रधान गुण बहत्तर हैं ४ नीति के पूर्ण ज्ञाताओं ने इसे मण्डल कहा है। उनमें राज्य की रक्षा के छः उपाय हैं। उसे समझना भी योग्य है ५ हे महाबाहो! वृद्धि, क्षय और स्थान उन बहत्तर गुणोंके द्वारा जाननेके योग्यहैं। राज्यकी रक्षासे उत्पन्न उपायों से छः गुण जानने योग्य हैं ६ जब अपना पक्ष प्रबल और शत्रुका निर्बल हो तब उससे विग्रह कर राजा विजय पानेके योग्य है ७ जब शत्रु प्रबल और अपना

पक्ष निर्बल हो । तब बुद्धिमान् निर्बल राजा शत्रुओंसे सन्धि करे । इसीप्रकार द्रव्यों का समूह सञ्चय करना योग्य है । हे भरतवंशिन् ! जब चढ़ाई के लिये समर्थ हो तब थोड़ेही समय में ८-९ सब कर्म पूरे करना योग्य है । राजा अपने निवाससेही उसे विचारे । शत्रुको वह पृथ्वी देनी चाहिये जिसमें कि बहुतसी पैदावारी हो । आप सन्धिमें सावधान राजा शत्रुसे सुवर्णादि बहुतसी धातुएं और युद्ध में नष्ट हुए अपने मित्र, हाथी और घोड़ों का बदला ले १०-११ हे भरतर्षभ ! सन्धि के विश्वासके लिये शत्रुके राजकुमार को अपने पास ठहराले । इसके विपरीत करना वृद्धिदायक नहीं-वह किसी आपत्ति में फँसाता है १२ उपाय समेत सलाह जाननेवाला राजा उस प्राप्त हुई आपत्तिको दूर करनेका उपायभी करे । हे राजेन्द्र ! प्रजा में जो अन्धे, बधिर, मूकादिक हों, उनका राजा पोषण करे १३ बड़ा बलवान् राजा क्रम क्रमसे अथवा एक ही समय में सब निश्चय करे और अपने राज्य के रक्षक राजा उपायपूर्वक शत्रुओं को पीड़ा दे, पकड़ले और खज़ानेकी बरबादी करे । वृद्धि चाहनेवाले राजाके आश्रित होनेवाले शूरवीर मारने के योग्य नहीं हैं १४-१५ हे कुन्तीके पुत्र ! जो राजा सम्पूर्ण पृथ्वीभर को विजय किया चाहता है, वह अपने शरणागतों को न मारे । तुम मन्त्रियों समेत शत्रुओं के समूहों में परस्पर विरोध फैलाने के उपाय करो १६ इसी प्रकार उत्तम कर्मवालों के पोषण करने और अपराधियों को दण्ड देने का प्रबन्ध करो । बलवान् राजाकी ओरसे निर्बल शत्रुभी उपेक्षाके योग्य नहींहै १७ हे राजेन्द्र ! तुम बेत वृक्षकी रीति पर निवास करो । अपने से अधिक बलवान् राजा के सम्मुख आनेपर १८ क्रमशः सामादिक उपायों से उसे लौटाना चाहिये । सन्धि करनेमें असमर्थ राजा मन्त्री, खज़ाना, पुरवासी, सेना और अपने हितैषियों को साथ ले युद्ध के लिये प्रस्थान करे । उन सबके न होनेपर केवल शरीरही से युद्धके लिये नियत हो । इस रीति से शरीर त्यागने पर देहकी मुक्ति होती है १९-२० ॥

इति श्रीमहाभारतेआश्रमवासकेपर्वणि षष्ठोऽध्यायः ६ ॥

सातवां अध्याय ।

धृतराष्ट्र बोले हे राजाओं में बड़े, साधु, युधिष्ठिर ! इस स्थान पर सन्धि और विग्रह को भी विचारो, जिसके उत्पत्तिस्थान दो हैं; शत्रुका बलवान्

अथवा निर्बल होना जो नाना प्रकार के उपाय और रीतियों से संयुक्त हैं १ हे कौरव ! तुम अपने बलाबलका विचारकर शत्रुओं से व्यवहार करो। जब शत्रु प्रसन्न और बल पराक्रमयुक्त सेनावाला हो, तब बुद्धिमान् राजा विजय के उपाय खोजे २ हे राजेन्द्र ! शत्रुके समीप होते समय विपरीत कर्म किया जाताहै। युद्धके समय शत्रुसे पृथक् होजाय फिर शत्रुओंको दुःख और विरोध में अपनी ओर मिलाने की चेष्टा करे। भय दिखलावे और युद्ध में उसकी सेनाका नाश करावे ३-४ शास्त्र में कुशल चढ़ाई करनेवाला राजा अपने और शत्रुके तीन प्रकार के सामर्थ्य का विचार करे ५ हे भरतवंशिन् ! उत्साह, प्रभुशक्ति और मन्त्रशक्ति से संयुक्त होकर राजा चढ़ाई करे। इनके विपरीत चढ़ाई न करे ६ वह राजा धनबल, मित्रबल, अटवीबल, भृतबल और श्रेणी-बलको साथमें रक्खे ७ उन सब में धनबल और मित्रबल विशेष है। श्रेणीबल और भृतबल मेरे मतमें ये दोनों समानहैं ८ दूतबल भी परस्पर समानहैं, नाना प्रकारका बल समयानुसार राजाको जानना योग्य है ९ बहुत रूप रखनेवाली आपत्ति जानने योग्यहै। हे कौरव्य ! राजाओंको जो आपत्तियां होतीहैं, उनको सुनो। आपत्तियां कई प्रकार की हैं। राजा उनको सदैव सामादिक उपायों से विचारे १०-११ हे परन्तप ! वह राजा सेना, सत्पुरुष, देश, काल और अपने गुणोंसे युक्त होकर यात्रा करे १२ राज्यकी वृद्धि में प्रवृत्त, बलवान्, प्रसन्न और पराक्रमी सेनावाला राजा शिशिर आदिक ऋतुओंमें भी चढ़ाई करे १३ शत्रुओं का नाश करने के लिये राजा ऐसी नदी बहादे, जिसमें तृण पाषाण हैं, हाथी और रथ प्रवाह हैं, ध्वजारूप वृक्षोंसे युक्त किनारे हैं, पदाती और हाथियोंसे बहुत कीचहै १४ फिर समयके अनुसार शकट, पद्म और वज्र नाम व्यूहों से सेनाको अलंकृत करे। जिस शास्त्रको शुक्रजी जानते हैं, उसमें यह सब कहा है १५ दूतोंसे शत्रुकी सेनाका भेद पाकर अपनी सेनाको देख, अपनी पृथ्वी और शत्रु की पृथ्वीपर युद्धकरे १६ राजा अपनी सेनाको प्रसन्न करे और बलवान् मनुष्यों को अधिकारी बनावे। वहां अपने मौक़ाको जानकर साम आदिक उपायों से कार्यका प्रारम्भ करे १७ महाराज ! यहां सब दशाओंमें अपने शरीरकी रक्षा करे और इस लोक तथा परलोक में अपना परम कल्याण करना उचित है १८ इस कर्मको अच्छीरीति से कर धर्म से प्रजापालन करता हुआ राजा शरीर त्यागने पर स्वर्ग पाताहै १९ हे कौरवनन्दन ! तुमको दोनों लोकोंकी प्राप्तिके लिये

सदैव प्रजाकी वृद्धि करनेवाला कर्म करना उचित है २० हे भरतर्षभ! भीष्म, श्रीकृष्ण और विदुरने सबप्रकार से तुमको समझाया है। मुझे भी तेरी प्रीतिसे अवश्य कहना योग्य है २१ इसे न्याय के अनुसार करने से प्रजाके प्यारे होकर तुम स्वर्गसुख पाओगे २२ हज़ार अश्वमेध से पूजन कर धर्म से प्रजा का पालन न करने एवं धर्म से प्रजापालन कर अश्वमेध न करने का फल समान ही है २३॥

इति श्रीमहाभारतेआश्रमवासकेपर्वणि सप्तमोऽध्यायः ७॥

आठवां अध्याय।

युधिष्ठिर बोले कि हे राजन्! जैसा आपने मुझसे कहा है, मैं उसी प्रकार से करूंगा। हे राजाओं में श्रेष्ठ! मैं फिरभी आपकी शिक्षाएं सुना चाहता हूं। भीष्मजी के स्वर्गवासी होने और श्रीकृष्ण, विदुर एवं सञ्जय के यहां से चले जाने पर मुझे कौन शिक्षा देगा १-२ मेरी वृद्धि के लिये आप जो जो शिक्षाएं कहते हैं,मैं उनको करूंगा। आप निवृत्तिमार्ग में नियत हैं ३ वैशम्पायन बोले कि हे भरतर्षभ! बुद्धिमान् धर्मराज युधिष्ठिर के इस प्रकार कहने पर राजर्षि यह कहकर गान्धारी के भवन में चलेगये ४ कि बेटा! तू कुछ काल शान्त हो, मेरी थकावट बढ़ गई है ५ समय की जाननेवाली धर्मज्ञ गान्धारी देवी ने उस आसन पर बैठे हुए प्रजापतिके समान अपने पति से कहा ६ कि आपको महर्षि व्यास ने आकर आज्ञा दी है। अब युधिष्ठिरकी सलाह से वनको कब जाओगे? धृतराष्ट्र ने कहा कि मुझको स्वयं महात्मा पिता ने आकर आज्ञा दी है। मैं थोड़ेही समय में युधिष्ठिर की सलाह से वनको जाऊंगा ७-८ तब तक उन दुर्मति, द्यूत खेलनेवाले सब पुत्रों का मैं श्राद्धादिक करना चाहता हूं। अपने महल में सब नौकर-चाकर और प्रजा को बुलाकर ९ धृतराष्ट्रने धर्मराज के पास दूत भेजा। उसने आज्ञानुसार सब सामान राजा के समीप लादिया १० तब प्रसन्नचित्त कुरुजाङ्गलदेशी ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र इकट्ठे हुए ११ राजाने अन्तःपुर से बाहर निकलकर उन सब मनुष्यों और राज्यके नौकर-चाकरों को देखा १२ हे राजन्! उन सबके साथ अपने इष्टमित्र, नातेदारों और अनेक देशों से आनेवाले ब्राह्मणों को देखकर बुद्धिमान् राजा धृतराष्ट्र ने कहा १३-१४ कि आप और कौरवलोग परस्पर शुभचिन्तक

और परस्परकी वृद्धि में प्रवृत्तहो बहुत कालतक साथ रहे १५ अब मैं इस समय जो कुछ कहूं उसी प्रकार से आप लोगों को करना उचित है । मेरा वचन विचार करने के योग्य नहीं १६ व्यासऋषि और राजा युधिष्ठिरकी सलाह से मेरा विचार गान्धारी समेत वन जाने का है १७ आपभी मुझको विना विचारे वन जाने की आज्ञा दें। हमारी आपकी जैसी प्राचीन प्रीतिहै १८ वैसी प्रीति अन्यदेशों में किसी दूसरे राजाकी नहीं है, यह मेरा सिद्धान्त है। मैं इस वृद्धा-वस्था से थक गया हूं और पुत्रोंसे भी रहित हूं १९ गान्धारी समेत व्रत करने से मेरा शरीर दुर्बल है । हे निष्पाप लोगो ! मैंने युधिष्ठिर का राज्य होनेपर बड़ा सुख पाया है २० हे साधुलोगो ! मैं मानता हूं कि यह सुख दुर्योधन के भी ऐश्वर्य से अधिक है परन्तु मुझ अन्धे, वृद्ध और सन्तानहीन की वन जाने के सिवाय दूसरी गति नहीं है २१ हे भाग्यवानो ! इससे आप भी मुझे आज्ञा देने के योग्य हो। हे भरतर्षभ ! उन सब कुरुजाङ्गलदेशियों ने वह वचन सुन कर नेत्रों में आंसू भरे और फूट फूट कर रोना प्रारम्भ किया। तब महातेजस्वी धृतराष्ट्र ने उन कुछ कहने की इच्छा रखनेवाले शोकयुक्त सब मनुष्यों को समझाया २२-२३ ॥

इति श्रीमहाभारतेआश्रमवासकेपर्वण्यष्टमोऽध्यायः ८ ॥

नवां अध्याय ।

धृतराष्ट्र बोले कि राजा शन्तनुने इस पृथ्वी का यथाविधि पालन, पोषण और रक्षण किया; उसी प्रकार भीष्मजीसे रक्षित राजा विचित्रवीर्य ने भी तुम्हारा पोषण किया १ यह बात भी निस्सन्देह सबको प्रकट है कि मेरा भाई पाण्डु तुम सब लोगोंको कैसा प्यारा था २ उसने भी विधिके अनुसार रक्षण और पोषण किया सो तो जानते ही हो। हे निष्पापो ! मैंने भी आपलोगों की अच्छी सेवा की हो ३ या न की हो; हे भाग्यवानो ! तुम सावधानलोगों को वह क्षमा करना योग्य है। जब दुर्योधन ने इस निष्कण्टक राज्यको भोगा ४ तब उस दुर्बुद्धि, अभागेने तुम्हारा कोई अपराध नहीं किया। उस दुर्मति के अपराध, राजाओं के अपमान ५ और अपने किये हुए अन्यायसे यह बड़ा भारी युद्ध हुआ। यही मैंने शुभ या अशुभ कर्म किया ६ तुम्हें उसको हृदय से भुला देना चाहिये। इसीलिये मैंने अञ्जली बांधी है। मैं वृद्ध हूं, हतसन्तान हूं, दुःखी हूं ७

और राजाओं का पुत्र हूं। इससे मुझको वन जाने की आज्ञा दो। महादुःखी, नष्टसन्तान, वृद्धा, तपस्विनी ८ पुत्रोंके शोकसे पीड़ित गान्धारी भी मेरे साथ तुमसे प्रार्थना करती है कि हम दोनोंको मारे गये पुत्र और वृद्ध जान कर ६ आज्ञा दो। तुम्हारा भला हो, हम तुम्हारे शरण हैं। यह कुन्ती का पुत्र, कौरव राजा युधिष्ठिर १० आनन्द और आपत्तिके समयों में तुम सबसे देखने योग्य है। यह कभी आपत्ति नहीं पावेगा ११ लोकपालोंके समान बड़े तेजस्वी, सब धर्म अर्थ को देखनेवाले चारों भाई इसके मन्त्री हैं। यह महातेजस्वी युधिष्ठिर आपका उसी प्रकार पालन करेगा जैसे कि सब जीवों समेत जगत् के स्वामी भगवान् ब्रह्माजी पोषण करते हैं १२-१३ मुझको अवश्य कहना चाहिये, इसीसे तुमसे कहता हूं कि मैंने यह धरोहररूप युधिष्ठिर आप सबको सौंपा है १४ मैंने आपलोगों को भी इस वीर के धरोहररूप किया है। मेरे उन पुत्रोंसे जो कुछ आपका अपराध बना है, अथवा मेरे अन्यान्य नातेदारों ने जो तुम्हारा अपराध किया है, उसको आपलोग क्षमा करें। आपलोगों ने पहिले कभी, किसी दशा में भी मुझपर क्रोध नहीं किया है। अत्यन्त गुरुभक्त आपलोगों से मेरी यह प्रार्थना है। मैं गान्धारी समेत उन बुद्धि से व्याकुल, लोभी, स्वेच्छाचारी पुत्रों के कारण तुम सब से प्रार्थना करता हूं १५-१७ इस वचनको सुनकर नेत्रों में आंसू भरे उन पुरवासियों और देशवासियों ने कुछ न कहा किन्तु एक दूसरेको देखने लगे १८ ॥

इति श्रीमहाभारतेआश्रमवासकेपर्वणि नवमोऽध्यायः ९ ॥

दशवां अध्याय।

वैशम्पायन बोले, कि हे कौरव! वृद्ध राजा की बातों से वे पुरवासी और देशवासी अचेतसे होगये १ मौन और अश्रुपात करनेवाले उन लोगों से राजा धृतराष्ट्रने फिर कहा कि हे साधुलोगो! धर्मपत्नी समेत नानाप्रकारकी करुणा और विलाप करनेवाले, नष्टसन्तान, मुझ वृद्ध को वन जाने की आज्ञा दो २-३ हे धर्मज्ञलोगो! मुझे पिता व्यासजी और धर्मज्ञ राजा युधिष्ठिर ने वन में निवास करने के निमित्त आज्ञा देदी है ४ मैं बारम्बार शिर झुकाता हूं; गान्धारी समेत मुझे आज्ञा दो ५ वैशम्पायन बोले, कि कुरुजांगलदेशी प्रजासमूह राजा धृतराष्ट्र के करुणापूर्ण वचन सुनतेही मुँह ढककर रोने लगा ६-७ और धृतराष्ट्र के

वियोगजनित दुःखके कारण अचेतसा होगया। फिर उस दुःख को सहकर धीरे धीरे उन्होंने अपनी रायदी ८-९ हे राजन्! सबने परस्पर सलाह कर एक ब्राह्मण को मुखिया बना, उसीसे राजाको उत्तर दिलाये १० सदाचरणी, वेदपाठी सब के अंगीकृत, कर्म में सावधान, ऋचाएं जाननेवाले शंब नामक ब्राह्मण ने ११ सभाको पूज कर और प्रसन्न कर राजा से कहा १२ हे वीर, राजा धृतराष्ट्र! इन सब मनुष्यों का मैं प्रतिनिधि हूं। मैं जो निवेदन करूं, उसे सुनिये १३ हे राजेन्द्र! आपने जो कहा, वह सब निस्संदेह वैसाही है; कोई बात मिथ्या नहीं है। हमारी मित्रता परस्पर है १४ इस वंशके राजाओं में कभी कोई ऐसा राजा नहीं हुआ जो प्रजाको दुःखदायक होकर अप्रिय हुआ हो १५ आप माता, पिता और भाई के समान हमारा पालन करते हैं। राजा दुर्योधनने भी कोई अयोग्य कर्म नहीं किया १६ महाराज! सत्यवती के पुत्र धर्मात्मा व्यासमुनि जैसा कहते हैं, आप उसी प्रकार करें। हमारी बुद्धिसे वही बड़ा कर्म है १७ आपके सैकड़ों गुणोंसे जुदे होकर हमलोग बहुत समय तक शोकपूर्ण रहेंगे १८ जैसे हम राजा शन्तनु, चित्रांगद और भीष्मके सामर्थ्यसे रक्षित आपके पिता विचित्रवीर्य से रक्षित रहे १९ एवं आपके स्मरण के साथ राजा पाण्डु से पोषण किये गये, वैसेही राजा दुर्योधन से भी रक्षित होकर प्रतिपालित हुए २० हे राजन्! आपके पुत्र दुर्योधन ने थोड़ासा भी अप्रिय नहीं किया। हमलोगोंने उस पर वैसाही विश्वास किया जैसा कि पिता में करते हैं २१ हम जिस प्रकार अच्छी रीति से रहते थे, सो आपको विदितही है। धैर्यवान्, बुद्धिमान् राजा युधिष्ठिर से पोषित हम लोग हज़ारों वर्षतक सुख पावेंगे। बड़ी दक्षिणा देनेवाले धर्मात्मा युधिष्ठिर अपने पूर्वज राजाओं की रीतिपर चलते हैं। जैसे आपके वृद्ध, पवित्रकर्मी, प्राचीन राजर्षि कुरु, संवरण और भरतादिक बुद्धिमान् थे; उसी प्रकार २२-२४ इनमें भी कोई अयोग्य बात नहीं है। हे कौरवनन्दन! इस वंशका नाश जो दुर्योधनके विषयमें कहाजाता है २५-२६ उसके विषय में भी आपको मैं समझाऊंगा। वह दुर्योधन का कर्म नहीं है और न वह आप की ओरसे किया गया है। न उसे कर्ण और शकुनिनेही किया है। कौरवों के नाशको हम होनहार और ईश्वरकी इच्छा जानते हैं। उसको रोकना असंभव था। क्योंकि उपायों से भावी नहीं रुकती २७-२८ महाराज! अठारह अक्षौहिणी सेनाएं इकट्ठी हुईं और अठारह दिनमें ही कौरवों के शूरवीर भीष्म,

द्रोणाचार्य, कृपाचार्यादिक, महात्मा कर्ण, वीर सात्यकी, धृष्टद्युम्न २९–३० पाण्डव भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेव के हाथसे मारीगईं। हे राजन्! होनहार की प्रबलताके सिवाय किसी दूसरेसे यह विनाश नहीं हुआ ३१ क्षत्रियको मुख्य कर युद्ध के समय अवश्य ही नाश करना योग्य और क्षत्रिय बांधवोंको युद्धमें मरना ही योग्य है ३२ विद्या, पराक्रम और भुजबल संयुक्त पुरुषोंके हाथ से इस सम्पूर्ण पृथ्वी के लोग, घोड़े और हाथियों समेत रथ नाश कियेगये ३३ महात्मा राजाओं के मरने में न आपका पुत्र कारण है, न आप, न सेना के लोग, न शकुनि और न कर्णही ३४ श्रेष्ठ कौरव और हजारों राजा लोग होनहारसेही मारेगये। इसमें कौन क्या कहने योग्य है ३५ आप इस सम्पूर्ण जगत् के प्रभु और गुरुहो; इसी हेतु हम आपके पुत्रको धर्मात्मा जानते हैं ३६ वह राजा अपने साथियों समेत वीर लोकोंको पावे और ऋषियों से आज्ञप्त होकर सुखसे स्वर्ग में आनन्द करे ३७ आप धर्म में स्थित होकर सब धर्म और वेदों के पुण्यको प्राप्त करेंगे। आप अच्छी रीति से श्रेष्ठ व्रत करनेवाले हैं। आपकी ओरसे हमको पाण्डवोंपर दृष्टि रखना वृथा है क्योंकि जब वे स्वर्गकी भी रक्षा करने में समर्थ हैं तब इस पृथ्वी की रक्षा उनके लिये कौन बड़ी बात है ३८–३९ हे कौरवकुल में श्रेष्ठ, बुद्धिमान् धृतराष्ट्र! सब प्रजा सुख दुःखों में पाण्डवोंकी साथी होगी क्योंकि ये सुंदरस्वभाव, रूप और भूषणों से अलंकृत हैं ४० राजा युधिष्ठिर ब्राह्मणों के देने के योग्य देवपूजा आदिक और भरत आदिक पूर्वज राजाओं के नियत किये हुए दान बहिन बेटियोंको देते हैं ४१ ये साहसी, दूरदर्शी राजा युधिष्ठिर मृदुलस्वभाव, इन्द्रियों के जीतनेवाले सदैव कुबेर के समान और बड़े कुलीन बुद्धिमान् मन्त्री रखनेवाले हैं ४२ फिर ये भरतर्षभ, सबके मित्र, दयालु, पवित्र और बुद्धिमान् हैं, सीधी दृष्टिसे देखते हैं और पुत्र के समान हमें पालते हैं ४३ हे राजर्षे! उसी प्रकार भीम और अर्जुन आदिक भी धर्मपुत्र के सत्संग से हमारा अप्रिय नहीं करेंगे ४४ हे कौरव्य! पुरवासियों की वृद्धि में प्रवृत्त, पराक्रमी, महात्मा पाण्डव मृदुस्वभाववालों में मृदु और तीक्ष्णस्वभाववालों में विषधर सर्प के समान हैं ४५ और कुन्ती, द्रौपदी, उलूपी और सुभद्रा किसी दशामें भी अप्रिय नहीं करेंगी। आपने जो यह प्रीतिकी और युधिष्ठिर ने जो उसकी वृद्धि की; उसको पुरवासी और देशवासी कभी न भूलेंगे ४६–४७ महारथी कुन्तीके पुत्र धर्मात्मा होकर अधर्मियों

का भी पालन करेंगे ४८ हे राजन्! तुम युधिष्ठिर की ओरसे चित्तका खेद दूर कर धर्मसंबंधी कर्म करो। हे पुरुषोत्तम! तुमको नमस्कार है ४९ वैशम्पायन बोले, कि उन सब मनुष्यों ने धर्मरूप गुणोंसे राजा की बहुत प्रशंसा कर उन की बात को स्वीकार किया ५० तब धृतराष्ट्रने उनसे अच्छी रीतिसे पूजित हो, कल्याणरूप नेत्रों से देखते हुए हाथ जोड़े बारम्बार प्रशंसा कर धीरे धीरे उन सब सेवकों और प्रजा आदिकों की पूजाकर बिदाकिया ५१-५२ फिर गान्धारी समेत निजभवन में प्रवेश कर रात्रि बीतनेपर उन्हों ने जो किया,उसे आगे कहते हैं ५३॥

इति श्रीमहाभारतेआश्रमवासकेपर्वणि दशमोऽध्यायः १०॥

ग्यारहवां अध्याय।

वैशम्पायन बोले, कि फिर रात्रि बीतनेपर अम्बिका के पुत्र धृतराष्ट्र ने विदुरजी को युधिष्ठिर के यहां भेजा १ सब बुद्धिमानों में श्रेष्ठ महातेजस्वी विदुरने धृतराष्ट्रकी आज्ञासे, धर्मसे अच्युत राजा युधिष्ठिर से कहा २ कि हे राजन्! वनवास के लिये दीक्षित महाराज धृतराष्ट्र इसी कार्त्तिकी पूर्णमासी को वन जायेंगे ३ हे कौरवकुलभूषण! उनका कुछ प्रयोजन है ४ महात्मा भीष्म, द्रोणाचार्य, सोमदत्त, बुद्धिमान् बाह्लीक सब पुत्र और जो अन्यान्य नाते-रिश्तेदार मारे गये हैं, उनका वे श्राद्ध किया चाहते हैं और जो तुम अंगीकार करो तो राजा जयद्रथ का भी श्राद्ध करना चाहते हैं। विदुरजी की बात सुनकर प्रसन्न हो युधिष्ठिरने ५-६ और पाण्डव अर्जुनने उस वचनकी प्रशंसा की पर कठिन क्रोधयुक्त, और दुर्योधन के कर्मका स्मरण कर महातेजस्वी भीमसेन ने विदुरजी की बात नहीं मानी। अर्जुनने भीमसेनके उस विचार को ताड़कर ७-८ और कुछ झुककर उस नरोत्तम से कहा, कि हे भीमसेन! वनवास करने में दीक्षित हमारे वृद्ध ताऊ राजा धृतराष्ट्र ९ सब नाते-रिश्तेदारों का श्राद्ध किया चाहते हैं। और आपके पराक्रम से उपार्जित धनको भीष्मादि के श्राद्ध में देना चाहते हैं १० आपको उन्हें आज्ञा देनी योग्य है। हे वीर! अब राजा धृतराष्ट्र प्रारब्ध से प्रार्थना करते हैं ११ जिनकी कि पहिले हम प्रार्थना किया करते थे। समयकी विपरीतता देखो कि अन्यलोगों के हाथ से, जिनके पुत्रादिक मारे गये, वे राजा धृतराष्ट्र सम्पूर्ण पृथ्वी के स्वामी

होकर १२ वनको जाना चाहते हैं। हे पुरुषोत्तम ! अब धन देने के सिवाय दूसरा विचार न करो १३ हे महाबाहो ! इसके विपरीत जो काम होगा, वह महाअधर्मरूप और अपकीर्तिदाता होगा । अपने बड़े भाई राजा युधिष्ठिर से शिक्षा लो १४ हे भरतर्षभ ! तुम देनेके योग्य हो, लेनेके योग्य नहीं। यह कहने वाले अर्जुनकी धर्मराज ने भी प्रशंसा की १५ तब क्रोधयुक्त भीमसेन ने कहा, कि हे राजन् ! हम भीष्मजी का श्राद्ध करेंगे १६ राजा सोमदत्त, भूरिश्रवा, राजर्षि बाह्लीक, महात्मा द्रोणाचार्य १७ एवं अन्यान्य सब नातेदारों का श्राद्ध करेंगे। कुन्ती कर्णका श्राद्ध करेगी। हे पुरुषोत्तम ! यह मेरा मत है कि राजा धृतराष्ट्र श्राद्ध न करें १८ हमारे शत्रु प्रसन्न न हों जिन कुलकलंकियों से इस पृथ्वी के लोगों का नाश हुआ, उन दुर्योधनादिक सब भाइयों को कठिन दुःख प्राप्त हो। तुम बारह वर्षकी शत्रुता १६-२० और द्रौपदी का शोक बढ़ाने वाले महाकठिन गुप्तनिवास के दुःख भूलकर कैसे मौन हो ? तब राजा धृतराष्ट्र की प्रीति कहां थी जब कि उसने हमारा तिरस्कार किया था २१ जब काले मृगचर्म से शरीर ढके हुए भूषण-वस्त्रोंसे रहित, द्रौपदी सहित तुम राजा के पास गये तब द्रोणाचार्य, भीष्म और सोमदत्त कहां थे ? जहां तुमने तेरह वर्षतक वनमें रहकर जङ्गल के फल मूलोंसे ही अपना निर्वाह किया २२-२३ तब ताऊ तुमको पितापन की प्रीतिसे नहीं देखता था ? हे राजन् ! क्या आपने उन सब बातोंको भुलादिया जो इस कुलकलंकी २४ दुर्बुद्धि ने विदुरजी से पूछा था कि द्यूतमें क्या जीता ? भीमसेन के ये वचन सुनकर घुड़कते हुए कुन्ती के पुत्र राजा युधिष्ठिर ने भीमसेन से कहा कि बस, अब मौन होना चाहिये २५ ॥

इति श्रीमहाभारतेआश्रमवासकेपर्वण्येकादशोऽध्यायः ११ ॥

बारहवां अध्याय ।

अर्जुन बोले, कि हे भीमसेन ! तुम मेरे बड़े भाई और गुरु हो। मैं दूसरी बात कहने का साहस नहीं करसकता। राजर्षि धृतराष्ट्र सब दशाओं में हमको पूजनीय हैं १ मर्यादा पर चलनेवाले, साधु, श्रेष्ठलोग पराये अपराधों को स्मरण नहीं करते किन्तु उनके उपकारों की याद करते हैं २ कुन्तीके पुत्र धर्मात्मा युधिष्ठिर ने महात्मा अर्जुन की बात सुनकर विदुरजी से कहा कि आप मेरी ओर से राजा धृतराष्ट्र से कहिये जितने धनसे पुत्रों का श्राद्ध करना

चाहो, मैं उतनाही देता हूं ३-४ बड़भागी भीष्मादिक सब नाते-रिश्तेदारों के श्राद्ध के लिये मेरे खजाने से धन दो। भीमसेन चित्तसे दुःखी न हों ५ वैशम्पायन बोले, कि यह कहकर धर्मराजने अर्जुनकी प्रशंसा की । तब भीमसेन ने तिरछी निगाहसे अर्जुनकी ओर देखा ६ बुद्धिमान् युधिष्ठिरने विदुरजी से कहा, कि राजा धृतराष्ट्र भीमसेन के ऊपर क्रोध करने योग्य नहीं हैं ७ यह बुद्धिमान् भीमसेन वर्षा, बर्फ और धूप आदिक अनेक प्रकार के दुःखों से वनमें दुःखित हुआ था,सो तो आप जानतेही हैं ८ हे भरतर्षभ ! आप मेरी ओर से राजा धृतराष्ट्रसे कहें, कि उनकी जो इच्छा हो, सो वे मेरे खजाने से लें । आपको समझना योग्य है कि यह अत्यन्त दुःखी भीमसेन जो ईर्षा से क्रोध करता है, उसको दिल में कभी न शोचना ९-१० राजा को इस प्रकार समझाबा योग्य है, कि जो कुछ मेरा धन है और अर्जुनके घर में है, उसके स्वामी महाराज हैं । अब राजा वेदपाठी ब्राह्मणों को दान करें, इच्छानुसार खर्च करें और अपने पुत्र तथा बांधवों से अऋणता पावें ११-१२ हे राजन् ! यह मेरा शरीर और सब धन भी आप के आधीन है, इसे निस्सन्देह अपना ही जानें १३ ॥

इति श्रीमहाभारतेआश्रमवासकेपर्वणि द्वादशोऽध्यायः १२ ॥

तेरहवां अध्याय ।

वैशम्पायन बोले, कि राजा की इस प्रकार बातें सुन, बुद्धिमानों में श्रेष्ठ विदुरजीने धृतराष्ट्रसे कहा १ कि हे राजन् ! मैंने आपके वचन राजा युधिष्ठिरको सुनाये । उस बड़े तेजस्वीने आपके वचनोंकी प्रशंसाकी २ महातपस्वी अर्जुन घरोंको और अपने घरके धन तथा शुद्ध प्राणोंको भी आपकी भेट करता है ३ हे राजर्षे ! आपका पुत्र धर्मराज भी राज्य, प्राण, धन और अन्यान्य वस्तुएं आपकी भेट करताहै ४ पर बहुत दुःखों को स्मरण कर श्वास लेतेहुए महाबाहु भीमसेन ने दुःख से अंगीकार किया ५ हे राजन् ! उस महाबाहु भीमसेन को धर्मके अभ्यासी राजा युधिष्ठिर और अर्जुन ने शिक्षा दी और आपकी आज्ञा पालनेमें भी उसे नियत किया। धर्मराजने आपसे कहा है, कि भीमसेन ने उस शत्रुताका स्मरण कर जो न्याय के विपरीत बातें की थीं, उनपर आप को क्रोध न करना चाहिये ६-७ हे राजन् ! क्षत्रियोंका यह धर्म ऐसा ही है ।

भीमसेन युद्ध और क्षत्रियधर्म में प्रवृत्त है। अर्जुनने बारम्बार भीमसेनके विषय में कहाहै कि हे राजन्! मैं प्रार्थना करता हूं; आप प्रसन्न हूजिये। हमारे धनके आप स्वामी हैं ८-९ हे भरतवंशिन्, राजा धृतराष्ट्र! आप उस धनको जितना चाहें, उतना दान करें। आप इस राज्य और मेरे प्राणोंके भी स्वामी हैं १० आप यहांसे रत्न, गौ, दासी, दास, भेड़, बकरी आदि, ब्राह्मणोंके देनेके योग्य देवपूजा आदि और पुत्रोंके श्राद्धादि में ब्राह्मणों को दान करें। हे राजन्! आप जहां तहां दीन, अन्धे और दुःखियों के लिये ११-१२ बहुतसी खाने पीने की वस्तुओं से भरे पूरे आतुरालय विदुरजी के द्वारा बनवावें। गौओंको जलप्रपा (प्याऊ) और नानाप्रकार के अन्य पुण्यार्थ कार्य भी करें १३ राजा युधिष्ठिर और पाण्डव अर्जुनने मुझसे बारम्बार कहा है कि यहां जो कुछ करना योग्य है, उसको आप बहुत शीघ्रता से करें १४ हे जनमेजय! विदुरजी के इस प्रकार कहनेपर धृतराष्ट्रने उन पाण्डवोंको आशीर्वाद देकर कार्त्तिक महीने की पूर्णमासी के दिन महादान करनेका चित्तसे विचार किया १५॥

इति श्रीमहाभारतेआश्रमवासकेपर्वणि त्रयोदशोऽध्यायः १३॥

चौदहवां अध्याय।

वैशम्पायन ने कहा, हे राजन्! विदुर की बातें सुन राजा धृतराष्ट्र युधिष्ठिर और अर्जुन के कर्मपर प्रसन्नहुए १ इसके पीछे भीष्मपितामह और अपने सब पुत्र, इष्टमित्र, नातेदार आदिकों के निमित्त श्राद्ध के योग्य, ऋषियों में श्रेष्ठ हज़ारों ब्राह्मणों के लिये २ खाने पीनेकी वस्तुएं तैयार करा, सवारी, पोशाक, सुवर्ण, मणि, रत्न, दासी, दास, भेड़, बकरी ३ पटवस्त्र, ऊर्णवस्त्रादिक, गांव, क्षेत्र, भूषणों से अलंकृत हाथी, घोड़े, कन्या और श्रेष्ठ स्त्रियां एकत्रित कीं ४ उस श्रेष्ठ राजाने नाम ले लेकर सबके निमित्त श्राद्धदान दिया। द्रोणाचार्य, भीष्मपितामह, सोमदत्त, बाह्लीक ५ जयद्रथ आदिक सब नातेदार और राजा दुर्योधन आदिक सब पुत्रोंका स्वतन्त्ररूप से नाम लेकर श्राद्ध किया। बहुत धन की दक्षिणा और अनेक धन, रत्नोंके समूहोंसे सम्पूर्ण वह श्राद्धयज्ञ युधिष्ठिर की सलाह से हुआ; जिसमें सांख्यक और लिखनेवालों ने युधिष्ठिरकी आज्ञा से बारंबार उस राजा से पूछा ६-८ कि आप आज्ञा दें, इन ब्राह्मणों को क्या दान दिया जाय। यहां सब वस्तुएं हैं। आज्ञा होनेपर दान किया गया।

बुद्धिमान् राजा युधिष्ठिर की आज्ञासे सौ रुपये के स्थानपर हज़ार और हज़ार के स्थान में दश हज़ार दान में दिये जाते थे ९-१० धनरूप धाराओंसे वर्षा करनेवाले राजरूपी बादल ने वेदपाठी ब्राह्मणों को ऐसे तृप्त किया जैसे कि बरसनेवाला बादल खेतीको तृप्त करता है ११ हे राजा जनमेजय ! इसके पीछे उस श्राद्धयज्ञ में राजा धृतराष्ट्र ने सब वर्णों को भोज में खाने पीनेकी वस्तुओं और भरपूर रसों से तृप्त किया १२ वस्त्र, धन और रत्नों की लहर रखनेवाले मृदंगों की गूंज से मुखरित गौ, घोड़ेरूप मगरों की लोटपेट से युक्त, रत्नों की खानि रखनेवाले १३ माफी के गांवरूप द्वीपों समेत, मणि-सुवर्णरूपी जल से पूर्ण, धृतराष्ट्ररूप नौकासे संयुक्त उस महासागर ने जगत् को व्याप्त किया १४ महाराज ! इस प्रकार अपने पुत्र, पौत्र, पितर और गान्धारी समेत उन्होंने अपना भी श्राद्धादिक किया १५ जब वे बहुत दान देकर थक गये तब राजा ने दानयज्ञ समाप्त किया १६ इस प्रकार राजा धृतराष्ट्र ने बड़ा दानयज्ञ किया जो कि नटनर्तकों के गान, नृत्यों और बाजों से युक्त था और जो खाने पीने की बहुतसी वस्तुओं समेत दक्षिणासंयुत था १७ हे भरतर्षभ ! इस प्रकार राजा धृतराष्ट्र दश दिन तक दान देकर पुत्र-पौत्रों से अनृण होगये १८ ॥

इति श्रीमहाभारतेआश्रमवासकेपर्वणि चतुर्दशोऽध्यायः १४ ॥

पन्द्रहवां अध्याय।

वैशम्पायनने कहा; इसके अनन्तर प्रातःकाल वनवासका समय पानेवाले अम्बिका के पुत्र बुद्धिमान् धृतराष्ट्र ने वीर पाण्डवों को बुलाकर १ गान्धारी समेत विधिपूर्वक उन्हें आशीर्वाद दिया। कार्त्तिक की पूर्णमासी को ब्राह्मणों से इष्टीयज्ञ करा २ अग्निहोत्र को आगे कर वल्कल और मृगचर्म धारण कर बांधवों से घिरेहुए राजा धृतराष्ट्र महलसे बाहर निकले ३ तब कौरव-पाण्डवोंकी स्त्रियों और कौरववंशीय अन्यान्य स्त्रियों के बड़े शब्द हुए ४ फिर राजा धृतराष्ट्र ने खील और विचित्र पुष्पों से उस घरको पूजा और सेवकों को पारितोषिक आदिसे प्रसन्न कर उन्हें बिदा करके यात्रा की ५ इसके पीछे हाथ जोड़े हुए, अश्रुओं से युक्त, गद्गद कण्ठ राजा युधिष्ठिर उच्च स्वरसे बड़ा शब्द कर साधुतापूर्वक बोले कि 'कहां जाते हो ?' फिर वे शोकसे पृथ्वीपर गिर पड़े ६ उसी प्रकार कठिन दुःख से संतप्त, श्वासोच्छ्वास लेतेहुए भरतर्षभ अर्जुन युधिष्ठिर से

बोले कि ' ऐसा मत करो '। ऐसा कह और पकड़कर वे बड़े दुःखी और पीड़ित हुए ७ वीर भीमसेन, अर्जुन, नकुल, सहदेव, विदुर, संजय, युयुत्सु, कृपाचार्य, धौम्य और अश्रुओं से गद्गदकण्ठ अनेक अन्यान्य ब्राह्मण भी उनके पीछे चले ८ कुन्ती और कन्धेपर हाथ को सहती नेत्र बांधेहुए गान्धारी भी साथ चली। प्रसन्नचित्त धृतराष्ट्र गान्धारी के कन्धेपर हाथ रखकर चल दिये ९ कृष्णा द्रौपदी, सुभद्रा, बालक रखनेवाली उत्तरा, उलूपी, चित्राङ्गदा प्रभृति अन्यान्य स्त्रियां भी अपने बन्धुजनों के साथ राजा धृतराष्ट्र के साथ चलीं १० हे राजन्! तब उन दुःखसे रोनेवाली स्त्रियों के शब्द कुर्री पक्षिणी के समान उच्च स्वर से हुए। पीछे से ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रों की स्त्रियां चारों ओर से दौड़ीं ११ यात्रा होनेपर हस्तिनापुर में पुरवासियों का समूह ऐसे दुःखी हुआ जैसे कि पूर्वसमय में द्यूत के समय पाण्डवों के वन जानेपर कौरवीय सभा को दुःख उत्पन्न था १२ हे नरेन्द्र! उस नगर में जिन स्त्रियों ने कभी चन्द्रमा और सूर्य को भी नहीं देखाथा, वे कौरवेन्द्र धृतराष्ट्र के वन जानेपर शोक से पीड़ित होकर राजमार्ग में आ पहुँचीं १३ ॥

इति श्रीमहाभारतेआश्रमवासकेपर्वणि पञ्चदशोऽध्यायः १५ ॥

सोलहवां अध्याय ।

वैशम्पायन ने कहा; हे राजन्! इसके पीछे महलों की अटारियों और पृथ्वी पर स्त्री-पुरुषोंके बहुत बड़े शब्द हुए १ हाथ जोड़ेहुए, बुद्धिमान्, कँपते हुए राजा धृतराष्ट्र उन स्त्री-पुरुषों के जमघट्ट संयुत राजमार्ग से बड़ी कठिनतापूर्वक हस्तिनापुर के वर्द्धमान द्वार में होकर बाहर निकले। उन्होंने भीड़को बारम्बार बिदा किया २-३ विदुरजी और गोलगणके पुत्र प्रधान अमात्य सूत संजयने राजाके साथ वन जानेका समय जाना ४ राजा धृतराष्ट्रने महारथी कृपाचार्य और युयुत्सु को युधिष्ठिर के सिपुर्द कर लौटादिया ५ भीड़ छँटने पर धृतराष्ट्र की आज्ञासे राजा युधिष्ठिर ने स्त्रियों समेत लौटना चाहा ६ और वनको जानेवाली कुन्ती से कहा कि मैं राजा के साथ जाऊंगा आप लौटिये ७ हे मातः! वधुओंसमेत तुम नगर जाने को योग्य हो। तपस्वियों के व्रतमें निश्चयकर धर्मात्मा राजा वन को जायँ ८ तब धर्मराजकी बात सुन अश्रुओंसे व्याकुलनेत्र, कुन्ती गान्धारी को पकड़कर चलीगईं-उन्होंने लौटना अङ्गीकार नहीं किया ९ कुन्ती बोलीं,

महाराज ! कहीं सहदेवके पोषण में भूल न करना । हे राजन् ! यह सदैव मुझसे और तुमसे प्रीति रखता है १० युद्धोंमें मुख न फेरनेवाले कर्णको सदैव स्मरण करना । उस समय वह वीर युद्धमें दुर्बुद्धिता से मारा गया ११ निश्चय ही मुझ अभागिनी का हृदय कठोर है, जो सूर्य से उत्पन्न अपने पुत्रको न देखने पर मेरा यह हृदय सौ टुकड़े नहीं होता १२ हे शत्रुओंको जीतनेवाले ! ऐसी दशामें मुझसे क्या होसकता है ? यह मेरा बड़ा अपराध है जो मैंने इस अपने सूर्यपुत्र को प्रकट नहीं किया १३ हे शत्रुओं के मारनेवाले, वीर युधिष्ठिर ! भाइयों समेत तुम उस सूर्यपुत्रके निमित्त उत्तम दान दो १४ हे शत्रुसंहारिन् ! तुमको सदैव द्रौपदीका प्रिय करनेमें प्रवृत्त होना योग्य है । हे कौरवोंके उद्धार करनेवाले ! यह भीमसेन, अर्जुन, नकुल १५ तुमसे विश्वासयुक्त होकर पोषण करने के योग्य हैं । हे युधिष्ठिर ! अब तेरे ऊपर कुल का भार है और मैं धूलि, मिट्टी से लिप्तशरीर, तपस्विनी होकर अपने सास ससुरकी भांति चरणोंकी सेवा करती हुई गान्धारीके साथ वनमें रहूंगी १६ वैशम्पायन बोले, कि इस प्रकार आज्ञा पानेवाले बुद्धिमान् राजा युधिष्ठिरने भाइयों समेत व्याकुल होकर और कुछ नहीं किया । दुःखी, चिन्ता और शोकसे युक्त धर्मराज युधिष्ठिर एक मुहूर्त ध्यान कर माता से बोले १७-१८ तुमने यह क्या निश्चय किया है ? तुमको ऐसा कहना योग्य नहीं है । मैं तुमको आज्ञा नहीं देता; क्योंकि तुम कृपा करने योग्य हो १९ हे प्रियदर्शने ! तुमने पहिले शत्रुकी सम्मुखतामें उत्सुक हम लोगोंको प्रतीकारके वचनोंसे उत्साहित किया था । अब हमारा त्याग न करो २० मैंने नरोत्तम वासुदेवजीसे आपके विचार सुनकर और राजाओंको मारकर यह राज्य पाया है २१ आपकी वह बुद्धि कहां है, जो अब आपकी यह बुद्धि मैं सुनताहूं । क्षत्रियधर्म में नियत होनेका उपदेश देकर अब उससे पृथक् किया चाहती हो २२ हे यशस्विनि ! तुम इन पुत्रवधुओंको और हमसमेत सब राज्य को छोड़कर इस दुर्गम्य वनमें किस प्रकार निवास करोगी ? अब मुझपर प्रसन्न होजाओ २३ नेत्रों के जलसे मधुर और अज्ञात प्रयोजनवाले युधिष्ठिरके वचनों को सुनती हुई अश्रुओं से पूर्ण कुन्ती चलदी; तब भीमसेनने कहा कि २४ हे कुन्ती ! जब पुत्र से विजय किया हुआ यह राज्य भोगने के योग्य है और राजधर्म पानेके योग्य है तब तुमको ऐसी बुद्धि कहां से उपजी है २५ पूर्वसमय में हम लोगों को तुमने संसार विनाश का साधन क्यों किया और

अब किस हेतु हमको त्यागकर वनको जाना चाहती हो २६ आप हम बालकों को और शोक, दुःखसे पूर्ण माद्रीके दोनों पुत्रोंको वनसे नगर में क्यों ले आईं २७ हे मातः ! प्रसन्न हूजिये । अब तुम वनको मत जाओ । कुछ कालतक पराक्रमसे इकट्ठे किये हुए युधिष्ठिर के शुद्ध धनको भोगो । पर वनमें निवास करने के लिये निश्चय करनेवाली प्रीतियुक्त कुन्ती शीघ्रता से चली और विविध विलाप करनेवाले पुत्रोंके वचनों को स्वीकार नहीं किया २८-२९ तब विपरीतरूप, रोतीहुई द्रौपदी सुभद्रा समेत स्त्रियां वनवासके लिये जानेवाली कुन्ती के पीछे पीछे चलीं ३० बुद्धिमती कुन्ती अपने सब पुत्रोंको बारम्बार देखती और रोती हुई चली जब पाण्डव अपनी स्त्रियों और सेवकों समेत उसके पीछे चले तब उसने आंसुओंको रोककर पुत्रोंसे कहा ३१-३२ ॥

इति श्रीमहाभारतेआश्रमवासकेपर्वणि षोडशोऽध्यायः १६ ॥

सत्रहवां अध्याय ।

कुन्ती ने कहा, कि हे वीर, पाण्डवो ! जैसा तुम कहते हो वैसाही है । हे राजाओ ! मैंने पहले तुम पीड़ितों के साहस की वृद्धि की थी १ द्यूत में राज्य हार जानेवाले, सुखसे रहित और बिरादरीवालों से पराजित तुम लोगों को साहस दिया २ हे पुरुषोत्तमो ! मैंने यह सोचकर-कि पाण्डुकी सन्तान किसी प्रकार से नष्ट न हो और तुम्हारी शुभ कीर्ति का क्षय न हो-तुमको क्षत्रियधर्म पर प्रवृत्त किया ३ तुम सब इन्द्र के समान और देवताओं के तुल्य पराक्रमी हो । दूसरों का मुँह जोहनेवाली बनने से बचने के लिये मैंने वह कर्म किया था ४ यह विचारकर तुम सबको साहस दिलवाया कि धर्मधारियों में श्रेष्ठ इन्द्र के समान तुम राजा लोग किसी प्रकार से दुखी न रहो ५ यह शोचकर मैंने सदैव उत्साह दिलाया कि दश हज़ार हाथी के समान विख्यात पराक्रमी यह भीमसेन नष्ट न होजावे, इन्द्र के समान पराक्रमी अर्जुन नाशको न पावे और ये दोनों गुरुभक्त नकुल एवं सहदेव किसी प्रकार क्षुधा से पीड़ित न हों ६-८ यह बड़ी श्यामा, दीर्घ नेत्रवाली द्रौपदी सभा में निरर्थक दुःखित न हो यह सोचकर मैंने वह कर्म किया ९ हे भीमसेन ! जब दुश्शासन ने अज्ञानता से तुम्हारे ही आगे इस द्यूत में हारी हुई, अपवित्र, केलेके समान कम्पायमान, रजस्वला द्रौपदी को १० दासी के समान खींचा,

तभी मुझको विदित होगया था कि यह घराना नाश होनेवाला है ११ जब नाथको चाहनेवाली द्रौपदी ने, कुर्री के समान विलाप किया, तब मेरे ससुर आदिक कौरवलोग व्याकुल हुए १२ हे राजन्! जब इस द्रौपदी की चोटीको पापी दुश्शासनने पकड़ा था तभी अचेत होगई थी १३ इसीसे मैंने तुम्हारा तेज बढ़ाने के लिये बदलेके वचनोंसे तुमको उत्साह दिलाया। हे पुत्र! मैंने इसी लिये तुम्हें उत्साहित किया कि १४ पाण्डुका यह राज्य और वंश मेरे पुत्रोंको प्राप्त होकर किसी प्रकारसे नाश न हो १५ हे कौरवो! जिन राजाओं के कारणसे कुलका नाश होता है, वे राजा अपने पुत्र पौत्रों समेत शुभलोक नहीं पाते हैं १६ हे पुत्रो! मैंने पूर्व समय में अपने पतिके बड़े बड़े राजफल भोगे हैं; बड़े दान दिये और विधिपूर्वक अमृत पान किया है १७ मैंने अपने फलके बदलेके लिये वासुदेवजीको नहीं उसकाया। वह काम मैंने केवल वंशकी रक्षाके लिये किया था १८ हे पुत्रो! मैं पुत्रोंसे विजय किये हुए लोक नहीं चाहती हूं १९ हे धर्मराज! मैं अपने तपके द्वारा अपने पतिके शुभ लोकों को चाहतीहूं। हे युधिष्ठिर! मैं इन वनवासी की सास ससुरकी भांति सेवाकर तपसे अपने शरीरको शुष्क करूंगी २० हे कौरवोत्तम! तुम भीमसेनादिकों समेत लौटो। तुम्हारी बुद्धि धर्ममें नियत हो और तुम्हारा चित्त उत्साहयुक्त हो २१॥

इति श्रीमहाभारतेआश्रमवासकेपर्वणि सप्तदशोऽध्यायः १७॥

अठारहवां अध्याय।

वैशम्पायन ने कहा, कि हे राजाओं में श्रेष्ठ, निष्पाप! लज्जायुक्त पाण्डव कुन्ती के वचन सुनकर द्रौपदी समेत लौटे १ इसके अनंतर जानेवाली कुन्ती को देखकर रुदन करनेवाली स्त्रियोंके बड़े शब्द हुए २ पाण्डवलोग राजाकी परिक्रमा और दण्डवत् करके कुन्ती को भी न लौटाकर आप लौटआये ३ फिर महातपस्वी अम्बिकाके पुत्र धृतराष्ट्रने गान्धारी और विदुरको सम्मुख खड़े कर कहा ४ कि अच्छा हो, यदि युधिष्ठिरकी माता देवी लौट जाय क्योंकि जैसा युधिष्ठिरने कहा है सो सब सत्य है। कौनसी स्त्री पुत्रों के इस बड़े फलयुक्त महा ऐश्वर्य को त्यागकर, अज्ञानियों के समान पुत्रोंको छोड़ दुर्गम्य वन को जाती है ५-६ अब इस राज्य में रहकर कुन्ती बड़ी तपस्या और बड़े दान व्रतादिक कर सकती है ७ हे धर्मज्ञ गान्धारी! मेरी बात सुनो। मैं इस वधूकी सेवासे

बहुत प्रसन्न हूं इसलिये तुम इसे आज्ञा दे दो ८ राजाके वचन सुनकर गान्धारी ने राजाकी कही हुई बातें और मुख्यतायुक्त अपना वचन कुन्ती से कहा ९ परन्तु धर्म में प्रवृत्तचित्त, पतिव्रता और वनवास के निमित्त दृढ़ निश्चय करलेनेवाली कुन्तीको लौटाने में गान्धारी समर्थ नहीं हुई १० तब कौरवीय स्त्रियां उस निश्चय और दृढ़ बुद्धिको जान एवं लौटे हुए पाण्डवों को देखकर रोने लगीं ११ बड़े बुद्धिमान् राजा धृतराष्ट्र पाण्डवों समेत सब वधुओं और स्त्रियों के लौट जाने पर वनको गये १२ उस समय अत्यन्त दुःखी, दुःख और शोक से पूर्ण सब पाण्डव स्त्रियों समेत सवारियों पर चढ़कर अपने नगर में आये १३ वह हस्तिनापुर नगर बालक, वृद्ध और स्त्रियों समेत अप्रसन्न और उत्साह से रहित सा होगया १४ कुन्ती से रहित सब पाण्डव निरुत्साह, क्रोध-रहित और बड़े दुःख से ऐसे पीड़ित हुए जैसे कि माताओं से पृथक् बछड़े दुःखी और हिरासा होते हैं १५ प्रभु धृतराष्ट्र ने उस दिन बहुत चलकर गंगाजी के तटपर निवास किया १६ उस तपोवनमें जहां तहां वेदपारग ऋषियों से न्यायके अनुसार प्रकट होनेवाली अग्नियां शोभायमान हुईं १७ तब वृद्धराज ने भी अग्निको प्रकट किया । हे भरतवंशिन् ! वहां जाकर राजाने अग्नियों की उपासनाकी; विधिपूर्वक हवनकर सन्ध्याकी और सूर्यका उपस्थान किया। विदुर और संजयने कौरव वीर राजाकी शय्या कुशाओं से तैयार की और पास ही गान्धारीकी भी शय्या बनाई । साधुव्रत में नियत युधिष्ठिरकी माता कुन्ती गान्धारी के पास ही सुखपूर्वक कुशासनपर बैठगई और विदुर आदिक सब उनके पास बैठ गये १८-२१ साथ के याचक और ब्राह्मण भी अपने अपने योग्य स्थानों में बैठगये । उनकी वह प्रीतिकर रात्रि ब्राह्मी नाम हुई, जिसमें उत्तम ब्राह्मण पढ़ते थे और अग्नियां प्रकाशित थीं । रात्रि व्यतीत होने पर वे दिनके पूर्वाह्न की क्रिया-सन्ध्यादिक से निवृत्त हो २२-२३ यथाविधि अग्निमें हवनकर, व्रती हो उत्तरकी ओर देखते हुए क्रमपूर्वक चले २४ पुरवासियों और देशवासियों से शोचित उन शोचनेवालों का निवास प्रथम दिनमें बड़ा दुःखरूप हुआ २५ ॥

इति श्रीमहाभारतेआश्रमवासकेपर्वणि अष्टादशोऽध्यायः १८ ॥

उन्नीसवां अध्याय।

वैशम्पायन ने कहा, कि फिर विदुरजीके मतमें नियत राजा धृतराष्ट्रने श्रीगंगाजी के तटपर पवित्र लोगों के योग्य महापवित्र स्थानपर निवास किया १ हे भरतर्षभ! वहां वनवासी ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रों के समूह इनके पास आये। उन्हींसे व्याप्त राजाने कथाओं से उनको प्रसन्न कर और यथा विधि पूजा कर उनको शिष्यों समेत बिदा किया २-३ राजाने सायंकाल के समय श्रीगंगाजीपर जाकर यशस्विनी गान्धारी समेत विधिपूर्वक शौच करके स्नानादिक किये ४ विदुर आदिक अन्यान्य लोगोंने पृथक् पृथक् तीर्थोंपर स्नानकर जपादिक क्रियाएं कीं ५ हे राजन्! फिर कुन्ती स्नान किये हुए वृद्ध धृतराष्ट्र और गान्धारी को गंगा के किनारे पर ले आई ६ वहां राजाके याजकोंने वेदी तैयार की तब सत्यसंकल्प राजाने उस वेदीपर अग्निमें हवन किया ७ फिर नियमवान्, जितेन्द्रिय वृद्ध राजा धृतराष्ट्र अपने साथियों समेत गंगा किनारे से कुरुक्षेत्रको गये ८ बुद्धिमान् राजाको वहां आश्रम में पहुँचनेपर शतयूप नामक राजर्षि मिले ९ हे शत्रुओं के जीतनेवाले! वे राजर्षि केकय देशोंके बड़े राजाथे, जो अपने पुत्रको राज्य देकर वनवासी हुए थे। राजा धृतराष्ट्र उनके साथ व्यासाश्रममें गये। वहां राजर्षि शतयूपने धृतराष्ट्रको विधिके अनुसार उपदेश किया १०-११ तब कौरवनन्दन राजा धृतराष्ट्रने वहां दीक्षा पाकर शतयूपके आश्रममें निवास किया १२ बड़े बुद्धिमान् राजर्षिने व्यासजीकी सलाह से वनवास सम्बन्धी सब विधियां राजा को बतलाईं १३ और बड़े साहसी राजा धृतराष्ट्रने साथियों समेत तप किया। महाराज! वल्कल और मृगचर्म धारण करनेवाली देवी गान्धारी कुन्ती समेत राजा के समानही व्रत करने लगीं। हे राजन्! दोनों कर्म, मन, चक्षु और वाणी के द्वारा इन्द्रियों को रोककर उत्तम तपमें नियत हुईं १४-१६ जिसके शरीरमें केवल अस्थि और चर्म शेष रह गया, मांस सूख गया; उस जटा-मृगचर्मधारी, वल्कल से गुप्तशरीर, मोह से रहित राजाने वहां महर्षिके समान कठिन तपस्या आरम्भ की १७ धर्म-अर्थ के ज्ञाता, बुद्धिके स्वामी, श्रेष्ठ घोर तपस्वी, बाह्याभ्यन्तरसे जितेन्द्रिय, दुर्बल, वल्कलचीरधारी विदुरजी सञ्जय समेत राजा और गन्धारी की सेवा करने लगे १८॥

इति श्रीमहाभारतेआश्रमवासकेपर्वणि एकोनविंशतितमोऽध्यायः १९॥

बीसवां अध्याय ।

वैशम्पायन ने कहा, कि फिर राजाको देखनेके निमित्त मुनियों में श्रेष्ठ, महातपस्वी नारद, पर्वत, देवल १ शिष्यों समेत व्यासजी, अन्य अनेक ज्ञानी, सिद्ध, वृद्ध और बड़े धर्मात्मा राजर्षि शतयूप आये २ महाराज ! कुन्तीने विधि के अनुसार उनका पूजन किया। तपस्वी भी उस सेवा से प्रसन्न हुए ३ हे तात! वहां महात्मा राजा धृतराष्ट्रको प्रसन्नचित्त करते हुए उन महर्षियों ने धर्मरूप कथाएं सुनाईं ४ फिर सब वृत्तान्तोंके प्रत्यक्ष देखनेवाले देवर्षि नारदजीने किसी कथाके मध्यमें इस कथाको वर्णन किया ५ नारदजी बोले, कि शतयूप के पितामह श्रीमान् सहस्रचित्य केकय देशियों के राजा थे जो सब ओर से निर्भय थे ६ धर्मात्मा राजा सहस्रचित्य ने अपने बड़े पुत्र धर्मात्मा को राज्य सौंप कर वनयात्रा की ७ उस महातेजस्वी राजाने प्रकाशवान् तपका फल पाकर इन्द्रलोक पाया ८ हे राजन् ! प्रथम महेन्द्रके भवन में जाते हुए मैंने उस राजा को कईबार देखा; जिसके पाप तपके द्वारा भस्म होगये थे ९ इसी प्रकार भगदत्तके पितामह राजा शैलालय तपके ही बलसे महेन्द्रभवन में पहुँचे १० राजा प्रसध वज्रधारी के समान थे; वे भी तप द्वारा यहांसे स्वर्गको गये ११ इसी वन में मान्धाता के पुत्र राजा पुरकुत्सने भी बड़ी सिद्धि पाई १२ नदियों में श्रेष्ठ नर्मदा नदी जिनकी भार्या हुई,वे राजा भी इसीवनमें तपकर स्वर्गको गये १३ राजा शशलोमा बड़े धर्मात्माथे उन्हों ने भी इस वन में अच्छी प्रकार तपस्या करके स्वर्ग पाया १४ हे राजन् ! तुम भी व्यासजी की कृपासे इस दुष्प्राप्य तपोवनको पाकर उत्तम गति पाओगे १५ और तपस्या के अन्तमें लक्ष्मीसे संयुक्त होकर गान्धारी समेत उन महात्माओंकी गति पाओगे १६ महाराज ! इन्द्र के सम्मुख वर्तमान राजा पाण्डु सदैव तुम्हारा स्मरण करता है। वह सदैव तुमको कल्याणसे युक्त करेगा १७ यह तुम्हारी वधू यशस्विनी कुन्ती भी तुम्हारी और गान्धारी की सेवासे पतिकी सालोक्यताको पावेगी १८ जोकि युधिष्ठिर की माता है और युधिष्ठिर सनातन धर्म है। हे राजन् ! हम दिव्य नेत्रोंसे देखते हैं १९ कि विदुर इस महात्मा युधिष्ठिरके रूपमें प्रवेश करेगा और संजय उसके ध्यानसे स्वर्गको जायगा २० वैशम्पायन बोले, कि महात्मा धृतराष्ट्र अपनी पत्नीसमेत इसे सुनकर प्रसन्न हुए । फिर उन्होंने नारदजीके वचनों की प्रशंसाकर उनकी

बड़ी पूजा की २१ हे राजन्! फिर सब ब्राह्मणों ने नारदजी का अत्यन्त पूजन किया। नारदजी राजा धृतराष्ट्र की प्रीति से बारम्बार प्रसन्न हुए २२ बड़े साधु ब्राह्मणों ने नारदजीके वचनों की स्तुतिकी। राजर्षि शतयूपने नारदजीसे कहा, कि २३ हे महातेजस्विन्! बड़ी कृपाहुई,जो भगवान्की ओरसे कौरवराज धृतराष्ट्र समेत इनके सब मनुष्योंकी और मेरी श्रद्धा बढ़ाई गई २४ हे लोकपूजित,देवर्षे! राजा धृतराष्ट्र की ओरसे मैं कुछ प्रार्थना करना चाहताहूं,कृपया सुन लीजिये २५ आप दिव्य दृष्टिसे सब मूल वृत्तान्तों के ज्ञाता हैं। हे ब्रह्मर्षे! योगसे संयुक्त होकर आप मनुष्योंकी नाना प्रकार की गतियोंको देखते हैं २६ हे महामुने! आपने राजाओं की गति, महेन्द्रकी सालोक्यता वर्णन की परन्तु इस राजा के लोक वर्णन नहीं किये २७ हे प्रभो! मैं इस राजाका स्थान भी सुना चाहता हूं कि वह कैसा है और आपने उसे कब देखा है। उसको मूलसमेत मुझसे कहिये २८ इस प्रकारसे पूछेजानेपर दिव्यदर्शी महातपस्वी नारदजीने सभा में बैठकर सबका चित्तविनोदक वचन कहा २९ नारदजीने कहा,कि हे राजर्षे! मैंने दैवइच्छासे इन्द्रलोकमें जाकर, वहां शचीपति इन्द्र औरराजा पाण्डुको देखा ३० हे राजन्! वहांपर इसकी उस कठिन तपस्या का प्रसंग निकला जिसको कि यह तपता है ३१ वहां मैंने इन्द्रके मुखसे सुना कि इस राजा की अवस्था के तीन वर्ष बाक़ी हैं ३२ यह राजा धृतराष्ट्र गान्धारी समेत कुबेर के लोकको जायगा। राजाओं के राजा कुबेरजी से सत्कार पाकर ३३ तपसे भस्मीभूतपाप हो प्रारब्धवान्, दिव्य भूषणोंसे अलंकृत यह ऋषिपुत्र धर्मात्मा उस स्वेच्छाचारी विमानकी सवारी से ३४ अपनी प्रीति और अनुराग के साथ देवता, गन्धर्व और राक्षसों के लोकों में घूमेगा। आपने मुझसे पूछा है ३५ इसीसे मैंने इस देवताओं की गुप्तवार्ता को अत्यन्त प्रीतिपूर्वक तुमसे वर्णन किया। आपलोग शास्त्ररूप धन रखनेवाले और तपसे पापोंके सुखानेवालेहैं ३६ वैशम्पायन बोले, कि राजा धृतराष्ट्र और सब ब्राह्मण लोग देवर्षि के मधुर और प्रिय वचन सुन कर अत्यन्त प्रसन्न हुए ३७ सिद्धगति में प्राप्त नारदजी इस प्रकार कथाओं से धृतराष्ट्र को विश्वास दिलाकर अपनी इच्छाके अनुसार चले गये ३८॥

इति श्रीमहाभारतेआश्रमवासकेपर्वणि विंशतितमोऽध्यायः २०॥

इक्कीसवां अध्याय।

वैशम्पायन ने कहा, कि हे राजन् ! राजा धृतराष्ट्र के वन जानेपर दुःख, शोकसे संयुक्त पाण्डव माता के शोकसे व्याप्त हुए १ राजा धृतराष्ट्र के विषयमें वार्तालाप करतेहुए ब्राह्मण और सब पुरवासी उस राजाका शोच किया करते थे २ कि वृद्ध राजा निर्जन वनमें किस प्रकारसे रहते हैं;सौभाग्यवती गान्धारी और कुन्ती कैसे निवास करती हैं ३ वे सुखके योग्य महा दुःखी, मृतक पुत्र-वाले अन्धे राजर्षि उस महावन में किस दशामें होंगे ४ पुत्रों को न देखती हुई कुन्ती ने बड़ा कठिन कर्म किया । उसने राजलक्ष्मी को त्यागकर वनवास अंगीकार किया ५ भाईकी सेवा करनेवाला, ज्ञानी विदुर किस दशामें है और स्वामी का शुभचिन्तक बुद्धिमान् संजय किस प्रकारहै ६ वे पुरवासी बाल बच्चों समेत इन सबके शोकों से दुःखित हुए और परस्पर मिलकर जहां तहां बातें करने लगे ७ अत्यन्त शोकयुक्त पाण्डव लोग वृद्ध माताको शोचते हुए बहुत थोड़े समयतक पुरमें रहे ८ इस प्रकार मृतक पुत्रवाले वृद्ध ताऊ राजा धृतराष्ट्र, सौभाग्यवती गान्धारी और बुद्धिमान् विदुरजीका भी उन्होंने शोच किया ९ उन्हीं के शोचमें पाण्डवों की प्रीति उस राज्य, वेदपाठ और स्त्रियोंपर नहीं हुई १० बिरादरीवालों के उस घोर नाश को बरम्बार स्मरण करते और राजा को शोचते हुए पाण्डवों को बड़ा वैराग्य हुआ ११ सेनामुख पर बालक अभिमन्यु का नाश, युद्ध में न भागनेवाले वीर कर्णका मरना १२ द्रौपदीके पुत्र और अन्य नातेदारों की मृत्यु को स्मरण करते हुए वे वीर शोकयुक्त हुए १३ हे भरतवंशिन्, वीर ! नररत्नों से रहित पृथ्वी को सदैव शोचते हुए उन पाण्डवों ने शान्ति नहीं पाई १४ तब पुत्रोंसे रहित द्रौपदी और सुभद्रा अधिक प्रसन्न नहीं हुईं १५ आपके उन पूर्व पितामहाओंने उत्तराके पुत्र (आपके पिता) परीक्षित को देखकर प्राण धारण किये १६ ॥

इति श्रीमहाभरतेआश्रमवासकेपर्वणि एकविंशतितमोऽध्यायः २१ ॥

बाईसवां अध्याय ।

वैशम्पायन बोले, कि माताको प्रसन्न करनेवाले वीर पुरुषोत्तम पाण्डव इस प्रकार माता का स्मरण कर अत्यन्त दुखी हुए १ पहले वे राज्य के कार्योंमें सदैव प्रवृत्त थे, परन्तु उन्होंने फिर राजधानी में बैठकर राज काज भलीभांति नहीं

किया २ शोकसे युक्त उन लोगोंने किसी वस्तुको भी स्वीकार नहीं किया और न उन्हों ने साम्हने आयेहुए किसीके वार्तालापको ही स्वीकार किया ३ शोकके कारण विज्ञान से रहित और गम्भीरतामें सागर के समान अजेय वीर पाण्डव अचेतसे होगये ४ उन्होंने माताकी चिन्ताकी कि वह अत्यन्त दुर्बल शरीरवाली कुन्ती किस प्रकार राजा धृतराष्ट्र और गान्धारी की सेवा करती होगी ५ मृतक पुत्रवाले और आश्रयस्थान न रखनेवाले वे अकेले राजा अपनी पत्नी समेत हिंस्र,श्वापद जीवों के निवासस्थान वनमें कैसे निवास करते होंगे ६ भाग्यवती मृतक बान्धववाली देवी गान्धारी निर्जन वनमें किसप्रकार अपने अन्धे पति के पास रहती होगी ७ इस प्रकार कहनेवाले पाण्डवों को शोच हुआ और धृतराष्ट्र को देखने की इच्छासे उन्होंने वन जानेका विचार किया; तब सहदेव ने राजाको दण्डवत् कर कहा कि बड़ी प्रसन्नताका स्थान है जो मैंने वन जाने के विषयमें आपका हृदय देखा ८-९ हे राजेन्द्र ! मैं आपकी वृद्धतासे, शीघ्र वन जानेके विषय में आपसे कहने का साहस नहीं कर सका; वही बात अब प्रत्यक्ष हुई १० मैं प्रारब्ध से तपस्विनी, तापसी, जटाओं से युक्त, वृद्धा, काश-कुशाओं से घायलशरीर और धृतराष्ट्र एवं गान्धारी की सेवामें प्रवृत्त कुन्तीको देखूंगा ११ महलों की अटारियों में बड़ी होनेवाली, अत्यन्त सुखी माता को वनमें अत्यन्त दुखी और थकी हुई कब देखूंगा १२ हे भरतर्षभ ! निश्चय ही मनुष्यों के कर्मादिजनित फल विनाशवान् हैं क्योंकि राजपुत्री कुन्ती वनमें महादुखी होकर निवास करती हैं १३ स्त्रियों में श्रेष्ठ द्रौपदीने सहदेवका वचन सुनकर राजाको नमस्कार और पूजन कर कहा कि १४ हे राजन् ! मैं उन देवीको कब देखूंगी। जो वे कुन्ती जीती होंगी तो निश्चयही वे मुझपर प्रीति करेंगी १५ हे राजेन्द्र ! सदैव आपका भी विचार हो और आपका चित्त धर्ममें प्रवृत्त हो; जो अब आप हमको कल्याण से संयुक्त करोगे १६ महाराज ! आप कुन्ती, गान्धारी और ससुरके दर्शन की इच्छा रखनेवाली इन वधुओं को हम से आगे नियत जानो। हे भरतर्षभ ! देवी द्रौपदी के वचनों को सुनकर राजा ने सब सेनाके प्रधान लोगोंको बुलाकर आज्ञा दी कि १७-१८ बहुत रथ,हाथी रखनेवाली मेरी सेनाको सन्नद्ध करो। मैं वनमें निवास करनेवाले राजा धृतराष्ट्र को देखूंगा १९ फिर राजा ने महलों के सेवकों को आज्ञा दी कि मेरी नाना प्रकार की सब सवारियों और हजारों पालकियों को तैयार करो २० छकड़े,

दूकानें, खज़ाने, कारीगर और खज़ाने के नौकर-चाकर कुरुक्षेत्र के आश्रमको चलें २१ जो कोई पुरवासी राजाको देखना चाहता हो, वह भी अच्छे प्रकार सावधान होकर चले २२ रसोइये और रसोईखाने के प्रबन्धक सब रसोईखाने और नाना प्रकारके मेरे भक्ष्य भोज्योंको छकड़ोंपर लादकर लेचलें। प्रातःकाल के समय हमारी यात्रा करने की बात नगरमें प्रसिद्धि करो; विलम्ब मत करो। अब मार्गमें भी नाना प्रकारके निवासस्थान बनाओ २३-२४ राजा युधिष्ठिरने इस प्रकार आज्ञा देकर प्रातःकाल भाइयों समेत यात्रा की। उनके अग्रभाग में स्त्री और वृद्ध मनुष्य थे २५ राजा नगर से बाहर पांच दिनतक मनुष्यों के समूहों की प्रतीक्षा में ठहरे रहे; तब वनको गये २६॥

इति श्रीमहाभारतेआश्रमवासकेपर्वणि द्वाविंशो ऽध्यायः २२॥

तेईसवां अध्याय।

वैशम्पायन ने कहा, कि इसके अनन्तर भरतवंशियोंमें बड़े साधु युधिष्ठिरने लोकपालोंके समान अर्जुन आदिक वीरों से रक्षित सब प्रजाओंको यह आज्ञा दी १ कि सबलोग घोड़ोंको जोड़ जोड़ कर तैयार हों। हे भरतर्षभ! इसआज्ञा को सुनते ही घोड़ों के तैयार करने और सवारों की तैयारी करने के बड़े शब्द हुए २ कोई तो रथकी सवारी से चले और कोई प्रकाशित अग्निके समान सुवर्णके रथोंकी सवारीसे चले ३ हे राजन्! इसी प्रकार बहुतसे लोग गजेन्द्रों की सावरीसे चले; कोई ऊंटोंकी सवारीसे चले और इसी प्रकार नखर तथा प्राससे युद्ध करनेवाले बहुतसे मनुष्य पैदलही चले ४ धृतराष्ट्रके दर्शनकी अभिलाषासे पुरवासी और देशवासी कई प्रकार की सवारियोंपर सवार होकर युधिष्ठिरके पीछे पीछे चले। सेनाध्यक्ष गौतम कृपाचार्य भी राजाकी आज्ञानुसार सब सेनाको साथ लेकर आश्रमको चले ५-६ इसके पीछे ब्राह्मणों से युक्त, बहुत से सूत, मागध और वन्दियों से स्तुतिमान ७ मस्तकपर श्वेत छत्रसे शोभित कौरवराज-युधिष्ठिर रथोंकी बड़ी सेना समेत चले ८ भयकारी कर्मवाला वायुका पुत्र भीम-सेन सजे हुए, यन्त्र और धनुष आदिक से युक्त पर्वताकार हाथियों से व्याप्त होकर चला ९ उसी प्रकार अच्छी पोशाक आदिसे अलंकृत, सजी हुई ध्वजा और कवच रखनेवाले तीव्रगामी घोड़ोंपर सवार नकुल और सहदेव भी चले १० जितेन्द्रिय, महातेजस्वी अर्जुन रथकी सवारीसे राजाके पीछे पीछे चला। वह

रथ दिव्य श्वेत घोड़ों से युक्त और सूर्य के समान तेजस्वी था ११ अन्तःपुरके सेवकों से रक्षित, पालकी में सवार द्रौपदी आदिक स्त्रियां भी असंख्य धन दान करती हुई चलीं १२ हे भरतर्षभ! उस समय वह पाण्डवी सेना रथ, हाथी और घोड़ों से वृद्धियुक्त; बांसुरी और बीणाओं से शब्दायमान होकर महा शोभायमान हुई १३ हे राजन्! वे श्रेष्ठ कौरवलोग क्रीड़ा के योग्य नदी और सरोवरों के तटोंपर निवास करते हुए क्रमपूर्वक चले १४ महातेजस्वी युयुत्सु और धौम्य पुरोहित ने युधिष्ठिरकी आज्ञासे नगरकी रक्षा की १५ फिर राजा युधिष्ठिर कुरुक्षेत्रमें पहुँचे । वहां महापवित्र यमुना नदी को वे क्रम से उतरे १६ राजाने दूरसे ही बुद्धिमान् राजर्षि शतयूप और धृतराष्ट्र के आश्रमको देखा १७ हे भरतर्षभ! इसके पीछे उन सब मनुष्यों ने अत्यन्त प्रसन्नचित्त,बड़े शब्दों से शब्दायमान उस वनमें प्रवेश किया १८ ॥

इति श्रीमहाभारतेआश्रमवासकेपर्वणि त्रयोविंशतितमोऽध्यायः २३ ॥

चौबीसवां अध्याय ।

वैशम्पायन बोले, कि फिर वह नम्रतायुक्त पाण्डव दूरसे उतरकर पैदल ही राजाके आश्रम में गये १ सब सेनाके लोग, देशवासी और उत्तम कौरवों की स्त्रियांभी पैदल ही उनके पीछे चलीं २ वहां जाकर उन पाण्डवोंने मनुष्यों से रहित, मृगसमूहों से व्याप्त और केलों के वनों से शोभित धृतराष्ट्रके आश्रम को देखा ३ फिर व्रतमें सावधान प्रथमके तपस्वी लोग, आये हुए पाण्डवों को देखने वहां आये ४ तब आंखों में आंसूभर कर राजा युधिष्ठिरने उन से पूछा कि कौरववंश का पोषण करनेवाला हमारा ताऊ कहां गया ५ हे राजन्! उन मुनियों ने कहा, कि यमुनाजी में स्नान करने और पुष्प तथा जलघट लाने गया है ६ तब वह पाण्डव पैदल उनके बताये हुए मार्ग से वहांको शीघ्र चले और उन सबको थोड़ीही दूर पर देखा ७ फिर ताऊके दर्शनाभिलाषी वे पाण्डव बड़ी शीघ्रतासे चले और सहदेव कुन्तीकी ओर तीव्रतासे दौड़ा ८ वह बुद्धिमान् माताके चरणों का स्पर्श कर बड़े जोरसे रोने लगा। अश्रुयुक्तमुखवाली कुन्तीने भी अपने प्रिय पुत्र सहदेव को ९ भुजाओं से मिलकर और उठाकर गान्धारी से कहा १० इसके पीछे कुन्ती राजा युधिष्ठिर, भीमसेन, अर्जुन और नकुलको देखकर बड़ी शीघ्रता से सम्मुख गई ११ कुन्ती उन दोनों को खींचतीहुई; उन

दोनों के आगे चलती थी । वे पाण्डव उसको देखकर पृथ्वी पर गिर पड़े १२ बुद्धिमान् प्रभु, राजा धृतराष्ट्रने उनको शब्द और स्पर्शसे जान कर अच्छे प्रकार विश्वास दिया १३ फिर महात्मा पाण्डवों ने आंसू बहाकर राजा धृतराष्ट्र, गान्धारी और माता कुन्तीको यथाविधि दण्डवत् की १४ तब सचेत होकर मातासे विश्वासयुक्त उन पाण्डवों ने सबके जलकलश आप लेलिये १५ उसी प्रकार उन नरोत्तमोंकी पत्नियों और अन्य राजाओंकी स्त्रियों तथा पुरवासी, देशवासी आदिक स्त्री पुरुषोंने भी उस राजा को देखा १६ राजा युधिष्ठिर ने उन सब मनुष्यों को नाम और गोत्रसे, राजा धृतराष्ट्र को पहिचनवाया और उसने उनका सत्कार किया १७ उनसे घिरेहुए और आनन्दाश्रुओं से युक्त राजा धृतराष्ट्रने अपने को घरमेंही सा माना जैसे कि पहले हस्तिनापुरमें थे १८ द्रौपदी आदिक वधुओंसे दण्डवत् किये हुए बुद्धिमान् धृतराष्ट्र गान्धारी और कुन्ती समेत प्रसन्न हुए १९ फिर आश्रममें चलेगये जो सिद्ध, चारणोंसे सेवित और दर्शक मनुष्योंसे तारागणोंसे पूर्ण आकाश की नाईं भराहुआ था २० ॥

इति श्रीमहाभारतेआश्रमवासकेपर्वणि चतुर्विंशोऽध्यायः २४ ॥

पच्चीसवां अध्याय ।

वैशम्पायन बोले, कि हे भरतर्षभ ! तब राजा धृतराष्ट्रने कमललोचन, नरोत्तम पांचों भाइयों समेत आश्रम में निवास किया १ कौरवपति के पुत्र, बड़े वक्षस्स्थल वाले पाण्डवों के देखने को अनेक देशोंसे आनेवाले महाभाग तपस्वियों के साथ आसनों पर बैठे २ और बोले; हम जानना चाहते हैं कि इनमें युधिष्ठिर कौन से हैं; भीमसेन, अर्जुन और नकुल सहदेव कौनसे हैं और यशस्विनी द्रौपदी कौनसी है ३ तब सूत सञ्जयने उन पाण्डवोंका—और द्रौपदी प्रभृति कौरवोंकी सब स्त्रियों का, उन तपस्वियों के सम्मुख वर्णन किया ४ सञ्जय ने कहा कि यह शुद्ध जाम्बूनद सुवर्ण के समान गोरे, महासिंह के समान उच्च शरीर, सुन्दर नासिका और बड़े आयत रक्तनेत्रवाले कौरवराज युधिष्ठिर हैं ५ मतवाले गजेन्द्रके समान चलनेवाले, तप्त शुद्ध सुवर्णके समान गोरे, बड़े लम्बस्कन्ध और भुजाओंवाले भीमसेन हैं ६ इनके समीपमें बड़े धनुषधारी, श्यामवर्ण, तरुण गजेन्द्रके समान शोभायमान, सिंहके समान ऊंचे कन्धे, गज खेलके समान गति और कमलके समान बड़े दिव्य नेत्रवाले ये वीर अर्जुन

हैं ७ कुन्ती के सम्मुख विष्णु और महेन्द्र के समान ये पुरुषोत्तम नकुल और सहदेव हैं। स्वरूप, बल और सुन्दर स्वभाव में, इस नरलोक में अनुपम ८ कमल के समान दीर्घ नेत्र,कुछ मध्य दशाको स्पर्श करनेवाली,नीले कमलके समान तेजस्विनी, सुरदेवी के तुल्य द्रौपदी, साक्षात् मूर्तिमती लक्ष्मी के समान नियत हैं ९ हे ब्राह्मणो ! इनके समीप में उत्तम सुवर्ण के समान तेजस्विनी, चन्द्रमा की किरणों के समान रूपवाली, मध्य में वे अनुपम चक्रधारी श्रीकृष्णजीकी बहिन हैं १० जाम्बूनद नामके शुद्ध सुवर्णके समान गोरी सर्पराज की कन्या उलूपी, अर्जुनकी भार्या हैं। उत्तम मधुपुष्प के समान शरीरवाली यह राजकन्या चित्राङ्गदा भी अर्जुन की भार्या है ११ बड़े नीले कमलदल के समान वर्णवाली यह उस राजा चमूपति की बहिन है जिसने सदैव श्रीकृष्णजी से ईर्षा की; यह भीमसेन की उत्तम पटरानी है १२ चम्पे के पत्र और पुष्पके समान गोरी और जरासन्ध नाम से विख्यात मगधदेशकी यह राजकुमारी माद्री के छोटे पुत्र सहदेवकी भार्या है १३ जिसका कमलके समान श्याम वर्ण है और जिसके समान पहले कोई पृथ्वीपर नहीं हुई ऐसी यह कमलकेसे बड़े नेत्रोंवाली स्त्री माद्रीके बड़े पुत्र नकुलकी भार्या है १४ तपाये हुए सुवर्णके समान गोरी यह राजा विराट्की पुत्री अपने पुत्रके साथ है। यह उस अभिमन्युकी भार्या है, जो युद्धमें रथसे विहीन होकर रथसवार द्रोणाचार्यादिकों के हाथ से मारा गया १५ ये श्वेत ओढ़नीवाली, वृद्ध राजा धृतराष्ट्र और गान्धारी की सौ से अधिक पुत्र वधुएं हैं। इनके पुत्र और पति वीरोंके हाथों से मारे गये १६ ब्राह्मण भावसे, सत्य बुद्धि, शुद्ध सतोगुणयुक्त सब राजपत्नियां मैंने मुख्यता पूर्वक आप को बतलाईं १७ वैशम्पायन बोले, कि वृद्ध कौरवों में श्रेष्ठ राजा धृतराष्ट्र इस प्रकार उन राजकुमारों से मिला और तपस्वियों के चले जानेपर उनसे कुशलक्षेम पूछा १८ सवारियों को छोड़कर, आश्रममण्डलसे पृथक् सेना के मनुष्यों के नियत होने और स्त्री, बालक एवं वृद्धों के अच्छी प्रकार से बैठ जाने पर योग्यतानुसार सबसे कुशलक्षेम पूछा १९ ॥

इति श्रीमहाभारतेआश्रमवासकेपर्वणि पञ्चविंशोऽध्यायः २५ ॥

छब्बीसवां अध्याय।

धृतराष्ट्र बोले, कि हे महाबाहु युधिष्ठिर ! तुम सब भाई, पुरवासी और देश-

वासियों समेत कुशलपूर्वक हो १ हे राजन् ! तुम्हारे आश्रयसे जीविका पाने-वाले मंत्री, नौकर-चाकर और तुम्हारे गुरु नीरोग हैं २ प्रजा के लोग तुम्हारे देश में नीरोगतापूर्वक निर्भय होकर निवास करते हैं ? क्या तुम राजर्षियों से किये हुए शुभफलदाता प्राचीन व्यवहारों पर चलते हो ? क्या न्यायपूर्वक तुम्हारे खज़ाने पूर्ण होते हैं ? शत्रु, मित्र और उदासीन राजाओं में उचित कर्म और व्यवहारों को वर्त्तेहो ३-४ हे भरतर्षभ ! क्या तुम अग्रहारनामक दानों समेत ब्राह्मणों का दर्शन करते हो और वे तुम्हारे सुन्दर स्वभावसे प्रसन्न होते हैं ५ शत्रु भी तुम्हारे उत्तम स्वभाव से प्रसन्न हैं, फिर पुरवासी और राज्य के सेवक प्रभृति तथा नाते रिश्तेदार क्यों न प्रसन्न होंगे ? हे राजेन्द्र ! श्रद्धालु तुम क्या देवता पितरों को पूजते हो ६ हे भरतवंशिन् ! क्या तुम खाने पीने की वस्तुओं से अतिथियोंको पूजते हो ? क्या तुम्हारे वेदपाठी ब्राह्मण नीति-मार्ग और अपने कर्मों में प्रवृत्त हैं ७ बाल बच्चेवाले क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र भी अपनी रीतियोंपर नियत हैं ? क्या तुम्हारे बालक, स्त्री और वृद्ध शोकहीन होकर प्रार्थना करते हैं ८ हे नरोत्तम ! क्या तुम्हारे घरमें बहिन, बेटी और वधू आदि पूजित हैं ? महाराज ! क्या यह राजर्षिवंश तुम्हें राजा पाकर उचित रीति पर नियत हैं ९ और तुम्हारी अपकीर्ति तो नहीं होती है ? वैशम्पायन बोले, कि न्यायपूर्वक वार्तालाप में कुशल, ज्ञानी राजा युधिष्ठिरने इस प्रकार पूछे जाने पर राजा धृतराष्ट्रसे कुशल-क्षेमपूर्वक कहा कि १० हे राजन् ! क्या आप का तप वृद्धि पारहा है और आपको बाह्याभ्यन्तर से जितेन्द्रियता प्राप्त है और सेवा करनेवाली यह मेरी माता थकावट से रहित है ११ हे राजन् ! इसका वन-वास सफल होगा । यह मेरी ताई शीत वायु और मार्ग चलने से दुर्बल १२ घोर तपसे युक्त देवी गान्धारी अपने बड़े पराक्रमी और क्षत्रिय धर्म में नियत उन मृत पुत्रोंको तो नहीं शोचती है १३ यह सदैव हम पापियों को शाप तो नहीं देती है ? हे राजन् ! विदुरजी कहां हैं, हम उनको देखेंगे । वह सञ्जय कुशलतापूर्वक तपमें नियत है १४ वैशम्पायन बोले, कि इसप्रकारके युधिष्ठिर के वचन सुनकर धृतराष्ट्र ने राजा युधिष्ठिर को उत्तर दिया, कि हे पुत्र ! विदुर अच्छी तरह है और घोर तपमें नियत है १५ वह वायुभक्षी, निराहार, दुर्बल, शरीर हड्डियों से तना हुआ कभी कभी इस निर्जन वनमें किसी ब्राह्मणको दिखाई पड़ता है १६ ये बातें हो ही रही थीं, कि जटाधारी, बैठा मुख, दुर्बल,

नंगा, वनकी धुलि से लिपटा, मैला १७ विदुर दूरसे ही दिखाई पड़ा। तब राजासे सबने कहा, कि हे राजन्! वह विदुर आश्रमकी ओर दृष्टि किये अकस्मात् लौटा है १८ अकेले राजा युधिष्ठिर, घोर वनमें प्रवेश करनेवाले विदुर के पीछे दौड़े। विदुर कहीं दिखाई देता था और कहीं दृष्टिसे गुप्त होजाता था १९ वहां जाकर राजा ने कहा, कि हे विदुरजी! मैं आपका प्यारा राजा युधिष्ठिर हूं। इस प्रकार कहते हुए राजा युधिष्ठिर उपायपूर्वक उसके पीछे दौड़े २० फिर वनके मध्यमें बुद्धिमानों में श्रेष्ठ विदुरजी वहां एकान्त स्थान में किसी वृक्षका आश्रय लेकर नियत हुए २१ बड़े बुद्धिमान् राजा युधिष्ठिरने अत्यन्त दुर्बल और केवल स्वरूपसे ही विदित होनेवाले बुद्धिमान् विदुरजी को पहिचाना २२ और कहा कि मैं युधिष्ठिर हूं। विदुरजी के कान में यह वचन कहकर राजा आगे हुए और उनको प्रणाम किया २३ फिर उसने नेत्र फैलाकर राजाको देखा। दृष्टि में कुशल बुद्धिमान् विदुरजी ने उसमें दृष्टि लगाकर २४ अंगोंसे अंगों में प्रवेशकर,प्राणोंको प्राणों में और इन्द्रियों को इन्द्रियों में पहुँचाया २५ तेजसे अग्निरूप विदुरजीने योगबलसे धर्मराज राजा युधिष्ठिरके शरीरमें प्रवेश किया। धर्मराज युधिष्ठिरने विदुरजी के शरीर को उसी प्रकार नेत्र खुले हुए और वृक्ष के आश्रय से टिके हुए निश्चेष्ट देखा २६-२७ तब महातेजस्वी, धर्मराजने अपनेको कई गुना बलवान् माना। हे राजन्! फिर महातेजस्वी विद्यावान् पाण्डवने अपने उन सब प्राणयोग और धर्मोंका स्मरण किया जैसा कि व्यासजी ने कहा था २८-२९ धर्मराज इसके संस्कार और दाह करने के अभिलाषी हुए, तब आकाशवाणी हुई, कि हे राजन्! यह विदुर नाम तुमको दाह न करना चाहिये। यहां इसी प्रकार इसको छोड़ो; यही सनातन धर्म है ३०-३१ हे भरतवंशिन्! इसके लोक सन्तानक नाम होंगे। इसने संन्यास धर्म पाया है। हे शत्रुओं के जीतनेवाले! यह विदुर शोचने के योग्य नहीं है ३२ इस प्रकार से कहे गये धर्मराज ने लौटकर सब वृत्तान्त राजा धृतराष्ट्र के सम्मुख वर्णन किया ३३ तब तेजस्वी राजा धृतराष्ट्र और भीमसेनादिक पाण्डवों समेत सब मनुष्यों को अत्यन्त अचरज हुआ ३४ राजा ने प्रसन्न होकर धर्मपुत्रसे कहा, कि मेरे जल, फल और मूलको लीजिये ३५ हे राजन्! मनुष्य जिस खाने पीनेकी वस्तुको अपने पास रखता है, उसका अतिथि भी वही सामान पाता है ३६ यह सुन धर्मराजने राजासे कहा, कि यथार्थ है ३७

और सब छोटे भाइयों समेत राजाके दिये हुए फलमूलों को भोजन किया। फिर वृक्षोंके मूलोंपर निवास करनेवाले और फल, मूल, जल भोजन करने वाले वे सब उस रात्रिको वहीं रहे ३८ ॥

इति श्रीमहाभारतेआश्रमवासकेपर्वणि षड्विंशोऽध्यायः २६ ॥

सत्ताईसवां अध्याय।

वैशम्पायन बोले, कि हे राजन् ! इसके पीछे पवित्रकर्मी पाण्डवों की वह कल्याणरूप, नक्षत्रों से युक्त रात्रि उसी आश्रम में व्यतीत हुई १ फिर वहां पर धर्म, अर्थ का लक्षण रखनेवाले विचित्र पदों से युक्त और नाना प्रकार की श्रुतियों से संयुक्त कथाएं हुईं २ हे राजन् ! पाण्डवों ने बहुमूल्य शयन त्याग कर माताके चारों ओर पृथ्वी पर ही शयन किया ३ बड़े साहसी राजा धृतराष्ट्र ने जो आहार किया था, वही आहार कर उन नरवीरों ने रात बिताई। रात्रि व्यतीत होनेपर पूर्वाह्न काल के जपादिक से निवृत्त होकर राजा युधिष्ठिर ने भाइयों समेत आश्रममण्डल देखा ४-५ रानी आदिक स्त्रियों और दास-दासी, पुरोहित समेत राजा युधिष्ठिरने राजा धृतराष्ट्र की आज्ञा से सुखपूर्वक इच्छा-नुसार विहार किया ६ वहां अग्नि से अच्छे प्रकार प्रकाशित वेदियोंको देखा। उन अग्नियोंके पास अभिषेक और होम करनेवाले मुनि नियत थे ७ मुनियोंकी वे वेदियां बनैले फूलों के ढेर और घृतके ऊंचे उठेहुए धुएंसे बाहरी शरीरयुक्त थीं ८ हे प्रभो ! जहां तहां निर्भय मृगोंके यूथ, शरोद गानेवाले निर्भय नीलकण्ठादिक पक्षियोंके केका शब्द, दात्यूह नाम पक्षियोंके शब्द, कर्ण और चित्तको सुखद कोकिलाओं की कूक से युक्त ९-१० वेदपाठी, फल-मूलाहारी महर्षियों के शब्दसे भी वह आश्रम कहीं कहीं अलंकृत और शोभायमान था ११ हे राजन् ! वहां राजाने उन तपस्वियोंके निमित्त भेटें दीं। सुवर्णके कलश, तांबेके घट १२ मृगचर्म, छत्र, कंबल, स्रुक्, स्तम्भ, कमण्डलु, स्थाली, पिठर १३ लोहे के पात्र और नाना प्रकारके पात्र और अन्य प्रकारके पात्र जो साधु जितने चाहता था, उसे उतनेही दिये १४ इसप्रकार सम्पूर्ण पृथ्वीके स्वामी धर्मात्मा राजा युधिष्ठिर आश्रममण्डल में घूमकर और उस धनको बांटकर लौटआये १५ तब जपादिक से निवृत्त, सावधान महाराज धृतराष्ट्र को गान्धारी समेत बैठेहुए देखा १६ धर्मात्मा युधिष्ठिर ने शिष्य के समान झुकी हुई, समीप में नियत सुकर्मियों के

आचरणों से युक्त अपनी माता कुन्ती को देखा १७ वे उन राजा की प्रतिष्ठा कर अपना नाम सुना, बैठने की आज्ञा पाकर कुशासन पर बैठ गये १८ हे भरतर्षभ! भीमसेनादिक पाण्डव भी दण्डवत् कर चरण छूकर राजाकी आज्ञा से बैठ गये १९ उन पाण्डवों के मध्य में राजा धृतराष्ट्र ऐसे शोभित हुए जैसे कि ब्राह्मणोंकी लक्ष्मी को धारण करते हुए बृहस्पतिजी देवताओं में शोभित होते हैं २० इस प्रकार उनके बैठ जानेपर शतयूप आदिक कुरुक्षेत्रनिवासी राजर्षि और महर्षिलोग वहां आये २१ देवर्षियोंसे सेवित, शिष्यों समेत महा-तेजस्वी भगवान् व्यास ऋषिने भी आकर राजाको दर्शन दिया; तब राजा धृतराष्ट्र, पराक्रमी युधिष्ठिर और भीमसेन आदिकने उठकर ऋषियोंको दण्डवत् की २२-२३ फिर शतयूप आदिक से व्यास व्यासजीने राजा धृतराष्ट्रसे कहा कि बैठो २४ व्यासजी उस उत्तम कुशासन पर, जोकि मृगचर्म से युक्त और उनके निमित्त विचारा गया था, बैठ गये २५ व्यासजी की आज्ञा से बड़े तेजस्वी वे सब श्रेष्ठ ब्राह्मण चारों ओर बिस्तरों पर बैठ गये २६ ॥

इति श्रीमहाभारतेआश्रमवासकेसप्तविंशोऽध्यायः २७ ॥

अट्ठाईसवां अध्याय।

वैशम्पायन बोले, कि महात्मा पाण्डवों के बैठ जाने पर सत्यवती के पुत्र व्यासजी ने कहा १ कि हे वीर, राजा धृतराष्ट्र! क्या तुम्हारा तप होता है और तुम्हारा मन वनवास में प्रसन्न होता है २ हे निष्पाप, राजा धृतराष्ट्र! पुत्रनाश का शोक तो तुम्हारे हृदयमें नहीं है और तुम्हारे सब ज्ञान शुद्ध हैं ३ क्या तुम दृढ़ बुद्धि से वनवासकी रीतिपर प्रसन्न होते हो और गान्धारी वधू तो शोक से पूर्ण नहीं होती ४ यह बड़ी ज्ञानवती, बुद्धिमती धर्म, अर्थ, उत्पत्ति और नाश की मुख्यता को जाननेवाली शोच तो नहीं करती है? हे राजन्! अहंकारसे रहित यह कुन्ती तुम्हारी सेवा करती है, जो पुत्रोंको छोड़ गुरुकी सेवामें तत्पर है ५-६ क्या यह बड़े मन और बुद्धिका रखनेवाला धर्मपुत्र राजा युधिष्ठिर तथा भीमसेन, अर्जुन, नकुल और सहदेवभी विश्वासयुक्त धैर्यवाले हैं ७ क्या तुम इनको देखकर प्रसन्न होते हो? क्या तुम्हारा चित्त निर्मल है? हे राजन्! क्या तुम ज्ञानी और शुद्धचित्त हो ८ हे राजन्! शत्रुता न करना, सत्यता और क्रोध न करना-ये तीन बातें सब जीवोंमें श्रेष्ठ हैं ९ हे भरतर्षभ! क्या वनवास

से तुम्हें मोह नहीं है और मूल, फलादि भोजन की वस्तुएं तुम्हारे आधीन हैं ? क्या व्रत भी होता है १० हे राजेन्द्र ! बड़े महात्मा और बुद्धिमान्, धर्मावतार विदुर का इस विधिसे लय होना भी तुमको विदित है ११ बड़े बुद्धिमान्, महायोगी, महात्मा, मनके जीतनेवाले धर्म ने माण्डव्यऋषि के शाप से विदुरका शरीर पाया था १२ देवताओंमें बृहस्पति और असुरोंमें शुक्र भी वैसे बुद्धिमान् नहीं हैं जैसे कि विदुर बुद्धिमान् थे १३ बहुत कालके सञ्चित सनातन धर्म और तपोबल को व्ययकर वे माण्डव्य ऋषिके शाप से मुक्त हुए १४ पूर्वसमय में ब्रह्माजीकी आज्ञा से वे बुद्धिमान् निजबलसे राजा विचित्रवीर्य के क्षेत्रमें मुझ से उत्पन्न हुए १५ महाराज ! वे देवताओं के भी देवता, सनातन तुम्हारे भाई थे । पण्डितोंने मनसे ध्यान कर जिसको धर्म जाना १६ जो तपसे युक्त, सनातन धर्म, सत्यता और बाह्याभ्यन्तरसे इन्द्रियजित होकर दान और अहिंसा के द्वारा अच्छी वृद्धि देता है; जिस ज्ञानी बड़े बुद्धिमान्के योगबल से कौरवराज युधिष्ठिर उत्पन्न हुआ; वह यह साक्षात् धर्मही है १७–१८ जैसे कि अग्नि और वायु सर्वत्र है और जल, पृथ्वी तथा आकाश सब स्थानों पर हैं; उसी प्रकार धर्म भी इसलोक और परलोक में नियत है १९ हे राजेन्द्र ! सब स्थावर-जंगम जगत् को व्याप्त कर सर्वत्र वर्तमान धर्म उनको दिखाई देता है जो देवताओंके भी देवता और सब पापों से रहित होकर सिद्ध हैं २० जो धर्म है, वह विदुर है; जो विदुर है, वह युधिष्ठिर है । हे राजन् ! वह धर्म का अवतार पाण्डव तुम्हारे आगे सेवक के समान मौजूद है २१ वह बुद्धिमानों में श्रेष्ठ, महात्मा, तुम्हारा भाई इस महात्मा युधिष्ठिरको देखकर; बड़े योगसे युक्त हो इसी में प्रवेश करगया २२ हे भरतर्षभ ! तुमकोभी थोड़े ही समय में कल्याणयुक्त करूंगा । हे पुत्र ! सन्देह निवृत्त करनेके लिये मुझको आया ही जाना करो २३ पूर्वसमय में जो तपरूप फलसंयुक्त अपूर्व कर्म लोकमें कहीं किसी ऋषि और महर्षियों से नहीं किया गया; वह तुमको दिखलाता हूं २४ हे निष्पाप, राजा धृतराष्ट्र ! तुम मुझसे कौनसा अभीष्ट देखना, सुनना और प्राप्त करना या पूछना चाहते हो; मैं उसको अवश्य करूंगा २५ ॥

इति श्रीमहाभारतेआश्रमवासिकेपर्वण्यष्टाविंशोऽध्यायः २८ ॥

उन्तीसवां अध्याय।

जनमेजय ने पूछा, कि कुन्ती वधू और भार्यासमेत नरोत्तम राजा धृतराष्ट्र के वनवासी होने १ विदुरजी के सिद्ध और धर्मराज में प्रवेश करने तथा आश्रम-मण्डल में सब पाण्डवों के नियत होनेपर २ बड़े तेजस्वी व्यास महर्षिने जो यह कहा, कि मैं अपूर्व कर्म करूंगा; उसे मुझसे कहिये ३ धर्म से अच्युत कौरवराज युधिष्ठिर कबतक अपने साथियों समेत वहां ठहरे रहे ४ हे निष्पाप! बतलाइये, कि वहां महात्मा पाण्डव सेना और स्त्रियों समेत क्या आहार करते थे ५ वैशम्पायनने कहा, कि हे राजन्! राजा धृतराष्ट्रकी आज्ञासे पाण्डवलोग विश्रामकर नाना प्रकारकी खाने पीनेकी वस्तुएं भोजन करतेथे ६ हे निष्पाप! उन लोगों ने सेना और स्त्रियों समेत एक महीना वनमें विहार किया। फिर वहां व्यासजी आये; उनका वृत्तान्त मैं तुमसे कहचुकाहूं ७ हे राजन्! कथाओं के द्वारा, राजाके सम्मुख व्यासजी के पास उन सबके नियत होनेपर, महातपस्वी देवल, पर्वत, नारद, विश्वावसु, तुम्बुरु और चित्रसेन प्रभृति अन्यान्य मुनि लोग भी वहां आये ८-९ तब धृतराष्ट्रसे आज्ञा पा महातपस्वी कौरवराज युधिष्ठिर ने न्यायानुसार उनका पूजन किया १० फिर वे सब युधिष्ठिर से पूजा पाकर पवित्र, श्रेष्ठ और मोर पंखों से शोभित आसनों पर बैठगये ११ हे कौरव! उनके बैठ जाने पर बुद्धिमान् राजा धृतराष्ट्र पाण्डवों के बीच में बैठ गये १२ फिर गान्धारी, कुन्ती, द्रौपदी, सुभद्रा और अन्यान्य स्त्रियां मिल कर बैठगईं १३ हे राजन्! वहां दिव्य और धर्मसे सम्बन्धयुक्त, प्राचीन ऋषियों की कथा देवता और असुरों के वृत्तान्तसे मिश्रित हुई १४ सब वेदज्ञों में उत्तम, वक्ताओं में श्रेष्ठ, महाप्रीतिमान् व्यासजीने कथा के अन्तमें बुद्धिरूप नेत्र रखने वाले राजा धृतराष्ट्रसे कहा १५ कि हे राजेन्द्र! मुझको विदित है कि पुत्रशोक से तुम्हारे जलते हुए हृदय में जो कहने की इच्छा है १६ और गान्धारीके हृदय में जो दुःख सदैव नियत है १७ और कुन्ती तथा द्रौपदीके हृदयमें जो खेद है एवं श्रीकृष्णजी की बहिन सुभद्रा पुत्रनाश के जिस कठिन दुःख को रखती है उसे मैं जानता हूं १८ हे कौरवनन्दन, धृतराष्ट्र! इसी से मैं तुम सबके इस संयोगको सुनकर १९ सन्देह दूर करने यहां आया हूं। अब ये देवता, गन्धर्व और सब महर्षि २० लोग बहुत समयके सञ्चित मेरे तपोबलको देखें। महा-

राज ! अब तुम जो कुछ कहो उस तुम्हारी प्रार्थना को पूरी करूं २१ मैं वर देने में समर्थ हूं; मेरे तपके फलको देखो । बड़े तपस्वी व्यासजी के इन वचनों को सुनकर उन राजेन्द्रने २२ एक मुहूर्त विचारकर कहा, कि मैं धन्य हूं, कृतकृत्य हूं; जो आपने मेरे ऊपर कृपा की । मेरा जीवन सफल है, जो अब यहां मेरा संयोग आप सरीखे साधुओं के साथ हुआ है । अब मैं आप महात्माकी कृपा से अभीष्ट गति को भी प्राप्त करूंगा २३-२४ हे तपोधन, ऋषियो! मैं आप सरीखे ब्रह्मरूपों से मिलकर, आपके दर्शनोंसे ही निस्सन्देह पवित्र हुआ २५ हे निष्पाप ऋषियो ! परलोकसे भी मुझको भय नहीं है । परन्तु मुझ लोभी और पुत्रों के स्मरण करनेवालेका मन उस दुर्बुद्धि अभागे दुर्योधनके अन्यायों से सदैव दुःख पाता है जिसकी पापबुद्धिसे ये पाण्डव छले गये २६-२७ और जिसके कारण ये सब संसार के लोग घोड़े हाथियों समेत नाश हुए । नाना देशों के स्वामी, राजालोग २८ मेरे पुत्रके निमित्त आकर काल के आधीन हुए। ये सब शूर अपने वृद्धों, स्त्रियों और मनसे प्यारे प्राणोंको २९ त्यागकर यमलोक को गये । हे ब्राह्मण ! जो युद्धमें मित्र के लिये मारे गये हैं उनकी कौन गति है ३० इसी प्रकार मेरे उन पुत्र पौत्रोंकी कौन गति होगी जो युद्धमें मारेगये ? शन्तुन के पुत्र बड़े पराक्रमी भीष्मजीको ३१ और ब्राह्मणों में बड़े साधु द्रोणाचार्य को मरवाकर मेरा चित्त अत्यन्त दुःख पाता है ३२ पृथ्वी का राज्य चाहनेवाले, मित्रों के शत्रु मेरे अज्ञानी पुत्रसे, यह प्रकाशित वंश विनाश किया गया । इस सबका स्मरण कर मैं अहर्निश जलता ३३ दुःख और शोकसे घायल होकर शान्ति नहीं पाता हूं ३४ वैशम्पायन बोले कि हे जनमेजय ! राजर्षिके बहुविध विलापको सुनकर गान्धारीका शोक फिर नवीन होगया ३५ कुन्ती, द्रौपदी, सुभद्रा और धृतराष्ट्र की सब वधुएं आदि स्त्री पुरुषोंका शोक फिर नवीन होआया ३६ पुत्र शोकसे व्याकुल, गान्धारीने हाथ जोड़, खड़ी होकर ससुर से कहा ३७ कि हे मुनियों में श्रेष्ठ, प्रभु, व्यासजी ! मृतक पुत्रोंके शोच में राजाके सोलहवर्ष व्यतीत हुए परन्तु शान्ति नहीं होती है ३८ हे महामुने ! पुत्रशोकसे पूर्ण बारम्बार श्वास लेतेहुए राजा धृतराष्ट्र रात्रियों में कभी नहीं सोते हैं ३९ तुम तपके बल से दूसरे लोक उत्पन्न करने में भी समर्थ हो; फिर परलोक गत राजाके पुत्रोंको दिखानेमें क्यों न समर्थ होगे ४० सब पुत्रवधुओंमें बड़ी प्यारी इस कृष्णा द्रौपदीके पुत्र और भाईआदिक मारे गये हैं, यह अत्यन्त

शोच करती है ४१ इसी प्रकार कल्याण वचन कहनेवाली, श्रीकृष्णकी बहिन, प्रीतिमती सुभद्रा अभिमन्यु के मरने से अत्यन्त शोच करती है ४२ भूरिश्रवा की अङ्गीकृत यह प्रीतिमती भार्या पतिके शोकसे अत्यन्त पीड़ित होकर अधिकता से शोच करती है ४३ इसका ससुर, बुद्धिमान् कौरव बाह्लीक बड़े युद्ध में मारा गया और पिता समेत सोमदत्त भी मारा गया ४४ आपके इन बड़े बुद्धिमान् धृतराष्ट्रके,युद्ध में मुख न मोड़नेवाले सौ पुत्र युद्धभूमिमें मारे गये ४५ उनकी ये सौ भार्याएं दुःख और शोक से व्यथित बारम्बार मेरे और राजा के शोकको बढ़ाती हैं ४६ हे महामुने ! ये सब बड़े शोकके शब्दों समेत मेरे पास रहती हैं। जो शूर, महात्मा, महारथी मेरे ससुर ४७ सोमदत्त आदिक हैं; हे प्रभो ! उनकी कौन गति है ? हे ब्राह्मणोत्तम ! ये राजा आपकी कृपासे शोकसे निवृत्त हों ४८ और इसी प्रकार मैं तथा आपकी यह कुन्ती वधू शोकरहितहों। गान्धारी के कहनेपर व्रतसे रूपान्तरित कुन्ती ने ४९ उस गुप्त जन्म लेनेवाले, सूर्य के समान तेजस्वी, पुत्र कर्णका स्मरण किया। दूरकी बातें सुनने और देखनेवाले, वरदाता व्यास ऋषिने ५० उस अर्जुन की माता देवीको महा दुःखी देखा; तब उन्हों ने उससे कहा, कि तुम्हें जो बात पूछनी है ५१ और जो तुम्हारे मनमें है; हे महाभागे ! तुम वह सब पूछो। तब प्राचीन वृत्तान्तको प्रकट करती हुई लज्जायुक्त कुन्तीने शिरसे प्रणामकर ससुरसे कहा ५२-५३ ॥

इति श्रीमहाभारतेआश्रमवासकेपर्वण्येकोनत्रिंशोऽध्यायः २९ ॥

तीसवां अध्याय।

कुन्ती बोली, कि हे भगवन् ! आप मेरे ससुर और देवताओंके भी देवता हो। हे मेरे बड़े देवता ! तुम मेरी सत्य बात सुनो १ तपस्वी, क्रोधी दुर्वासा ब्राह्मण मेरे पिताके यहां भिक्षा मांगनेके लिये आये २ निरपराधिनी मैंने अपने चित्तकी भीतरी,बाहरी पवित्रतासे और अवगुणोंके त्यागसे उनको प्रसन्न किया। कभी क्रोधके स्थान में क्रोधित नहीं हुई ३ वे अच्छे प्रकार पूजित, अत्यन्त प्रसन्नचित्त मुनि मुझे वर देनेवाले हुए। उन्हों ने मुझ से कहा, कि तुझको अवश्य वर लेना चाहिये ४ तब मैंने शापके भयसे उनसे कहा, कि जैसा आप चाहते हैं,वैसाही हो। तब उन्होंने फिर मुझसे कहा ५ हे शुभमुखि, कल्याणि ! तू धर्म की माता होगी और जिन जिन देवताओंको बुलावेगी, वे सब देवता

तेरे आधीन होंगे ६ यह कहकर वे अन्तर्धान होगये । मैं आश्चर्ययुक्त हुई; सत्य दशाओं में स्मरण शक्ति का नाश नहीं होता है ७ फिर महलकी अटारी पर चढ़कर उदय हुए सूर्यको देख मैंने ऋषिके उस वचनका स्मरणकर इच्छा की ८ लड़कपनसे मैं उस दोषको न जानती थी । इसके पीछे सहस्रांशु सूर्य देवता अपने शरीरके दो भागकर एक शरीरसे आकाश में, और दूसरे शरीरसे पृथ्वी पर मेरे सम्मुख आगये । उन्हों ने एक शरीरसे तो लोकोंको प्रकाशित किया और दूसरे शरीरसे मेरे पास आये ९-१० मेरे पास आकर कम्पायमान मुझसे कहा कि वर मांगो । मैंने उनको शिरसे प्रणाम कर कहा कि जाइये ११ इसपर तीक्ष्णांशु सूर्यने कहा, कि मेरा निरर्थक बुलाना योग्य नहीं है । मैं तुझे और उस ब्राह्मणको भस्म करूंगा जिसने तुझे वर दिया है १२ फिर उस अभीष्ट करने वाले ब्राह्मणको शापसे बचाने के लिये मैंने सूर्य देवतासे कहा कि हे देवता ! मेरा पुत्र तुम्हारे समानहो १३ तब सूर्यने तेजसे मुझमें प्रवेश किया और मुझको मोहित कर 'तेरे पुत्र होगा' यह कहकर स्वर्गको चले गये १४ फिर महलोंको भीतर, पितासे गुप्त वृत्तान्तकर मैंने गुप्त जन्म लेनेवाले अपने बालक कर्णको जलमें छुड़वा दिया १५ उस देवताकी कृपासे मैं कन्या ही बनी रही । हे वेदपाठिन् ! जैसा, कि उस ऋषिने मुझसे कहा था १६ मुझ अज्ञान स्त्री से जनाहुआ वह पुत्र भी त्यागा गया; यह बात मुझको जलाती है । यह पाप हो या न हो परन्तु मैंने उसको प्रकट कर दिया । हे भगवन् ! आप उसको दिखलाने की अभिलाषा पूर्ण करें १७-१८ हे निष्पाप, श्रेष्ठ मुने ! राजा के हृदय की इच्छा आपको विदितही है । राजाकी वह अभिलाषा अभी पूर्ण हो १९ इस प्रकार के कुन्तीके वचन सुनकर वेदज्ञोंमें श्रेष्ठ व्यासजीने उत्तर दिया कि अच्छा; यह सब प्राप्त होने योग्य है और यह इसीप्रकार है जैसा कि तुमने कहा है २० तुम्हारा अपराध नहीं हुआ; क्योंकि तुम कन्याभाव में थीं । ऐश्वर्यवान् देवता शरीरों में प्रवेश करते हैं २१ देवताओंके समूह संकल्प, दृष्टि, स्पर्श, वाणी और भोग- पांच प्रकार से सन्तान उत्पन्न करते हैं २२ हे कुन्ती ! तुमको मनुष्यधर्म में नियत होकर मोह करना उचित नहीं है । तुम्हारे मनका सन्ताप दूर हो २३ क्योंकि बलवानों के सब कर्म शुभ फलदायक हैं; बलवानों का सब पवित्र है; सामर्थ्यवानों का ही सब धर्म है, पराक्रमियों काही सब निजधन है २४ ॥

इति श्रीमहाभारतेआश्रमवासकेपर्वणि त्रिंशोऽध्यायः ३० ॥

इकतीसवां अध्याय।

व्यासजी बोले, कि हे कल्याणि, गान्धारी! तू पुत्र, भाई और बान्धवों को पिताओं समेत ऐसे देखेगी जैसे कि रात्रि बीतनेमें सोकर उठनेवालोंको देखते हैं १ कुन्ती कर्णको; सुभद्रा अभिमन्युको; द्रौपदी पांचों पुत्र, पिता आदि अपने सब भाइयों को देखेगी २ तभी मेरे हृदय में यह निश्चय हुआ था जब मुझसे राजा धृतराष्ट्र, कुन्ती और तुमने कहा था ३ वे सब नरोत्तम क्षत्रियधर्म में नियत महात्मा तुम्हारे शोचने के योग्य नहीं हैं क्योंकि गुणोंसे युक्त होकर उन सबने मरण पाया। हे निर्दोष! वह देवकार्य उसी प्रकारसे अवश्य होनहार था; इसी हेतुसे देवताओं के सब अंशों ने पृथ्वीतल पर अवतार लिया था ४-५ उन गन्धर्व, अप्सरा, पिशाच, गुह्यक, राक्षस, पवित्र मनुष्य ६ देवता, दानव और निर्मल देवर्षियोंने अवतार लिया। उन्होंने ही कुरुक्षेत्रकी युद्धभूमिमें मरण पाया ७ धृतराष्ट्र नाम से प्रसिद्ध जो बुद्धिमान् गन्धर्वराजहै, वही धृतराष्ट्र नरलोक में तुम्हारा पति है ८ पाण्डुको मरुद्गणसे जानो, जो कि श्रेष्ठतम होकर धर्मसे कभी च्युत नहीं होता था। विदुर और राजा युधिष्ठिर धर्मके अंश से उत्पन्न हुए जानो ९ भीमको वायुगण से जानो। हे शुभदर्शन! तुम दुर्योधन को कलियुग जानो; शकुनी को द्वापर और दुश्शासनादिकों को राक्षस जानो तथा इस पाण्डव अर्जुनको नररूप ऋषि जानो १०-११ श्रीकृष्णको नारायण; नकुल-सहदेवको अश्विनीकुमार जानो और हे सुन्दरि! अपने दो शरीरों से संसारको प्रकाशित करनेवाले कर्ण को सूर्यरूप जानो १२ पाण्डव अर्जुन का प्रसन्नता उत्पन्न करनेवाला, जो पुत्र अभिमन्यु छः महारथियों के हाथसे मारा गया; वह चन्द्रमाथा। अपने योगसे ही वह दोरूपोंवाला होगया था १३-१४ जो धृष्टद्युम्न द्रौपदी के साथ अग्निसे उत्पन्न हुआ; उसको अग्निका शुभभाग जानो और शिखण्डी को राक्षस जानो १५ द्रोणाचार्य को बृहस्पति का अंश और अश्वत्थामा को रुद्रसे उत्पन्न जानो। गंगाजी के पुत्र भीष्म को मनुष्य-शरीर प्राप्त करनेवाले वसुदेवता जानो १६ हे ज्ञानवति, सुन्दरि! इस प्रकार ये देवता मनुष्यशरीर पा कार्य समाप्त होनेपर स्वर्गको गये १७ परलोक के भयसे जो सबके हृदयमें दुःख बहुत काल से है; अब मैं उसको निवृत्त करूंगा १८ आप सब मिलकर गंगाजी के तटपर चलो। वहां तुम युद्धभूमि में मरे हुए सब

लोगोंको देखोगे १९ वैशम्पायन बोले, कि सब लोग व्यासजीका वचन सुनकर सिंहनाद करते हुए श्रीगंगाजी के सम्मुख चले २० धृतराष्ट्र ने अपने मन्त्री, पांचों पाण्डव, श्रेष्ठमुनि और आये हुए गन्धर्वोंसमेत यात्राकी २१ सब मनुष्यों का समूह क्रम से श्रीगंगाजी पर पहुँचा । सबने प्रीति और सुखपूर्वक वहां निवास किया २२ बुद्धिमान् राजा धृतराष्ट्रने, जिसके आगे स्त्री और वृद्ध लोग थे, पाण्डव आदि साथियों समेत अभीष्ट स्थान पर निवास किया २३ मृतक राजाओं को देखने के अभिलाषी, रात्रि की बाट देखते हुए उन लोगोंको वह दिन सौ वर्ष के समान बीता २४ जब सूर्य देवता, पर्वतों में श्रेष्ठ पवित्र अस्ताचलको गये तब उन अभिषेक करनेवालोंने सन्ध्या आदिक कर्म किये २५ ॥

इति श्रीमहाभारतेआश्रमवासकेपर्वण्येकत्रिंशोऽध्यायः ३१ ॥

बत्तीसवां अध्याय ।

वैशम्पायन बोले, कि फिर सायंकाल की सन्ध्या कर वे सब लोग रात्रिके प्रारम्भमें व्यासजी के पास गये १ धर्मात्मा, पवित्रात्मा राजा धृतराष्ट्र–पाण्डव और ऋषियों समेत व्यासजीके पास बैठ गये २ गान्धारी समेत स्त्रियां भी बैठ गईं; पुरवासी और देशवासी सब मनुष्य भी अवस्थाके क्रमसे यथायोग्य स्थानों पर बैठ गये ३ तब महातेजस्वी, महामुनि व्यासजीने श्रीगंगाजी के पवित्र जलमें प्रवेश कर सब लोगोंका आह्वान किया ४ पाण्डव और कौरवोंके जो जो शूरवीर युद्ध करनेवालेथे, वे सब और अनेक देशों के महाभाग राजाओं का ५ ऐसा कठिन शब्द जलके पास हुआ जैसा कि प्रथम कौरवीय और पाण्डवीय सेनाओं में हुआ था ६ इसके पीछे वे सब राजा लोग, जिनके अग्रगामी भीष्म और द्रोणाचार्य थे, सेनासमेत जलसे बाहर निकले ७ अपने पुत्र और सेनासमेत दोनों राजा विराट और द्रुपद बाहर निकले। द्रौपदी के पुत्र, अभिमन्यु, घटोत्कच राक्षस ८ कर्ण, दुर्योधन, महारथी शकुनी, दुश्शासन आदिक धृतराष्ट्र के महाबली पुत्र, जरासन्धके पुत्र, भगदत्त, पराक्रमी जलसिन्धु, भूरिश्रवा, शल, शल्य, अपने छोटे भाइयों समेत वृषसेन ९–१० राजपौत्र लक्ष्मण, धृष्टद्युम्नका पुत्र, शिखण्डी के सब पुत्र, छोटे भाइयों समेत धृष्टकेतु ११ अचल, वृषक, अलायुध राक्षस, सोमदत्त, बाह्लीक, राजा चेकितान १२ यह सब और अन्यान्य (जिनका अधिकता से वर्णन नहीं किया गया) बहुतसे

राजा लोग सब तेजोमय शरीर धारण किये हुए जलसे बाहर निकले १३ जिस वीरकी जो पोशाक, ध्वजा और सवारी थी; उन सब अपने चिह्नों समेत वे राजा लोग दिखाई पड़े १४ वे सब दिव्य पोशाक और प्रकाशमान कुण्डलोंसे अलंकृत थे और शत्रुता, अहंकार, क्रोध तथा ईर्षा से रहित थे। उनके आगे गन्धर्व गान करते थे, वन्दीजन स्तुति करते और दिव्य माला एवं पोशाकों से अलंकृत अप्सराओं से युक्त थे १५-१६ हे राजन्! तब प्रसन्नचित्त व्यास मुनि ने अपने तपोबलसे धृतराष्ट्र को दिव्य नेत्र दिये १७ दिव्य ज्ञान और बलसे युक्त यशस्विनी गान्धारी ने उन सब पुत्रों को और युद्ध में मारे गये अन्यान्य लोगों को भी देखा १८ आंखें बन्द न कर आश्चर्ययुक्त हो उन मनुष्यों ने अपूर्व ध्यान से रोमांच खड़े करनेवाले उस अद्भुत दृश्य को देखा १९ स्त्री पुरुषों से पूर्ण बड़े उत्सवरूप अद्भुत चमत्कार को ऐसे देखा जैसे कि कपड़ेपर खिंचे हुए चित्रको देखते हैं २०हे भरतर्षभ! मुनिकी कृपासे धृतराष्ट्र उन सबको अपने दिव्य नेत्रों से देखकर बहुत प्रसन्न हुए २१ ॥

इति श्रीमहाभारतेआश्रमवासकेपर्वणि द्वात्रिंशोऽध्यायः ३२ ॥

तेंतीसवां अध्याय।

वैशम्पायन बोले, कि इसके अनन्तर क्रोध, ईर्षा और पापों से रहित वे सब पुरुषोत्तम परस्पर में मिले। ब्रह्मर्षि व्यासजी से नियत शुभ और उत्तम विधि में नियत होकर सब स्त्री पुरुष ऐसे प्रसन्नचित्त थे जैसे कि देवलोक में देवता प्रसन्न होते हैं १-२ हे राजन्! पिता पुत्रसे; स्त्रियां पतियोंसे; भाई भाइयोंसे; मित्र मित्रों से स्नेहपूर्वक मिले ३ पाण्डव बड़ी प्रसन्नता समेत बड़े धनुषधारी कर्ण, अभिमन्यु और द्रौपदीके सब पुत्रोंसे भलीभांति मिले ४ हे राजन्! फिर प्रेमी पाण्डव कर्ण से मिलकर भायपने की प्रीति में नियत हुए ५ हे भरतर्षभ! व्यास मुनिकी कृपासे वे शूरवीर और अहङ्कार से रहित क्षत्रिय इस प्रकार परस्पर मिलकर ६ शत्रुता त्याग मित्रतामें नियत हुए। हे राजन्! इस प्रकार अच्छी रीति से सब पुरुषोत्तम कौरव और अन्यान्य राजा लोग बान्धवों के समूह और पुत्रों से मिले। इस रीति से उन प्रसन्नचित्त राजाओं ने उस रात्रि में विहार कर ७-८ पूर्ण आनन्द और विश्वाससे उस स्थानको स्वर्गभवनके समान जाना। हे भरतवंशियोंमें श्रेष्ठ! यहां परस्पर मिलनेवाले उन शूरवीरों को शोक, भय,

व्याकुलता, अप्रीति और अपकीर्ति—यह कुछ नहीं हुआ ९ पिता, भाई, पति और पुत्रों से मिलनेवाली उन स्त्रियों ने १० बड़ा आनन्द पाकर दुःख को त्यागा । वे वीर और स्त्रियां एक रात्रि विहारकर ११ परस्पर मिलकर और एक एक को पूछकर जैसे आये थे वैसे ही चले गये । इसके पीछे श्रेष्ठमुनि व्यासजी ने उन सब लोगोंको बिदा किया १२ फिर वे सब महात्मा पवित्र नदी गंगाजी में प्रवेश कर सबके देखते हुए एक क्षण में ही अन्तर्द्धान हो गये १३ रथ, ध्वजाओं समेत अपने अपने लोकोंको चले गये । कोई देवलोकको; कोई ब्रह्मलोक को चले गये १४ कोई वरुणलोक को और कोई कुबेरलोक गये । कितने ही राजाओंने यमलोक पाया १५ कोई राक्षस और पिशाचों के लोक को; कितने ही उत्तरकौरव देशोंको गये । कितनेही विचित्र गतिवाले महात्मा राजा लोग देवताओं समेत जिन लोकोंको पाकर १६ सवारी और साथियों समेत आये थे, वे भी चले गये । उन सबके चले जाने पर जल में नियत १७ धर्मके अभ्यासी महातेजस्वी कौरवोंके हितकारी महामुनि ने जिनके कि स्वामी मारे गये थे,उन सब क्षत्रियाओंसे कहा १८ कि जो जो उत्तम स्त्रियां अपने पतियोंके लोकों को चाहती हैं, वे सावधान होकर शीघ्र ही गंगाजल में प्रवेश करें १९ इसे सुनकर श्रद्धालु उत्तम स्त्रियां ससुरसे पूछकर गंगाजल में घुसीं २० हे राजन् ! तब मनुष्यशरीर त्यागकर वे पतिव्रताएं अपने अपने पतियों से जा मिलीं २१ इस क्रमसे मनुष्यशरीरको त्याग उन पतिव्रता क्षत्रियाओं ने गंगा-जल में प्रवेशकर पतियों की सालोक्यता पाई २२ वे इसप्रकार दिव्यरूप और दिव्य भूषणों से अलंकृत, दिव्य माला और वैसीही पोशाक धारण करनेवाली हुई जैसे कि उनके पति थे २३ सुन्दर स्वभावों से युक्त, थकावट से रहित, सब गुणों से संयुक्त, विमानों में नियत उन स्त्रियोंने अपने अपने स्थान पाये २४ उस समय जिसकी जो इच्छा हुई; उसे वरदाता धर्मवत्सल व्यासजी ने पूर्ण कर दिया २५ नाना देशोंके मनुष्य भी उन राजाओं के फिर आनेका वृत्तान्त सुनकर प्रसन्न हुए २६ जो मनुष्य प्रिय लोगों समेत इनके मिलापको अच्छे प्रकार सुनता है; वह इस लोक और परलोकमें सदैव अभीष्टों को पाता है २७ धर्मके ज्ञाताओंमें श्रेष्ठ जो ज्ञानी पुरुष इस कथाको सुनाताहै २८ वह इस लोकमें शुभ कीर्ति पाकर परलोकमें भी शुभगति पाता है । हे भरतवंशिन् ! वेदपाठी अथवा जपमें प्रवृत्त, तपसे युक्त २९ साधुओंके आचार और इन्द्रियजित, दान

के द्वारा पापों से मुक्त, सत्यवक्ता, पवित्र, शान्त, हिंसा और मिथ्या से पृथक् ३०-३१ ईश्वर और परलोक को माननेवाले श्रद्धालु, धैर्यवान् लोग इस अद्भुत वृत्तान्त को सुनकर परमगति पावेंगे ३२ ॥

इति श्रीमहाभारतेआश्रमवासकेपर्वणि त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः ३३ ॥

चौंतीसवां अध्याय।

सूतपुत्रने कहा, कि तब बुद्धिमान् राजा जनमेजय सब पितामहाओं के इस आवागमन को सुनकर प्रसन्न हुए १ और उन्होंने राजाओं के दुबारा आनेके विषयमें प्रश्न किया, कि शरीर त्यागनेवाले पुरुषोंका दर्शन दूसरी बार उसी रूपसे कैसे होता है २ इसे सुनकर वक्ताओं में श्रेष्ठ, ब्राह्मण, व्यासके शिष्य प्रतापी वैशम्पायन ने राजा जनमेजय को उत्तर दिया, कि ३ हे राजन्! विना भोगे सब देव-मनुष्यादिक जीवोंके कर्मोंका नाश नहीं है। सब शरीर और रूप उन कर्मोंसे ही उत्पन्न हैं ४ प्राणियोंके स्वामी ईश्वर के शरण से हार्दाकाश में नियत पुत्र-पित्रादिक अविनाशी होते हैं। उन अविनाशी शरीरों का संग विनाशवान् शरीरों के साथ सांसारिक दशामें होता है। जब अविनाशी शरीर विनाशवान् शरीर से जुदे होते हैं, तब उनका नाश नहीं होता ५ निवृत्तिनाम कर्म सत्य और श्रेष्ठ ऊपर लिखे हुए फल पाता है और प्रवृत्ति कर्मों से मिलकर आत्मा सुख दुःखादि भोगता है ६ इस प्रकार अपने स्वरूप में नियत क्षेत्रज्ञ, आतमभाव कर्म से निश्चय ही नाशके योग्य नहीं है जैसे कि हमारे शरीरोंका आत्मा नाम प्रतिबिम्ब जीवात्मा दर्पण की काई आदिक दशाको नहीं प्राप्त करता है अर्थात् उसके नाशसे नष्ट नहीं होता है; उसी प्रकार क्षेत्र और क्षेत्रज्ञका आत्मभाव भी जानना योग्य है ७ जब तक शरीरका उपजानेवाला कर्म भोग से समाप्त नहीं होता है तब तक उसमें आत्माका अध्यास है। जो मनुष्यलोक में कर्मोंसे क्षीण होता है; वह आत्मारूप होता है ८ अनात्मारूप इन्द्रिय आदिक बहुत प्रकार इस शरीरको पाकर शरीररूप हुए हैं। जो योगी इन्द्रियादिकों को शरीरसे पृथक् जानते हैं उनकी बुद्धिसे वे सब आत्मारूप होनेसे अविनाशी होते हैं ९ अश्वमेध यज्ञ में घोड़ा मारने के विषय में श्रुति है, कि उस घोड़ेके नेत्र सूर्य में और प्राण हवामें लय होते हैं; इसी प्रकार शरीरधारियोंके प्राण दूसरे लोकमें भी निश्चय ही अविनाशी

होते हैं १० हे राजन्! जो तुम्हारा इसमें अभीष्ट है, तो मैं इस सुखदायी को कहूंगा। तुमने यज्ञरचना में देवयान मार्ग सुने हैं–ज्ञान में तुम्हारा अधिकार नहीं है, इससे तुम उपासनाके साथ कर्मको प्राप्त करके देवयान मार्गमें आश्रय लो; यह तुम्हारे योग्य है ११ जिस समय तुमने यज्ञ किया था, उस समय देवता लोग तुम्हारे मित्र हो गये थे। जब देवता संयुक्त हुए तब जीवों की लोकप्राप्ति में ईश्वर हैं १२ इसी हेतुसे अविनाशी जीवात्मा यज्ञ करके अभीष्ट जीवन्मुक्ति पाते हैं। यज्ञ न करनेवाले अन्य जीव उस गति को नहीं पाते । अब ज्ञान-निष्ठा वर्णन करते हैं; जो पुरुष इस पञ्चभूतात्मक देववर्ग और आत्माके अवि-नाशी होनेपर १३ इस जीवात्माके बहुतसे रूपान्तरों को देखता है, वह निरर्थक बुद्धिवाला है और पुत्रादिके शरीर नाश होनेमें जो शोच करताहै, वह अज्ञान है; यह मेरा आशयहै १४ जो मनुष्य स्त्री आदिके वियोगमें दोष देखनेवालाहै, वह उनके संयोग को त्यागे क्योंकि असंग आत्मामें अनात्माका योग नहीं है और विना योगके वियोग क्या होगा? पृथ्वीपर प्यारेके वियोग सेही दुःख होता है १५ जिसने ज्ञाननिष्ठा को प्राप्त नहीं किया और जो केवल जीव ईश्वरकी भिन्नता का जानकार होकर शरीर के अभिमान से उपासना द्वारा पृथक् है; वह योगी सगुण ब्रह्म होकर और बुद्धिसे निर्विशेष ज्ञान पाकर मोह अर्थात् मिथ्या ज्ञानसे मुक्त होता है १६ अब उस मुक्तिका लक्षण कहते हैं जो दृष्टिसे गुप्त, शुद्ध, चैतन्य ब्रह्म है । उससे प्रकट हुआ और फिर उसीमें लय हुआ; इसी हेतुसे मैं उसको नहीं जानता हूं क्योंकि वह बुद्धि, इन्द्रिय और मनसे भी परे है और यह मुझको नहीं जानता है क्योंकि वह कारणरूप नहीं है। फिर कहो, कि तुम उस प्रकार के क्यों नहीं होते हो; इसका यह उत्तर है, कि मुझको वैराग्य नहीं है अर्थात् वैराग्य ही मोक्ष का साधन है १७ यह अस्वतन्त्र जीवात्मा जिस जिस शरीरसे जो जो कर्म करताहै, उस उस शरीर से अवश्य उसी कर्मका फल भोगता है। मनके पाप मन ही से पाता है और शरीर के पाप शरीर ही से पाता है । तात्पर्य यह है, कि शरीर वाणी और चित्तकी चंचलता को त्याग करके प्राणों का निरोध करे १८॥

इति श्रीमहाभारतेआश्रमवासकेपर्वणि चतुस्त्रिंशोऽध्यायः ३४ ॥

पैंतीसवां अध्याय ।

वैशम्पायन बोले, कि हे राजा, जनमेजय ! राजा धृतराष्ट्रने पुत्रोंको पहले आंखें न रहने से न देखा था और अब व्यासजीकी कृपासे दिव्यचक्षुओंके द्वारा सुन्दर रूपवाले पुत्रोंका दर्शन पाया १ उस नरोत्तम राजा ने राजधर्म, ब्रह्मउपनिषद् और निश्चयात्मक बुद्धि प्राप्त की २ महाज्ञानी विदुरने तपके बलसे सिद्धि पाई और फिर धृतराष्ट्रने तपस्वी व्यासजीको पाकर सिद्धि प्राप्त की ३ जनमेजय ने प्रश्न किया, कि जो वरदाता व्यासजी मेरे पिताका भी वैसा ही दर्शन करावें जैसा कि उनका रूप, पोशाक और दशा थी; वही अब भी हो तो मैं आपके सब वर्णन पर श्रद्धा करूं ४ मेरा अभीष्ट सिद्ध हो और निश्चयकर मैं अपने मनोरथ को पाऊं। उन उत्तम ऋषिकी कृपा से मेरा अभीष्ट मनोरथ प्राप्तहो ५ तब सूतपुत्र ने कहा कि राजाके यह कहचुकने पर बुद्धिमान्, प्रतापी व्यासजी ने कृपा की और परीक्षितको बुलाया ६ फिर राजा जनमेजयने उसी रूप और अपनी पूर्व दशासमेत, स्वर्गसे आनेवाले अपने पिता श्रीमान् परीक्षितको देखा ७ महात्मा शमीक ऋषि, उनके पुत्र शृङ्गी ऋषि और राजाके सब मन्त्री लोगोंको देखा राजा जनमेजयने यज्ञके अवभृथ स्नानके समय अपने पिताको देखा तो बहुत प्रसन्न होकर स्नान किया। उस समय राजा ने स्नानकरके आस्तीक ब्राह्मण से कहा, कि हे आस्तीक ! यह मेरा यज्ञ नाना प्रकार की वस्तुओं से युक्त है ८-१० क्योंकि मेरे शोकके मूलरूप पिताजी यहां आये हैं । आस्तीक ने कहा, कि हे कौरवोत्तम ! जिस यज्ञमें तपके भण्डाररूप प्राचीन ऋषि व्यासजी हैं, उस यज्ञ करनेवाले की दोनों लोकों में विजय है ११ हे पाण्डवनन्दन ! तुमने विचित्र कथा सुनी; सर्प भस्म किये और पिताकी पदवी प्राप्त करली १२ हे राजन् ! तुम्हारी सत्यता से किसी प्रकार तक्षक सर्प बचा; सब ऋषि पूजित हुए और पिताका भी दर्शन होगया १३ इस पापनाशक इतिहासको सुनकर बहुत बड़ा धर्म पाया और बड़े लोगों के दर्शनसे हृदय की गांठ खुल गई १४ जो धर्म में पक्ष नियत करनेवाले हैं, श्रेष्ठ चलन में प्रीति करनेवाले हैं और जिनको देखकर पाप दूर होता है, उनके अर्थ नमस्कार करना चाहिये १५ सूतपुत्र ने कहा, कि राजा जनमेजय ने उस उत्तम ब्राह्मण से यह सब सुनकर बारम्बार सत्कारपूर्वक उस ऋषिका पूजन किया १६ उस धर्मज्ञ राजाने वनवास

की बची हुई कथा कभी धर्मसे च्युत न होनेवाले वैशम्पायन ऋषिसे पूछी १७॥

इति श्रीमहाभारतेआश्रमवासकेपर्वणि पञ्चत्रिंशोऽध्यायः ३५ ॥

छत्तीसवां अध्याय ।

जनमेजयने पूछा, कि राजा धृतराष्ट्र और राजा युधिष्ठिरने पुत्र पौत्रोंको साथियोंसमेत देखकर क्या किया १ वैशम्पायन बोले, कि राजर्षि धृतराष्ट्र पुत्रों का अपूर्वदर्शन कर शोकसे निवृत्त हो फिर आश्रममें आये २ और अन्य सब लोग राजर्षि धृतराष्ट्र से पूछकर इच्छानुसार चले गये ३ फिर महात्मा पाण्डव—जिन के साथ में बहुत थोड़े सेनाके मनुष्य थे—स्त्रियों समेत महात्मा राजा के पास गये ४ लोकपूजित, बुद्धिमान् ब्रह्मर्षि व्यासजी ने उस आश्रम में वर्तमान धृतराष्ट्र से कहा, कि ५ हे महाबाहु, कौरवनन्दन धृतराष्ट्र! तुमने उन ज्ञानमें वृद्ध, पवित्रकर्मी, महावृद्ध, कुलके प्राचीन और वेदान्त धर्म के ज्ञाता ऋषियों के सुनते समय नाना प्रकार की कथाएं सुनीं ६—७ तुम शोक में चित्त मत करो क्योंकि बुद्धिमान् लोग होनहार में दुखी नहीं होते हैं । तुमने देवता के समान दर्शन रखनेवाले नारदजी से देवताओं के गुप्त वृत्तान्त सुने ८ जो कि शस्त्रों से पवित्र हो गये थे। इस निमित्त उन्होंने क्षत्रियधर्म से शुभ गति पाई । तुमने अपने पुत्र जिस प्रकारके देखे, वे सब उसी प्रकारसे इच्छानुसार विहार करनेवाले हैं ९ यह बुद्धिमान् युधिष्ठिर सब भाई, स्त्री और सुहृद् जनों समेत आपकी सेवामें वर्तमान है १० इसको बिदा करो । यह जाकर अपने राज्य-शासनादिक कर्म करे । इन लोगोंको वनमें रहते हुए एक महीने से कुछ ऊपर हो गया ११ हे कौरवकुलके उद्धार करनेवाले राजा धृतराष्ट्र! यह राज्यपद बहुत शत्रु रखनेवाला होकर, सदैव उपायोंसे रक्षा करनेके योग्य है १२ बड़े तेजस्वी व्यासजी से इस प्रकार समझाये जाने पर राजा धृतराष्ट्रने युधिष्ठिरको बुलाकर कहा, कि १३ हे अजातशत्रो! तुम्हारा कल्याणहो। तुम सब भाइयों समेत मेरी बात सुनो । हे राजन्! तुम्हारी कृपासे शोक हमको पीड़ा नहीं देता है १४ हे पुत्र! मैं तुम प्रियकर्मी नाथके साथ होकर इसप्रकार रमता हूं जैसे कि हस्तिनापुर में रमता था १५ तुमसे ही पुत्रभावका फल पाया; तुममें मेरी बड़ी प्रीति है । हे महाबाहो! मेरा क्रोध नहीं है; हे पुत्र! जाओ; अब विलम्ब न करो १६ यहां आपलोगोंको देखकर मेरे तपकी हानि होती है क्योंकि मैंने तपसे संयुक्त तुमको

देखकर विश्वास प्राप्त किया १७ इसी प्रकार ये तुम्हारी दोनों माताएं सूखे पत्ते खाकर मेरे समान व्रत करती हैं । हे पुत्र ! ये दोनों बहुत कालतक नहीं जियेंगी १८ मैंने व्यासजीके तपोबल और तुम्हारे मिलापसे दूसरे लोकमें वर्तमान दुर्योधनादिक पुत्रोंको भी देखा १९ हे निष्पाप ! मेरे जीवन का प्रयोजन प्राप्त हो गया । अब मैं उग्र तप अच्छी रीतिसे करूंगा । तुम मुझे आज्ञा देने योग्य हो २० अब पिण्ड, कीर्ति और यह वंश तुमसे नियत है । हे वीर बेटा ! अब जाओ अथवा प्रातःकाल जाओ; विलम्ब न करो २१ हे भरतर्षभ ! तुमने बहुत सी राजनीति सुनी है, इससे मैं तुम्हें उपदेश के योग्य नहीं देखता हूं । हे समर्थ ! तुमने मेरी बड़ी सेवा की २२ वैशम्पायन बोले, कि राजा धृतराष्ट्र का वचन सुनकर युधिष्ठिर ने कहा, कि हे धर्मज्ञ ! आप मुझ निरपराधको त्यागने योग्य नहीं हो २३ हे सावधानव्रत ! चाहे मेरे भाइयों समेत सब साथी चले जायँ; पर मैं आपके और अपनी दोनों माताओंके साथ रहूंगा २४ गान्धारीने कहा, कि बेटा ऐसा मत करो; सुनो यह कौरवकुल और मेरे ससुरका पिण्ड तुम्हारे आधीन है २५ हे पुत्र ! जाओ, इतना ही बहुत है; हम तुमसे पूजित हुए । हे बेटा ! राजाने जो तुमसे कहा है,वह पिताकी आज्ञा भी तुमको करनी चाहिये २६ वैशम्पायन बोले, कि गान्धारीसे समझाये गये युधिष्ठिर नें प्रीति के जलों से पूर्ण दोनों नेत्र पोंछकर रोती हुई कुन्ती से कहा, कि २७ राजा धृतराष्ट्र और यशस्विनी गान्धारी मुझको बिदा करती हैं । आपमें चित्त लगाने वाला महादुःखी मैं कैसे जाऊंगा २८ हे धर्मचारिणि ! मैं तुम्हारे तपके विघ्न करने में प्रवृत्त नहीं हूं क्योंकि तपसे बढ़कर कोई बात नहीं है; तपसे ही मोक्ष मिलता है २९ हे मातः ! पूर्व के समान अब मेरी बुद्धि भी राज्य में प्रवृत्त नहीं है और मेरा चित्त भी तपमें प्रवृत्त है ३० हे कल्याणि ! पूर्वके राजाओंसे रहित यह सम्पूर्ण पृथ्वी मुझे आनन्दप्रद नहीं है । हमारे बान्धवोंका नाश होगया, हमारा बल पराक्रम पूर्वके समान नहीं है ३१ पाञ्चालदेशी अत्यन्त नाशयुक्त हुए, कथामात्र बाक़ी हैं । हे कल्याणि ! उनके वंशका चलानेवाला किसी को नहीं देखता हूं ३२ वे सब युद्धभूमि में द्रोणाचार्यसे भस्म किये गये और बचे हुए, रात्रिको अश्वत्थामाके हाथ से मारे गये ३३ चंदेरीदेशी और मत्स्यदेशी भी मारे गये । हमने जिनको पहले नेत्रों से देखा, उनमें से केवल यादवोंका समूह वासुदेवजी के भाई बान्धव होने से बचा हुआ है ३४ आपको देखकर

धर्मके निमित्त नियत होना चाहता हूं; राज्यके निमित्त नहीं । हम सबको तुम कल्याणकारी दृष्टि से देखो । हमलोगोंको आपका दर्शन बड़ा दुष्प्राप्य है ३५ यह सुनकर, कि राजा धृतराष्ट्र असह्य उग्र तप प्रारम्भ करेंगे, सेना के प्रधानवीर सहदेव ने ३६ अश्रुओंसे व्याकुल नेत्र होकर युधिष्ठिरसे कहा, कि हे भरतर्षभ ! मैं माताओं के त्याग में उत्साह नहीं करता हूं ३७ प्रभो ! आप शीघ्र जाइये; मैं तप करूंगा; मैं यहीं तपसे अपने शरीरको शुष्क करूंगा ३८ राजा धृतराष्ट्र और इन दोनों माताओंकी चरणसेवामें प्रवृत्त रहूंगा । तब कुन्तीने वीर सहदेव से मिलकर कहा, कि हे पुत्र ! जाओ, ऐसा मत कहो; तुम मेरी आज्ञा का पालन करो ३९ हे बेटा ! तुम्हारे आगम कल्याणरूप हों, तुम स्थिरचित्त हो ४० यहां तुम्हारे इस प्रकार रहनेसे हमारे तपमें बाधा होगी । तुम्हारे स्नेहकी फांसी में फँसकर मेरा उत्तम तप नष्ट होजायगा ४१ हे समर्थ पुत्र ! इसी हेतुसे तुम जाओ, हमारी आयुर्दा थोड़ीही बाक़ी है । हे राजेन्द्र ! कुन्ती के अनेक प्रकार के ऐसे वचनों से ४२ सहदेव और मुख्यकर राजा युधिष्ठिर का चित्त स्थिर हुआ । फिर राजा धृतराष्ट्र और माताओं से आज्ञा लेकर पाण्डवों ने ४३ धृतराष्ट्रको दण्डवत् कर पूछना प्रारम्भ किया । युधिष्ठिरने कहा, कि हे राजन्! आपका आशीर्वाद पाकर हम राजधानीको जायँगे । तुम्हारी आज्ञा पा, पापों से रहित होकर हम जायँगे ४४ महात्मा राजा की बात सुन राजर्षि धृतराष्ट्र ने कौरव युधिष्ठिर को प्रसन्न कर आज्ञा दी ४५ राजाने बलवानों में श्रेष्ठ भीमसेन को विश्वास दिलाया और उस बुद्धिमान् पराक्रमीने भी उनको अच्छे प्रकार दण्डवत् की ४६ कौरव धृतराष्ट्रने अर्जुन समेत नकुल, सहदेवसे भी मिलकर बहुत प्रसन्न कर उनको आज्ञा दी ४७ गान्धारी से आज्ञप्त, चरणोंको दण्डवत् कर मातासे सूंघे हुए मस्तकवाले पाण्डवोंने राजा धृतराष्ट्रकी परिक्रमा की ४८ दूध पिलाने से रोकनेमें बछड़े जैसे होते हैं वैसेही बारम्बार देखते हुए उन सब ने परिक्रमा की ४९ फिर द्रौपदी आदिक कौरवीय स्त्रियां न्यायसे ससुर में भक्ति नियतकर सासको प्रणाम करके चलीं । दोनों सासों से आज्ञप्त, आशीर्वाद व शिक्षाएं पाकर वे अपने पतियों के साथ चलीं ५०-५१ फिर रथ जोड़नेवाले सूत, बलबलाते ऊंट और हींसते हुए घोड़ों के भी शब्द हुए ५२ फिर राजा युधिष्ठिर स्त्रियों, सेनाके लोगों और बान्धवोंसमेत वहांसे हस्तिनापुर आये ५३॥

इति श्रीमहाभारतेआश्रमवासकेपर्वणि षट्त्रिंशोऽध्यायः ३६ ॥

सैंतीसवां अध्याय ।

वैशम्पायन बोले, कि हे राजन्! हस्तिनापुर में पाण्डवों के दो वर्ष बीतने पर देवर्षि नारदजी राजा युधिष्ठिर के पास आये १ वक्ताओं में श्रेष्ठ कौरवराज, वीर युधिष्ठिर ने उनको पूजकर आसनपर बैठे हुए विश्वस्थ मुनि से कहा, कि २ मैं सम्मुख नियत होनेवाले आपको बहुत कालसे नहीं देखता हूं। हे वेदपाठिन्! क्या आपका कल्याण है अथवा कल्याण सम्मुख हुआ है ३ कौन देश तुमने देखे हैं, आपकी जो आज्ञा हो उसे मैं करूं। हे श्रेष्ठ ब्राह्मण! आप हमारी परम गति हो, इससे वर्णन कीजिये ४ नारदजी बोले, कि हे राजन्! मैंने तुमको बहुत दिनों में देखा है; मैं तपोवन से आया हूं। मैंने गंगाजी समेत बहुतसे तीर्थ देखे ५ युधिष्ठिर बोले, कि अब गंगा के तटपर रहनेवाले मनुष्य मुझसे कहते हैं, कि महात्मा धृतराष्ट्र बड़े तपमें नियत हैं ६ वहां धृतराष्ट्र, गान्धारी, कुन्ती और सूतसञ्जय को आपने देखा होगा। वे सब बहुत प्रसन्न हैं ७ हे भगवन्! मैं सुनना चाहताहूं, कि अब मेरे ताऊ राजा धृतराष्ट्र कैसे हैं। जो आपने राजाको देखा है, तो उनका कुशलक्षेम वर्णन कीजिये ८ नारदजी बोले, कि महाराज! तुम स्थिरचित्त होकर वह वृत्तान्त सुनो जैसा कि मैंने तपोवन में देखा और सुनाहै ९ हे कौरवनन्दन, राजा युधिष्ठिर! वनवास से आपके लौट आने पर तुम्हारे ताऊ धृतराष्ट्र कुरुक्षेत्र से हरद्वार को गये १० अग्निहोत्रयुक्त बुद्धिमान् धृतराष्ट्र गान्धारी, वधू कुन्ती, सूतसञ्जय और याजक ब्राह्मणों समेत हरद्वार में पहुँचे ११ वे तपोधन तुम्हारे ताऊ कठिन तपस्या में नियत, मुख में बीड़ा रखकर वायुभक्षी मुनि हुए हैं १२ वन में सब मुनियों से पूजित महातपस्वी उन धृतराष्ट्र ने, जिनके शरीर में अस्थिचर्म ही बाक़ी थे, छःमहीने तक व्रत किया १३ हे भरतवंशिन्! गान्धारी केवल जलका आहार करती और कुन्ती एक महीने पीछे भोजन करती है और संजय ने छठे दिन भोजन कर अपना समय व्यतीत किया १४ हे प्रभो! याजक ब्राह्मणोंने उस वनमें राजाके समक्ष और परोक्षमें विधिपूर्वक अग्निमें हवन किया १५ फिर राजा स्थानसे रहित होकर वनचारी हुए। वे दोनों देवियां और संजय भी उस के पीछे हुए १६ हे राजन्! वह संजय सम वा असम भूमि में राजाका मार्गदर्शक और निर्दोष कुन्ती गान्धारी को मार्गदर्शक हुई १७ फिर कभी म

बुद्धिमान् राजा धृतराष्ट्र कुछ गंगाके पास गंगाजी में स्नान करके आश्रमकी ओर चले १८ वायु प्रकट हुई और दावानल नाम प्रचण्ड अग्नि उत्पन्न हुई। उसने चारों ओरसे उस वनको घेरकर भस्म कर दिया १९ चारों ओर मृगों के झुंड और सर्पोंके भस्म होने एवं तड़ागादिकोंमें शूकरोंके आश्रित होने २० उस वनके जल जाने, महादुःख वर्तमान होने और आहार न करनेसे निर्बल तथा चेष्टासे रहित २१ राजा धृतराष्ट्र और अत्यन्त दुर्बल आपकी दोनों माताएं वहांसे हटनेको समर्थ नहीं हुईं। फिर विजय करनेवालों में श्रेष्ठ राजा धृतराष्ट्रने समीप आनेवाली अग्नि को ज्ञानसे जानकर २२ सूत संजयसे कहा, कि हे संजय! तुम वहां चले जाओ जहां तुमको अग्नि भस्म न करसके २३ यहां अग्निसे संयुक्त होकर हम सब परम गति पावेंगे। तब वक्ताओं में श्रेष्ठ महाव्याकुल संजयने कहा, कि २४ हे राजन्! अग्निसे वृथा भस्म होकर आपकी यह मृत्यु अप्रिय होगी और अग्निसे बचनेका भी कोई उपाय नहीं देखता हूं २५ अब यहां करनेके योग्य काम करने में विलम्ब न करना चाहिये। संजय की यह बात सुनकर राजाने कहा, कि अपने आप घर से निकलनेवाले हम सबकी यह मृत्यु अनुपकारी नहीं है। जल, अग्नि, वायु और अनशन व्रत २६-२७ ये सब कर्म तपस्वी लोगोंके लिये प्रशंसनीय होते हैं। राजा धृतराष्ट्र संजयसे यह कहकर कि "हे संजय! जाओ, देर न करो" चित्तको समाधि में नियत करके २८ गान्धारी और कुन्ती समेत पूर्वाभिमुख बैठ गये। फिर उन्हें उस प्रकार देख परिक्रमाकर २९ बुद्धिमान् संजयने कहा, कि हे प्रभो! आत्मा को परमात्मामें लय करो। बुद्धिमान् ऋषिके पुत्र राजाने वही किया ३० इन्द्रियसमूहों को रोककर काष्ठ के समान हुए। भाग्यवती गान्धारी, आपकी माता कुन्ती ३१ और आपके ताऊ राजा धृतराष्ट्र ये तीनों दावानल अग्नि में संयुक्त हुए और सूत संजय उस दावानलसे पृथक् हो गया ३२ मैंने गंगातट पर संजय को तपस्वियों में बैठा हुआ देखा। वह बुद्धिमान्, तेजस्वी, संजय यह सब वृत्तान्त वर्णन करके, उन ऋषियों से पूछकर ३३ हिमालयपर्वत को गया। हे राजन्! इस प्रकार बड़े साहसी कौरवराज धृतराष्ट्र ३४ और तुम्हारी दोनों माता-गान्धारी और कुन्ती ने मृत्यु पाई। हे भरतवंशिन्! मैंने दैवेच्छासे जलते हुए राजा ३५ और उन दोनों देवियों के शरीर देखे। फिर तपोधन ऋषि राजा धृतराष्ट्र की मृत्युको सुनकर

उस तपोवन में आये। उन्होंने उनकी गतिका शोच नहीं किया । हे पुरुषोत्तम युधिष्ठिर ! वहीं मैंने यह सब वृत्तान्त सुनाहै, कि ३६-३७ इस प्रकार से राजा धृतराष्ट्र और वे दोनों देवियां जलकर भस्म होगईं । हे राजन् ! शोच न करना चाहिये । उस राजाने ३८ और गान्धारी समेत तुम्हारी माता कुन्ती ने अपने आप ही अग्निसंयोग पाया । वैशम्पायन बोले, कि धृतराष्ट्र की स्वर्गयात्रा सुनने से सब महात्मा पाण्डवों को बड़ा शोक हुआ ३९ महाराज ! राजा की यह गति सुनकर स्त्रियों और पुरवासियों के बड़े दुःखके शब्द हुए ४० अत्यन्त दुःखी और ऊंची भुजा रखनेवाले राजा युधिष्ठिर हाय धिक्कार है हमको, यह कहकर माताका स्मरण करके रोने लगे ४१ और भीमसेन आदिक सब भाई भी रोने लगे । महाराज ! कुन्तीकी ऐसी दशा सुनकर स्त्रियों के महलों में रोने के शब्द हुए । उन सबने इस प्रकार भस्म होनेवाले वृद्ध राजाको, जिसके कि पुत्र मारे गये थे ४२-४३ और यशस्विनी गान्धारी को शोचा । हे भरतवंशिन् ! एक मुहूर्तमें ही उस शब्दके दुबारा होनेपर ४४ धर्मराज ने धैर्य से आंसू रोके ४५ ॥

इति श्रीमहाभारतेआश्रमवासकेपर्वणि सप्तत्रिंशोऽध्यायः ३७ ॥

अड़तीसवां अध्याय ।

युधिष्ठिर बोले, कि हे ब्राह्मण ! हमलोगों के होते हुए भी वन में उस घोर तपमें नियत महात्मा धृतराष्ट्र की अनाथ के समान इस प्रकार मृत्यु होने से १ ज्ञात होताहै, कि पुरुषों की गति बड़ी कठिनता से जानी जाती है । जो राजा धृतराष्ट्र उस वनकी अग्नि से भस्म हुए २ उन बाहुशाली के सौ श्रीमान् पुत्र थे । साठ हज़ार हाथियों के समान पराक्रमी वे राजा वन की अग्नि से भस्म हो गये ३ पूर्व समय में उत्तम स्त्रियों ने तालवृन्तनामक पंखों से जिसको हवा की; अब दावानल से घिरे हुए उन्हीं राजा को गृद्ध पक्षियों ने हवाकी ४ जो शयन स्थान से सूत और मागधों के द्वारा जगाये जातेथे, वे राजा मुझ पापी के कर्मों से पृथ्वीपर शयन करते रहे ५ इस प्रकार पतिव्रत में नियत, पतिलोक में वर्तमान यशस्विनी असन्तान गान्धारी को नहीं शोचता हूं ६ शोचता हूं कुन्ती को जिसने कि पुत्रों का प्रकाशमान और वृद्धियुक्त ऐश्वर्य छोड़कर वनवास स्वीकार किया ७ हमारे इस राज्य, बल-पराक्रम और क्षत्रियधर्म को

धिक्कार है जिसके कारण मृतकरूप होकर हम जीते हैं ८ हे ब्राह्मणों में श्रेष्ठ-तम नारदजी ! निश्चय ही कालकी बड़ी सूक्ष्म गति है, तभी तो कुन्ती ने राज्य त्यागकर वनवास अंगीकार किया ९ मैं यह शोचता हुआ, कि युधिष्ठिर, भीमसेन और अर्जुन की माता होकर वे कैसे अनाथ के समान अग्नि में भस्म हुईं, अचेत हुआ जाता हूं १० खाण्डव वन में अर्जुन से अग्नि देवता व्यर्थ तृप्त किये गये। उस उपकार से अनजान वह कृतघ्नी है, यह मेरा मत है ११ कपटरूप ब्राह्मण होकर भिक्षाके अभिलाषी हो अग्निदेवताने सम्मुख आ जिस स्थानपर अर्जुन की माताको भस्म किया १२ उस अग्निको धिक्कार है और अर्जुन की प्रसिद्ध सत्यसंकल्पता को भी धिक्कार है। भगवन् ! यह दूसरा बड़ा दुःख मुझे दिखाई पड़ता है १३ कि तपस्वी राजर्षि कौरव राजा धृतराष्ट्र का संयोग अग्निसे वृथा हुआ है १४ इस पृथ्वीपर राज्य करके, महावन में मन्त्रों से पवित्र अग्नियों के वर्तमान होनेपर भी उनकी इस प्रकार मृत्यु कैसे हुई १५ अग्निसे व्यर्थ युक्त होकर मेरे पिताने मृत्यु पाई। मैं मानता हूं कि हड्डियों की माला महादुर्बल कुन्ती ने १६ बड़े भयके समय अवश्य चिल्लाकर कहा होगा, कि हाय बेटा धर्मराज ! और भय से इस प्रकार पुकारती वह भस्म हुई होगी, कि हाय बेटा भीमसेन ! रक्षा करो १७ मेरी माता चारों ओरसे दावानल से घिरी हुई जलगई सहदेव उसे सब पुत्रों से अधिकतर प्यारा था १८ उस वीर सह-देवने भी उसको नहीं निकाला। यह सुनकर पांचों भाई परस्पर मिलकर ऐसे रोने लगे १९ जैसे कि प्रलय के समय जीवधारी रुदन करतेहैं। उन रोनेवाले पुरुषोत्तमों के शब्द महल की रानी आदिक स्त्रियों के रोदन से मिलकर पृथ्वी और आकाश में व्याप्त हो गये २० ॥

इति श्रीमहाभारतेआश्रमवासकेपर्वण्यष्टत्रिंशोऽध्यायः ३८ ॥

उन्तालीसवां अध्याय।

नारदजी बोले, कि हे भरतवंशिन् ! राजा धृतराष्ट्र वृथा अग्निसे भस्म नहीं हुए। वहां मैंने जैसा सुनाहै, वैसा तुमसे कहताहूं १ हमने सुनाहै, कि यज्ञ करके वनमें प्रवेश करते समय उस वायुभक्षी बुद्धिमान्ने अग्नियों का त्याग किया २ हे भरतर्षभ ! फिर उनके याजक लोग वन में अग्नियों को छोड़कर इच्छा-नुसार चले गये ३ निश्चय ही वही अग्नि वनमें फैली और उस वनको उसने

प्रज्वलित किया। वहां के तपस्वियोंने ऐसा ही कहा है ४ हे भरतश्रेठ ! राजा धृतराष्ट्र गंगाके सूखे वनमें आप ही उस अग्नि से संयुक्त हुए हैं जैसा कि मैंने कहाहै ५ हे निष्पाप,राजा युधिष्ठिर ! गंगातट पर मैंने जिन मुनियोंको देखाथा; उन्होंने मुझसे ऐसाही कहा था ६ हे राजन् ! इस प्रकार राजा अपनी ही अग्नि से संयुक्तहुए। तुम राजाको मत शोचो; उन्होंने परमगति पाई है ७ हे राजन् ! तुम्हारी माताने भी गुरुकी सेवासे निस्सन्देह बड़ी सिद्धिप्राप्तकीहै ८ हे राजेन्द्र ! तुम सब भाइयों समेत उनकी जलदान क्रिया अवश्य करो ९ वैशम्पायन बोले, कि इसके अनन्तर पाण्डवोंका धुरन्धर,नरोत्तम राजा युधिष्ठिर अपने सगे भाई और स्त्रियों को साथ लेकर चला १० एक वस्त्रसे युक्त शरीरवाले, राजभक्त पुरवासी और देशवासी गंगाजी के सम्मुख चले ११ फिर उन सब नरोत्तमोंने युयुत्सु को आगे कर जल में स्नान करके उस महात्मा के निमित्त जलदान किया १२ वहां वे नरोत्तम विधिपूर्वक नाम और गोत्रसे गान्धारी और कुन्ती के शौच कर्म को करते हुए नगर से बाहर रहे १३ उस नरोत्तम ने विधि के ज्ञाता, सत्यकर्मी ब्राह्मणों को हरद्वार में भेजा, जहां कि राजा भस्म हुएथे १४ तब राजा युधिष्ठिर ने देनेके योग्य सामान देकर मनुष्यों को आज्ञा दी कि हरद्वार में उनका क्रियाकर्म करना। बारहवें दिन शौचप्राप्त करनेवाले राजा युधिष्ठिर ने विधिपूर्वक धृतराष्ट्र आदिकों के निमित्त दक्षिणा से संयुक्त श्राद्ध किये १५-१६ राजाने धृतराष्ट्र के नाम से सुवर्ण, चांदी, गौ और बहुमूल्य की वस्तुएं दान में दीं १७ तेजस्वी राजाने गान्धारी और कुन्ती का नाम लेकर पृथक् पृथक् बहुतसे उत्तम दान दिये १८ जो मनुष्य जो जो वस्तु जितनी चाहता था वह उतनी ही पाता था। शय्या, भोजन, मणि, रत्न, धन १९ सवारी, वस्त्र, भोग और अच्छी अलंकृत दासियां राजाने दोनों माताओंका नाम लेकर दान कीं २० फिर राजा युधिष्ठिर बहुतसे दान देकर हास्तिनापुरमें आये २१ राजा की आज्ञा से हरद्वार को गये हुए मनुष्य उनकी हड्डियोंको इकट्ठा कर गंगाजी पर आये २२ वहां उन्होंने नाना प्रकार की माला और सुगन्धित वस्तुओं से उनकी हड्डियों का पूजनकर गंगा में पधराके राजा से आकर निवेदन किया। हे राजन् ! देवर्षि नारदजी भी धर्मात्मा राजा युधिष्ठिरको विश्वास देकर अपने इष्टस्थानको गये २३-२४ इसप्रकार बुद्धिमान् धृतराष्ट्रके पन्द्रहवर्ष नगरमें और तीन वर्ष वनवासमें बीते २५ जिसके पुत्र युद्ध में मारे गये थे और जो सदैव

अपने बिरादरी के और सब नातेदार आदि को दान देता था २६ जिसके ज्ञातिवालों समेत बान्धव मारे गये और जो अत्यन्त प्रसन्नचित्त न था; उस राजा युधिष्ठिर ने राज्य का सब कार्य किया २७ सावधान मनुष्य आश्रम-वास पर्वके अन्तमें भी ब्राह्मणों को उत्तम भोजन करावे २८ ॥

इति श्रीमहाभारतेशतसाहस्र्यांसंहितायांवैयासिक्यां आश्रमवासकेपर्वण्येकोनचत्वारिंशोऽध्यायः ३९॥

आश्रमवासपर्व समाप्त ।
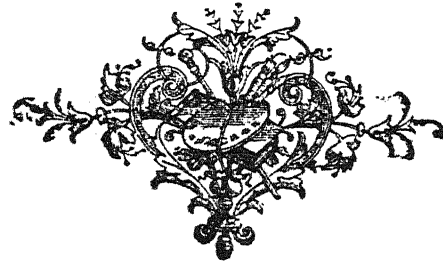
श्रीनिकुञ्जविहारिणे नमः ॥

महाभारतभाषा मुशलपर्व ।

मंगलाचरणम् ।

श्लोक ॥ नव्याम्भोधरवृन्दवन्दितरुचिम्पीताम्बरालंकृतं प्रत्यग्रस्फुटपुण्डरीकनयनं सान्द्रप्रमोदास्पदम् ॥ गोपीचित्तचकोरशीतकिरणम्पापाटवीपावकं स्वाराण्मस्तकमाल्यलालितपदं वन्दामहे केशवम् १ या भाति वीणामिव वादयन्ती महाकवीनां वदनारविन्दे ॥ सा शारदा शारदचन्द्रबिम्बा ध्येयप्रभा नः प्रतिभां व्यनक्तु २ पाण्डवानां यशोवर्ष्म सकृष्णमपि निर्मलम् ॥ व्यधायि भारतं येन तं वन्दे बादरायणम् ३ विद्याविदग्रेसरभूषणेन विभूष्यते भूतलमद्य येन ॥ तं शारदालब्धवरप्रसादं वन्दे गुरुं श्रीसरयूप्रसादम् ४ विप्राग्रणीगोकुलचन्द्रपुत्रः सविज्ञकालीचरणाभिधानः ॥ कथानुगं मौशलसुष्ठुपर्वभाषानुवादं विदधाति सम्यक् ५ ॥

पहिला अध्याय ।

श्रीनारायण नरो में उत्तम नर और सरस्वती देवी को नमस्कार कर इतिहास को वर्णन करता हूं १ आदि के पर्वों में जो धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष वर्णन किये गये हैं; उनमें से सभापर्व और वनपर्व में यज्ञ, सत्यता, धैर्य, गुरुसेवा और तीर्थसेवन आदिक सिद्ध किये; विराट् आदिक आठ पर्वों में सेवा और नीतियों का वर्णन किया और हिंसा, मिथ्या तथा कुल के विनाश का हेतु शोक होना भी सिद्ध किया; बारहवें, तेरहवें और चौदहवें पर्वों में मोक्ष के हेतु दान, विद्या और वनवासादिका वर्णन कर पन्द्रहवें पर्व में वनवास का फल वर्णन किया। अब सोलहवें पर्व में केवल संसारी सुख, ऐश्वर्यों में प्रवृत्त मनुष्य मद्यआदिके पान से उन्मत्त होकर परस्पर युद्धकर नष्ट हुए; सत्रहवें पर्व में अनिच्छा, धर्म के फल और गृहके त्याग वर्णन करेंगे और अठारहवें पर्व में परिणामफल स्वर्गका वर्णन करेंगे।

वैशम्पायन बोले, कि छत्तीसवें वर्ष कौरवनन्दन युधिष्ठिरने विपरीत शकुन देखे १ परस्पर युद्ध करने और कङ्कड़ बरसानेवाली वायु चली। उन पक्षियों ने-जिनका बाईंओर को आना शुभ है-दहिने मण्डल किये २ महानदियां उलटी चलने लगीं; दिशाएं कुहरे से ढकगईं और अंगारों की वर्षा करनेवाली उल्काएं आकाश से पृथ्वीपर गिरीं ३ हे राजन्! धूलि और आंधी से सूर्य का मण्डल गुप्त होगया और सदैव राहु के उदय तथा केतु ग्रहोंसे आकाश की शोभा विनष्ट होगई ४ सूर्य और चन्द्रमाके काले, रूखे, भस्मरङ्ग और लालवर्ण के मण्डल भयकारी दिखाई देते थे ५ हे राजेन्द्र! चित्त में भयङ्कर सन्देह उत्पन्न करनेवाले ऐसे अनेक उत्पात दिखाई देते थे ६ कुछ दिनों में कौरवराज युधिष्ठिर ने मूसल से वृष्णियों का मरण सुना ७ पाण्डव धर्मराज ने वासुदेवजी और बलदेवजी को उस विनाश से बचेहुए सुनकर भाइयों से कहा, कि अब क्या करना चाहिये ८ सब पाण्डव परस्पर मिलकर ब्राह्मणों के शापसे वृष्णियों का विनाश सुनकर पीड़ित हुए। उन वीरोंने शार्ङ्गधनुषधारी वासुदेवजीके मरने पर विश्वास नहीं किया; क्योंकि यह बात समुद्र के सूखजाने के समान असम्भव थी ९-१० पाण्डव लोग मूसलसे होनेवाले नाश को विचार कर शोक दुःख से युक्त महाव्याकुल हतसंकल्प हो बैठे ११ जनमेजयने पूछा, कि भगवन्! वासुदेवजी के रहते हुए अन्धक और भोजवंशी महारथी वृष्णियों समेत कैसे मारेगये १२ वैशम्पायन बोले, कि छत्तीसवें वर्ष वृष्णियों की बड़ी अनीति हुई। काल की प्रेरणा से, उन लोगोंने परस्पर एक दूसरे को मूसलों से मारा १३ जनमेजयने पूछा, कि किसके घोर शापसे उन वृष्णि, अन्धक और भोजवंशी वीरोंका विनाश हुआ? हे श्रेष्ठ ब्राह्मण! ब्योरे समेत मुझसे कहिये १४ वैशम्पायन बोले, कि सारण आदिक वीरों ने द्वारका में आनेवाले तपोधन विश्वामित्र, कण्व और नारदजीको देखा १५ दैवदण्डसे पीड़ित उन कुमारों ने साम्बको स्त्रीके समान अलंकृतकर सबके आगे किया और ऋषियों के पास जाकर कहा, कि १६ हे ऋषियो! बड़े तेजस्वी बभ्रुकी यह स्त्री सन्तान की इच्छा रखती है। कृपा कर अच्छी तरह बतलाइये, कि इसके क्या उत्पन्न होगा १७ हे राजन्! इस प्रकार के वचन सुनकर छलसे निरादर किये हुए उन मुनियों ने क्रोधित हो उत्तर दिया १८ उन्होंने कहा, कि यह वासुदेवजी का पुत्र साम्ब वृष्णि और अन्धकोंके नाशके निमित्त बड़ा भयकारी लोहेका ऐसा

मूसल उत्पन्न करेगा १९ जिससे अत्यन्त दुराचारी, निर्दय और अहंकारी तुम लोग श्रीकृष्ण और बलदेवजी के सिवाय सम्पूर्ण कुलभरेका नाश करोगे २० श्रीमान् बलदेवजी शरीर त्याग कर समुद्र को जायेंगे और जरा नाम बहेलिया पृथ्वीपर बैठेहुए महात्मा श्रीकृष्ण को घायल करेगा २१ हे राजन् ! उन दुराचारी दुर्बुद्धियोंसे अपमानित, क्रोधसे रक्तनेत्रवाले मुनियोंने परस्पर विचार कर यह शाप दिया । फिर उन मुनियों ने ऐसा कहकर चित्तसे केशवजीका स्मरण किया । चित्तसे प्रार्थना की, कि हमने जो शाप दिया है, इसको आप क्षमा करें २२ वंश विनाश के ज्ञाता, बुद्धिमान् श्रीकृष्णजी ने सुनते ही वृष्णियों से कहा, कि यह ऐसे ही होना था २३ जगत् के स्वामी श्रीकृष्णजी यह कहकर अपने नगरमें गये और उन्होंने भावी मरण को विपरीत न करना चाहा २४ फिर प्रातःकाल साम्बने उस मूसलको उत्पन्न किया जिससे कि वृष्णि और अन्धक कुलोंके सब मनुष्यों का नाश हुआ २५ वृष्णि और अन्धकों के नाशके अर्थ किंकर यमदूत की सूरत, भयका उत्पन्न करनेवाला, बड़ा मूसल शापसे उत्पन्न हुआ । लोगोंने वह मूसल राजा उग्रसेनके सम्मुख लाकर धरा २६ हे राजन् ! व्याकुल राजा उग्रसेनने उस मूसलके छोटे छोटे महीन टुकड़े करवाये और बुरादे को समुद्रमें डलवा दिया २७ सब लोगोंने राजा उग्रसेन, श्रीकृष्ण, बलदेवजी और महात्मा बभ्रुके वचन से नगर में मनादी करवा दी, कि २८ आजसे सब वृष्णि, अन्धकों के लोग और सम्पूर्ण नगरनिवासी मद्यपान न करें २९ जो कोई मनुष्य हमारी आज्ञा के विना ऐसा करेगा, वह अपने बान्धवों समेत शूली पर चढ़ाया जायगा ३० तब सब मनुष्योंने इसे सुगमकर्मी बलदेवजीकी आज्ञा जानकर राज्य के भयसे नियम करलिया ३१ ॥

इति श्रीमहाभारतेशतसाहस्र्यांसंहितायांमुशलपर्वणि प्रथमोऽध्यायः १ ॥

दूसरा अध्याय ।

वैशम्पायन बोले, कि इस प्रकार अन्धकों समेत नाना प्रकार के उपाय करनेवाले वृष्णियों के घरों में वह कराल, विकट मुण्डवाला, कृष्ण और पिङ्गल वर्ण का कालपुरुष सदैव भ्रमण करने लगा । वह वृष्णियों के घरों में प्रवेश करके कहीं दिखाई दिया, कहीं नहीं १-२ लाखों धनुर्धारियों ने उस काल पुरुषको बाणों से घायल किया परन्तु वह सब जीवों का नाश करनेवाला

कालपुरुष किसी प्रकार भी घायल न हुआ ३ प्रतिदिन वृष्णि और अन्धकों को महाभयकारी, रोमांच करनेवाली, बहुत कठिन वायु प्रकट हुई; मार्गों में चूहों की बड़ी वृद्धि हुई और फूटेहुए वेही मार्ग मृण्मयपात्रों से युक्त हुए । रात्रि को सोनेवाले पुरुषों के शिरके बाल और नख चूहे काट जाते थे ४-५ वृष्णियों के स्थानोंमें सारक पक्षी 'चीची', 'कूची' शब्द करते थे । बकरों ने शृगालों के समान शब्द किये ६-७ वृष्णि और अन्धकों के स्थानादिकों में काल से प्रेरित पाण्डु, आरक्तपाद और कपोत भ्रमण करने लगे ८ गौओं के पेटों से गधे उपजे और खच्चरियों में ऊंट उत्पन्न हुए ९ इतने पर भी वृष्णिलोग पाप करते हुए लज्जित नहीं हुए । वे ब्राह्मण, पितर और देवताओं से विरुद्ध हुए १० उन्होंने गुरुओंका भी अपमान किया परन्तु श्रीकृष्ण और बलदेवजी इन कामों से पृथक् थे । स्त्रियोंने पतियों को और पतियों ने स्त्रियोंको विपरीत कर्म दिखलाये ११ ज्वलित अग्नि नीली, लाल और मंजीठ रँगकी किरणों को पृथक् पृथक् प्रकट करता हुआ वामभाग में वर्तमान होता था १२ उस पुरी में सदैव उदय और अस्तके समय विना शिरके मनुष्यों से घिरा हुआ सूर्य बारम्बार मनुष्यों को दिखाई पड़ा १३ हे भरतवंशिन् ! बड़े शुद्ध आसनों पर सन्नद्ध भोजन की वस्तुओं के लाने पर हजारों कीट दिखाई पड़े १४ महात्माओं के जप करने और पुण्याहवाचन में उनके सम्मुख पुरुषों के दौड़ने की धमक सुनीजाती थी परन्तु कोई दिखाई नहीं दिया १५ उन यादवों ने बारम्बार ग्रहों से परस्पर आघातित नक्षत्रों को देखा परन्तु किसी दशा में भी अपने नक्षत्र को नहीं देखा । अपने नक्षत्रका न दीखना मृत्यु सूचक है । वृष्णि और अन्धकों के स्थानों में पाञ्चजन्य शङ्ख बजने के समय उन गधों के शब्द होने लगे कि जिनके शब्द महाभयकारी थे १६-१७ इस प्रकार समय को विपरीत देख श्रीकृष्णजी मावस के स्थानापन्न तेरस के दिन यादवों से बोले, कि १८ शुक्लपक्षमें भी एक तिथि कम हुई—चतुर्दशी को ही पूर्णिमा होगई और इस दशामें भी ग्रहण हुआ ही । महाभारत का युद्ध होनेपर ऐसा हुआ था । अब यह हमारे नाशके अर्थ आया है १९ समय को विचारते हुए केशी दैत्यके संहारकर्ता श्रीकृष्णजी ने ध्यान करके छत्तीसवां वर्ष माना २० । जिसके बान्धव मारेगये, उस पुत्रशोकसे दुखी और पीड़ित गान्धारीने जो शाप दिया था; वही शाप अब वर्तमान होकर सम्मुख आया । पूर्व समय में सेनाओं के

व्यूहित होनेपर भयकारी उत्पात देख जिसको कहा था, यह वही समय आप-हुँचा २१-२२ वासुदेवजी ने इस प्रकार कहकर तीर्थयात्रा करने के लिये आज्ञा दी २३ और सब लोगों ने केशवजी की आज्ञा से मनादी की, कि हे पुरुषोत्तमो ! तुमको समुद्र के पास तीर्थयात्रा करनी चाहिये २४ ॥

इति श्रीमहाभारतेमुशलपर्वणि द्वितीयोऽध्यायः २ ॥

तीसरा अध्याय ।

वैशम्पायन बोले, कि रात्रि के समय स्वप्न में स्त्रियों के सौभाग्य-मंगल-सूत्रादिकों को चुराती और सफ़ेद दांत निकाले, हँसती हुई काली द्वारका के चारोंओर दौड़ती थी । स्वप्न में अग्निहोत्रशाला और रहने के भवनोंमें भयानक गिद्धोंने वृष्णि और अन्धकों को घायल किया १-२ भूषण, छत्र, ध्वजा और कवच ये सब भयानक राक्षसों से लूटे हुए दिखाई पड़े ३ वृष्णियों के देखते हुए अग्निका दिया हुआ वज्रनाभि और लोहमय श्रीकृष्णजी का चक्र आकाश को चला ४ दारुक सारथीके आगे चित्तके समान शीघ्रगामी, चारों उत्तम घोड़े उस दिव्य सूर्यवर्ण के तैयार रथको लियेहुए सागरके ऊपर होकर चलेगये ५ श्रीकृष्ण और बलदेवजीसे अच्छी तरह पूजित; ताल और गरुड़जी से विचित्र बड़ी बड़ी ध्वजाओं को अप्सराओं ने ऊपरही से खींचलिया और दिनरात यही कहा, कि तीर्थयात्रा को जाओ ६ तब चलने के अभिलाषी वृष्णि और अन्धकवंशी नरोत्तमों ने बालबच्चों समेत तीर्थयात्रा चाही ७ अन्धक और वृष्णियों ने नाना प्रकार के भोजन और भक्षणकी वस्तुएं-मांस और पीनेकी मद्य आदिक वस्तुएं तैयार कीं ८ फिर बड़े सुन्दर वे लोग तेजस्वी सेनाओंके समूह, हाथी, घोड़े और रथों की सवारी से नगर के बाहर निकले ९ बहुतसी खाने पीने की वस्तुएं साथ लिये हुए यादव लोग स्त्रियों समेत राजाकी आज्ञासे प्रभासक्षेत्रमें अपने निवास-स्थानपर ठहरे १० मोक्षमें पण्डित, बड़े योगी उद्धवजी समुद्र के पास यादवोंको शीघ्र ही नाशवान् देख, उन वीरोंको बिदा करके चले गये ११ फिर वृष्णियों के नाश को जाननेवाले श्रीकृष्णजी ने हाथ जोड़कर उस महात्माको रोकना नहीं चाहा १२ मृत्युके पञ्जेमें फँसेहुए वृष्णि और अन्धक महारथियोंने तेजसे पृथ्वी और आकाशको पूर्ण करके जानेवाले उद्धवको देखा १३ उन महात्माओं का वह भोजन जो ब्राह्मणों के निमित्त तैयार हुआ था; मद्यकी गन्ध से युक्त

होनेके कारण बन्दरों को दिया गया १४ फिर प्रभासक्षेत्र में बड़े तेजस्वी यादवों का मद्यपान प्रारम्भ हुआ । वे सैकड़ों बाजों, नटों और नर्तकों से घिरे हुए थे १५ श्रीकृष्णजी के सम्मुख बलदेवजी, सात्यकी, गद और बभ्रुने कृतवर्माके साथ मद्यपान किया १६ फिर मदमत्त सात्यकी ने सभासदों के बीच कृतवर्मा को हँसकर और अपमान करके कहा, कि १७ कृतवर्मा! कौन घायल हुआ! क्षत्रिय और मृतक के समान सोनेवालों को मारे? तुम्हारा वह कर्म यादव नहीं सहसकते १८ सात्यकी के इस प्रकार कहनेपर रथियों में श्रेष्ठ प्रद्युम्न ने कृतवर्मा का अपमान कर उस वचन की प्रशंसा की १९ तब निन्दायुक्त दहिने हाथ से दिखाते हुए अत्यन्त क्रोधयुक्त कृतवर्मा ने उससे कहा, कि २० युद्ध में टूटी भुजावाला, शरीर त्यागने के निमित्त बैठा हुआ भूरिश्रवा तुझ निर्दय वीर से कैसे गिराया गया २१ यह सुनकर वीरों के मारनेवाले श्रीकृष्णजी ने तिरछी दृष्टिसे देखा २२ स्यमन्तक मणि और सत्राजितकी कथा सात्यकी ने मधुसूदन जीको सुनाई २३ जिसे सुनकर रोदन करती हुई, क्रोधयुक्त सत्यभामा श्री कृष्णजी को क्रोधित करने उनके पास आई २४ फिर क्रोधयुक्त सात्यकी ने उठकर कहा, कि हे सुन्दरि! मैं द्रौपदी के पांचों पुत्रों, धृष्टद्युम्न और शिखण्डी के मार्गपर–उनकी पदवीपर चलता हूं और शपथ खाता हूं कि जिस दुर्बुद्धि अश्वत्थामाके साथी पापी कृतवर्माने २५–२६ रात्रिको सोतेहुए वीर मारे; उसकी अवस्था और शुभकीर्ति अब समाप्त हुई २७ क्रोधयुक्त सात्यकी ने इस प्रकार कहकर केशवजीके समीप सम्मुख जाकर खड्गसे कृतवर्माका शिर काटडाला २८ तब श्रीकृष्णजी चारों ओर के अन्य मनुष्यों को भी मारनेवाले सात्यकी को रोकने के लिये दौड़े २९ महाराज! फिर समयकी विपरीतता से प्रेरित सब भोज और अन्धकवंशियों ने इकट्ठे हो सात्यकी को घेर लिया ३० समयकी गति के जानकार महातेजस्वी श्रीकृष्णजी शीघ्रता से दौड़नेवाले, क्रोधयुक्त यादवों को देखकर क्रोधित नहीं हुए ३१ मदिरा से मतवाले, मृत्युके वशीभूत उन लोगों ने उच्छिष्ट पात्रोंसे सात्यकीको घायल किया ३२ उसके घायल होनेपर क्रोध युक्त और सात्यकी के छुड़ानेके अभिलाषी प्रद्युम्न उनके मध्यमें आये ३३ वह सात्यकी भोज और अन्धकों से घिर गया । भुजपराक्रम से शोभायमान वे दोनों वीर ३४ श्रीकृष्णजी के देखते हुए शत्रुओं की अधिकता से मारे गये । यदुनन्दन केशवजीने सात्यकी समेत अपने पुत्रको मृतक देखकर ३५ क्रोधसे

एक साथ ही पटेलों को हाथमें लिया। उनके इकट्ठे मिलने से भयानक वज्रके समान वह लोहे का मूसल हुआ। श्रीकृष्णजी ने उसीसे उन सब आगे आने वालों को मारा। तदनन्तर कालसे प्रेरित अन्धक, भोज, शिनी और वृष्णि-वंशियों ने ३६-३७ युद्धमें परस्पर मूसलों से मारा। हे राजन्! उनमें से जिस किसी क्रोधयुक्त ने पटेले को लिया, वह वज्ररूप दिखाई पड़ा। हे समर्थ, राजा जनमेजय! वहां तृण भी मूसलरूप दीखा ३८-३६ यह ब्रह्मशाप सेही ऐसा हो गया था। जिस तृणको फेकते थे, वह अवध्योंको भी मारता था ४० हे भरतवंशिन्! तब वह मूसल वज्ररूप देखने में आया। पुत्रने पिताको और पिताने पुत्रको मारा ४१ मदिराके मदसे अचेत परस्पर युद्ध करनेवाले वे कुकुर और अन्धकवंशी चारों ओर दौड़े और ऐसे गिरे जैसे कि पतंग अग्नि में गिरते हैं। वहां किसी घायलने भी भागने की बुद्धि नहीं की ४२ उस स्थानपर मधुसूदनजीने जिस मूसल को देखा; उसे ही पकड़कर नियत हुए ४३ माधवजी साम्ब, चारुदेष्ण, प्रद्युम्न और अनिरुद्धको मराहुआ देखकर क्रोधयुक्त हुए ४४ पृथ्वीपर गिरेहुए गदको देखकर अत्यन्त क्रोधयुक्त शार्ङ्गधनुषधारीने बचेहुओं का भी नाश कर दिया ४५ शत्रुओं के पुर जीतनेवाले, महातेजस्वी बभ्रु और दारुकने उन मारनेवाले श्रीकृष्णजी से ४६ कहा, कि हे भगवन्! तुमने बहुत से मनुष्य मारे अब बलदेवजी की खोज करें और जहां वे हों, वहीं चलें ४७॥

इति श्रीमहाभारतेमुशलपर्वणि तृतीयोऽध्यायः ३॥

चौथा अध्याय।

वैशम्पायन बोले, कि इसके पीछे शीघ्रगामी दारुक, केशव और बभ्रु तीनों बलदेवजी की खोज में निकले। उन्होंने अतुल पराक्रमी बलदेवजी को एक वृक्षके नीचे एकान्त में ध्यानमग्न देखा १ श्रीकृष्णजीने महानुभाव बलदेवजी को पाकर दारुक को आज्ञा दी, कि तुम कौरवों के पास जाकर यादवों के इस बड़े विनाश का वृत्तान्त अर्जुन से सुनाओ २ ब्रह्मशापसे यादवोंको मरा हुआ सुनकर अर्जुन शीघ्रता से यहां आवेगा। इस प्रकार आज्ञा पाकर बुद्धिमान् दारुक रथकी सवारी से कुरुदेशों को गया ३ दारुक के चले जानेपर केशवजीने बभ्रु से कहा, कि तुम शीघ्रतासे स्त्रियोंकी रक्षाको जाओ। चोर मनुष्य धनके लोभ से कहीं उनको न मारें ४ केशवजी की आज्ञा से, मदोन्मत्त बिरादरी के मरने से

पीड़ित बभ्रु वहां से चला तो लुब्धकके लौह मुद्गर में संयुक्त, ब्रह्मशाप से उत्पन्न, मूसलने अकस्मात् केशवजीके सम्मुख विश्राम लेनेवाले अकेले बभ्रुको मारा ५ तब बड़े तेजस्वी श्रीकृष्णने बभ्रुको मरा हुआ देखकर बड़े भाई से कहा, कि हे बलदेवजी ! मैं जबतक स्त्रियां अपनी बिरादरीवालों को सौंप न आऊं तबतक तुम यहीं बैठे बैठे मेरी बाट देखना ६ फिर जनार्दनजीने द्वारकामें प्रवेशकर अपने पिता से कहा, कि आप अर्जुनके आनेतक हमारी सब स्त्रियों की रक्षा करें ७ वनमें बलदेवजी मेरी बाट देखते हैं; अब मैं उनसे मिलूंगा । मैंने प्रथम राजा और कौरवों का तथा अब यह यादवोंका नाश देखा है ८ अब मैं यादवों के बिना इस यादवपुरी को देखने में भी समर्थ नहीं हूं । मैं बलदेवजी के साथ वन में जाकर तप करूंगा ६ श्रीकृष्णजी ऐसा कहकर पिताके चरणों को शिर से स्पर्श करके शीघ्रही चले गये । इसके पीछे स्त्रियां और बालकों के उस नगरी में बड़े शब्द हुए १० केशवजी ने शोकयुक्त रोनेवाली स्त्रियोंके शब्द सुनकर, वहां से फिर लौटकर कहा, कि अर्जुन इस पुरी में आवेगा । वह नरोत्तम तुम को दुःखोंसे छुटावेगा ११ यह कह, केशवजीने वन में जाकर एकान्तमें अकेले बैठेहुए बलदेवजी को देखा फिर योग से संयुक्त बलदेवजी के मुखसे निकलने वाले बड़े भारी श्वेत सर्पको देखा १२ अपने शरीर को छोड़कर रक्तमुख, सहस्र शिरधारी, पर्वतस्वरूप, महानुभाव शेषनागजी समुद्र की ओर गये १३ उनको देखकर समुद्रने अभ्युत्थानपूर्वक स्वागत किया और दिव्य, नाग, पवित्र नदियां, कर्कोटक, वासुकी, तक्षक, पृथुश्रव, वरुण, कुञ्जर १४ मिश्री, शंख, कुमुद, पुण्डरीक, महात्मा धृतराष्ट्र, नागह्राद, क्राथ, बड़ा तेजस्वी शितिकण्ठ, चक्रमद, अतिखण्ड १५ नागोंमें श्रेष्ठ दुर्मुख, अम्बरीष और स्वयं राजा वरुणने भी उनकी अगवानी की; कुशलक्षेम पूछकर उनको प्रसन्न किया । उन सबने अर्घ्य पाद्यआ-दिक क्रियाओंसे उनका पूजन किया १६ फिर भाईके चले जानेपर सब गतियों के ज्ञाता दिव्यदृष्टिवाले महातेजस्वी निर्जन वन में घूमते और चिन्ता करते हुए वासुदेवजी पृथ्वीपर बैठगये १७ जब गान्धारीने कहा था तभी श्रीकृष्णजी ने विचार लिया था और उच्छिष्ट खीरको शरीर में मलने पर जो वचन दुर्वासा ऋषिने कहा था, उसको भी स्मरण किया १८ फिर अन्धक, वृष्णि और कौरवों के नाश को शोचते हुए उन महानुभावने परमधाममें जाने का अपना समय मान इन्द्रियों का निरोध किया १९ सब अर्थ और तत्त्वके जाननेवाले देवता

श्रीकृष्णने भी त्रिलोकीके पालनार्थ दुर्वासा ऋषिके वचनकी रक्षाके लिये अपने शरीर को त्यागने की शुद्धता चाही २० वाणी और मनको रोककर श्रीकृष्ण जी महायोग को प्राप्तकर सोगये । तब भयंकर शिकार करने की इच्छासे 'जरा' लुब्धक उस स्थानपर आया २१ मृग की शंका कर उस लुब्धक ने योग से संयुक्त सोनेवाले केशवजी के पैरके तलुये को बाणसे घायल किया और उसे पकड़ने की अभिलाषा से बड़ी शीघ्रता से वहां गया २२ वहां उस लुब्धक ने योगसे संयुक्त, पीताम्बरधारी, अनेक भुजाएं रखनेवाले पुरुषको देखा; तब भय-भीत 'जरा' व्याधने अपने को अपराधी मानकर उनके दोनों चरणों को पकड़ लिया २३ उन महात्माजीने उसको विश्वास कराया, कि तुम अपने स्वभावसे पृथ्वी और अकाश को पूर्णकर ऊपर के लोकोंको जाओ । तुमने स्वर्ग प्राप्त किया । इन्द्र, अश्विनीकुमार, ग्यारह रुद्र, द्वादश सूर्य, अष्टवसु, विश्वेदेवा २४ उत्तम अप्सराओं समेत सिद्ध, मुनि, गन्धर्व उनको आगेसे लेनेको आये । हे राजन्! फिर षडैश्वर्य के स्वामी, बड़े तेजस्वी, अन्तर्यामी, उत्पत्ति और प्रलय के आश्रय स्थान २५ योगाचारी, अचिन्त्य प्रभाववाले श्रीकृष्णजी ने अपने प्रकाश से पृथ्वी और आकाशको व्याप्तकर अपना लोक पाया । हे राजन्! देवता, ऋषि और चारणों से युक्त श्रीकृष्णजी २६ झुके हुए गन्धर्वराज, श्रेष्ठ अप्सराओं और साध्यों से पूजित देवताओं ने भी उस ईश्वरकी स्तुति की । श्रेष्ठ मुनियोंने ऋग्वेद की ऋचाओंसे स्तुति की और प्रशंसा करनेवाले गन्धर्व भी उनके सम्मुख हुए तथा इन्द्रने प्रीतिसे उनको प्रसन्न किया २७ ॥

इति श्रीमहाभारतेमुशलपर्वणिचतुर्थोऽध्यायः ४ ॥

पांचवां अध्याय ।

वैशम्पायन बोले, कि दारुकने कौरवोंसे मिलकर महारथी पाण्डवोंसे मूसल के द्वारा वृष्णियों के नाश होजाने का वृत्तान्त वर्णन किया १ भोज, अन्धक और कुकुरोंसमेत मरनेवाले वृष्णियोंको सुनकर शोकसे दुखी पाण्डव भयभीत हुए । फिर केशवजी का प्यारा मित्र अर्जुन मामाके देखनेको चला और कहा, कि यह इस प्रकार नहीं है २—३ हे जनमेजय! उस वीर अर्जुनने दारुकके साथ द्वारकामें जाकर अपने मामाको विधवा स्त्रीके समान देखा ४ पहले लोकनाथ से सनाथ, पर अब अनाथ स्त्रियां अर्जुन को देखकर पुकारीं ५ वासुदेवजी की

सोलह हजार स्त्रियों ने अर्जुन को देखकर बड़ी पुकार मचाई ६ अश्रुपातों से पूर्णनेत्र अर्जुन श्रीकृष्ण और पुत्रोंसे रहित स्त्रियोंको देखते ही उन्हें देखने में समर्थ नहीं हुआ ७ बुद्धिमान् अर्जुनने वैतरणी नदीके समान भयानक द्वारका रूपी नदीको देखा। उसमें वृष्णि और अन्धकरूपी जल था; घोड़ेरूपी मत्स्य, रथरूपी घिर्नई, महलरूपी तीर्थ और बड़े ह्रद थे ८ उसमें रत्नरूप शैवाल, वज्रसे बने हुए, परकोटारूपी माला, मार्गरूप भिरना और भवँरथे; चौराहेरूपी तालाब, श्रीकृष्ण और बलदेवजी बड़े ग्राह तथा कबन्धरूपी मगर थे। वह नदी बाजे और रथों के शब्दों से शब्दायमान थी ९-१० इस प्रकारसे उत्तम उस द्वारका पुरीको अर्जुनने वृष्णियों से रहित ऐसी शोभाहीन और आनन्दविहीन देखा जैसे कि शिशिर ऋतुमें कमलिनी अशोभित होती है ११ उन स्त्रियोंके करुणा शब्दसुनकर और द्वारकाकी दशा देख अर्जुन ज़ोर से विलाप कर अश्रुपातों समेत पृथ्वीपर गिरपड़े १२ इसके अनन्तर सत्राजित् की पुत्री सत्यभामा और रुक्मिणीजी समीप आकर रोने लगीं १३-१४ फिर पाण्डव अर्जुन गोविन्दजी की स्तुति और कीर्तनकर स्त्रियों को दिलासा दे मामाजी को देखने गये १५ ॥

इति श्रीमहाभारतेमुशलपर्वणि पञ्चमोऽध्यायः ५ ॥

छठा अध्याय ।

वैशम्पायन बोले, कि अर्जुन ने महात्मा वसुदेवजी को पुत्रशोक से दुखित, शयन करते हुए देखा १ अश्रु से पूर्ण नेत्र, बड़ी छाती और भुजाओंवाले बड़े पीड़ित अर्जुनने दुखी वसुदेवजी के चरण पकड़े २ शत्रुनाशक, महाबाहु वसुदेवजीने अपनी भगिनी के पुत्र का मस्तक सूंघना चाहा परन्तु सूंघने में समर्थ न हुए ३ सब पुत्र, भाई, पोते, भानजे और मित्रोंको स्मरण कर रोते हुए महाबाहु वृद्ध वसुदेवजी ने भुजाओं से अर्जुन को लपेट कर विलाप किया ४ वसुदेवजी बोले, कि हे अर्जुन! जिन्होंने राजाओं और सैकड़ों दैत्योंको जीता; उनको अब यहां फिर नहीं देखता हूं और कठिनता से मरने वाला मैं जीता हूं ५ हे अर्जुन! तुम्हारे बड़े प्यारे शिष्य प्रद्युम्न और सात्यकी के अन्याय से सब वृष्णि मारे गये ६ तुम बात चीत में भी जिनकी प्रशंसा किया करते थे; वे वृष्णि वीरों के अतिरथी प्रद्युम्न और सात्यकी मारे गये ७

हे श्रेष्ठ कौरव ! वे दोनों सदैव श्रीकृष्ण के प्रियकारी और बड़े प्रधान थे ८ हे अर्जुन! मैं सात्यकी, कृतवर्मा, अक्रूर और प्रद्युम्नकी निन्दा नहीं करता हूं। इसमें केवल ब्रह्मशाप ही मुख्य कारण था ९ क्योंकि जिस जगत्‌के प्रभुने पराक्रमके बलसे अहंकारी शिशुपाल, केशी और कंसको मारा १० निषादों के राजा एकलव्य, कलिङ्ग देशों के राजा, मगध, गान्धार, काशी और मरुभूमिके राजाओं को मारा ११ उसी प्रकार पूर्वीय, दक्षिणीय और पहाड़ी राजाओंको भी मारा; उन मधुसूदन ने वंशके लड़कों के अपराध से इस वंशभरेके नाशका विचार नहीं किया १२ उस प्रभु विष्णुने अपने बिरादरीवालों के नाशको जाना परन्तु उस मेरे पुत्रने सदैव उसका विचार नहीं किया १३-१४ हे परन्तप ! गान्धारी और ऋषियों के वचन को उस जगत्पति ने मिथ्या करना नहीं चाहा १५ हे परन्तप ! तुम स्वयं जानते हो, कि अश्वत्थामाके अस्त्र से मृतक तुम्हारा पौत्र भी उसीके तेज से जीता है १६ उस तुम्हारे मित्रने अपने सजातियोंकी रक्षा करना न चाहा। फिर इन पुत्र, पौत्र, भाई और मित्रोंको १७ पृथ्वी पर मृतक देखकर मुझसे कहा, कि अब इस कुलका नाश वर्तमान हुआ १८ सो इस द्वारकापुरी में अर्जुन आवेगा; उससे वृष्णियों के इस बड़े नाशका वृत्तान्त तुमको कहना चाहिये १९ हे प्रभो ! महातेजस्वी अर्जुन यादवोंका नाश सुनकर निस्सन्देह शीघ्र ही आवेगा। मुझे ही अर्जुन जानो और जो अर्जुन है, सो मैं हूं। वह जो आपसे कहै, उसको उसी प्रकार करना आपको योग्य है। हे भरतर्षभ, अर्जुन ! श्रीकृष्णके ऐसे वचन जानो २०-२१ पाण्डव अर्जुन समय पर आकर स्त्री बालकों समेत आपका क्रियाकर्म करेगा २२ यहां से अर्जुन के चले जाने पर परकोटा और अट्टालिकाओं समेत इस नगरको शीघ्र ही समुद्र डुबा देगा २३ मैं सच कहता हूं, कि किसी पवित्र देशमें बुद्धिमान् बलदेवजी समेत नियममें प्रवृत्त होकर शरीर त्यागूंगा २४ बुद्धि से परे पराक्रमी केशवजी मुझसे ऐसा कहकर और बालकों समेत मुझे छोड़कर किसी दिशाको चले गये २५ सो मैं उन दोनों तेरे भाइयों को और बिरादरी के भयकारी नाशको शोचता हुआ शोकग्रस्त होकर भोजन नहीं करता हूं २६ हे पाण्डव, अर्जुन ! मैं न तो भोजन ही करूंगा और न जीता रहूंगा। तुम प्रारब्ध से आ गये हो; अब तुम श्रीकृष्ण की कही हुई सब बातें पूर्ण करो २७ हे अर्जुनरूप, श्रीकृष्ण ! यह राज्य, स्त्री और रत्नादिक सब तुम्हारे हैं। मैं तो अब अपने प्यारे प्राणोंको त्यागूंगा २८॥

इति श्रीमहाभारतेमुशलपर्वणि षष्ठोऽध्यायः ६ ॥

सातवां अध्याय ।

वैशम्पायन बोले, कि हे परन्तप ! मामा के ये वचन सुनकर महादुखी अर्जुनने दुखीचित्त वसुदेवजी से कहा, कि १ हे मामाजी ! मैं यहां किसी दशामें भी श्रीकृष्ण और बान्धवों से रहित पृथ्वीको देखनेमें भी समर्थ नहीं हूं २ राजा युधिष्ठिर, पाण्डव भीमसेन, सहदेव, नकुल, मैं और द्रौपदी हम छहोंका एक मनहै ३ हे कालविदांवर ! निश्चय ही राजा युधिष्ठिर के भी राज्य त्यागनेका समय वर्तमान है । उसे भी अब मौजूद ही समझो ४ हे शत्रुओं को जीतने वाले ! मैं सब प्रकारसे वृष्णियोंकी स्त्रियों, बालकों और वृद्धाओं को साथ लेकर इन्द्रप्रस्थमें पहुँचाऊंगा ५ फिर अर्जुनने दारुक से कहा, कि मैं वृष्णि वीरोंके मन्त्रियोंको देखना चाहता हूं; विलम्ब मत करो ६ शूर अर्जुन उन महारथियों को शोचता हुआ यादवोंकी सुधर्मा नामकी सभा में पहुँचा । वहां सब मन्त्री और ब्राह्मण आसनोंपर बैठे हुए अर्जुनको मध्यवर्ती करके सम्मुख हुए ७-८ अत्यन्त दुखी अर्जुनने, उन दुखीचित्त सब सावधान लोगोंसे कहा, कि ९ मैं आप वृष्णि और अन्धकों के बालबच्चों को इन्द्रप्रस्थ लेजाऊंगा । इस सब नगरको समुद्र डुबादेगा १० अब तुम नाना प्रकारके रत्नोंसमेत सवारियां तैयार करो । यह वज्रनाभ इन्द्रप्रस्थ में आपलोगों का राजा होगा ११ हम सब सातवेंदिन सूर्य के उदय होने पर नगरसे बाहर निवास करेंगे । अब शीघ्र तैयारी करो, विलम्ब न करो १२ सुगमकर्मी अर्जुनके वचन सुनकर उन सबने शीघ्र ही तैयारी की क्योंकि वे सभी अपनी सिद्धिके इच्छुक थे १३ बड़े शोक और मोह से पूर्ण अर्जुन उस रात्रिको केशवजी के स्थानपर रहे १४ फिर प्रातःकाल शूरके पुत्र प्रतापी महातेजस्वी वसुदेवजी ने आत्माको परमात्मा में लीन कर उत्तमगति पाई १५ फिर कठिन रोनेका बड़ा शब्द वसुदेवजी के महलमें हुआ १६ शिरके बाल खुले; भूषण, माला आदिक त्यागने वाली; हाथों से छाती पीटनेवाली सब स्त्रियों ने करुणापूर्वक महाविलाप किया १७ स्त्रियों में श्रेष्ठ देवकी, भद्रा, रोहिणी और मदिरा अपने पति वसुदेव की चिताके पास आईं १८ हे भरतवंशिन् ! अर्जुनने वसुदेवजी को बड़े बहुमूल्य विमानमें बहुतसे मनुष्यों और गाजे बाजेके साथ निकाला १९ दुःख और शोकसे महापीड़ित द्वारकावासियों और पुरवासियों के अनेक यूथ उनके साथ चले २० फिर उस सवारीसे आगे

अश्वमेध सम्बन्धी उनका छत्र, ज्वलन्त अग्नियां और याचक ब्राह्मण चले। अच्छी अलंकृत वे देवियां हज़ारों विधवाओं समेत उस वीरके पीछे चलीं २१-२२ उन्होंने उस महात्माके प्रिय स्थान पर जाकर स्थानका निर्णय करके उस महात्माका पितृयज्ञ किया २३ पतिलोकको चाहनेवाली वे चारों स्त्रियां उस अग्निकी चितामें बैठकर उस वीर वसुदेवके साथ सती हुई। पाण्डव अर्जुन ने चारों स्त्रियों समेत वसुदेवजी का चन्दन आदि अनेक सुगन्धित वस्तुओं से दाह किया २४-२५ इसके पीछे बढ़ी हुई अग्नि, सामग ब्राह्मण और रोनेवाली स्त्रियोंके शब्द हुए २६ फिर वृष्णि और अन्धकों के वज्रप्रमुख सब कुमारों और स्त्रियों ने उन महात्माको जलदान किया २७ हे भरतर्षभ ! तब अर्जुन उस कर्म को कराकर जहां वृष्णिलोग मारे गये थे वहां गये २८ वहां युद्ध में उनको गिरा हुआ देखकर अर्जुन अत्यन्त दुखी हुआ। समय और प्रधानता के अनुसार विधिपूर्वक उनके भी क्रिया कर्म किये जो कि ब्रह्मशापके कारण पटेलों से उत्पन्न मूसलों से मारे गये थे २९-३० फिर अर्जुन ने वासुदेव और बलदेवजी के शरीरों को खोजकर सत्य और ठीक कर्म करनेवाले आप्त-पुरुषों के द्वारा उनका दाह कराया ३१ पाण्डव अर्जुन विधिपूर्वक उनकी क्रिया और कर्म करके सातवें दिन बड़ी शीघ्रता से रथ में सवार होकर चला ३२-३३ फिर रोदन और शोकसे युक्त वृष्णिवीरों की स्त्रियां घोड़े, बैल और खच्चरों से जुते हुए रथों की सवारियों में महात्मा अर्जुन के पीछे चलीं। अन्धक और वृष्णियोंके सेवक, टहलुये, सवार, रथी, सब पुरवासी और देशवासी; वीरोंसे रहित वृद्ध, बालक और स्त्रियोंको चारों ओरसे घेरकर अर्जुनकी आज्ञा से चले ३४-३५ हाथी के सवार पर्वताकार हाथियों की सवारी से, हाथी के चरणरक्षक और शस्त्रधारी मनुष्यों समेत चले। अर्जुन के साथी, अन्धक और वृष्णियों के सब पुत्र, ब्राह्मण, क्षत्रिय, बड़े धनी वैश्य शूद्र ३६-३७ और बुद्धिमान् वासुदेवजीकी सोलह हज़ार रानियां अपने पोते वज्रनाभको आगे करचलीं ३८ भोज, अन्धक और वृष्णियों की असंख्य अनाथ स्त्रियां द्वारका से बाहर निकलीं ३९ शत्रुओं के पुरों का जीतनेवाला, रथियों में श्रेष्ठ अर्जुन समुद्रके समान बड़े धनसे युक्त स्त्रियोंके समूहोंको ले चला ४० तब उन मनुष्यों के निकल जाने पर समुद्रने सब रत्नोंसे पूर्ण द्वारका को डुबो दिया ४१ पुरुषो-त्तम अर्जुन ने पृथ्वीके जिस जिस भागको त्यागा उस उस स्थान को समुद्रने

जलमें छिपालिया ४२ द्वारकावासी लोग यह अपूर्व चमत्कार देखकर होनहार को अद्भुत मान शीघ्रता से चल दिये ४३ अर्जुन क्रीड़ाके योग्य वन, पर्वत और नदियों पर निवास कर वृष्णियों की स्त्रियों को ले आये ४४ धनसमूहोंवाले बुद्धिमान् अर्जुनने पञ्चनदमें गौ, पशु और धान्यों से पूर्ण देशमें अपना निवास किया ४५ हे भरतवंशिन् ! इसके अनन्तर अकेले अर्जुनके साथ उन विधवा स्त्रियोंको देखकर चोरोंको बड़ा लालच हुआ ४६ उन पापी, लोभसे हतबुद्धि अशुभदर्शन भीलोंने अपने मन्त्रियों से सलाह की, कि ४७ यह धनुषधारी अकेला अर्जुन हमको उल्लंघनकर अनाथ, वृद्ध और बालकोंको लिये जाताहै। ये सब वीर पराक्रमहीन हैं ४८ फिर हाथ में यष्टिरूप शस्त्र धारण करनेवाले हज़ारों चोर वृष्णियोंकी स्त्री आदिकोंकी ओर दौड़े ४९ और प्रत्येक मनुष्य को सिंहनादों से भयभीत कर समय की विपरीतता से प्रेरित चोर मारनेको सम्मुख आये ५० तब वह अर्जुन अपने साथियों समेत अकस्मात् लौटा और उसने हँसकर उनसे कहा, कि ५१ हे धर्मके न जाननेवालो ! जो अपना जीवन चाहतेहो, तो चलेजाओ; नहीं तो मेरे बाणोंसे घायल और टूटेअंग होकर शोच करोगे ५२ उस वीरसे इसप्रकार कहे और बारम्बार रोकेजानेपर भी वे अज्ञानी उसके वचन का तिरस्कारकर मनुष्योंके सम्मुख दौड़े ५३ तब अर्जुनने विपरीत दशासे रहित दिव्य धनुष को चढ़ाना प्रारम्भ किया; पर अनेक उपायोंसे किसी प्रकार भी वह तैयार न हुआ और कठिन भय होनेपर शस्त्रोंका स्मरण किया तो उनको भी स्मरण न करसका ५४–५५ भयसे उत्पन्न, उस बड़ी व्याकुलताको और युद्धमें उस प्रकारके अपने भुजबलको देखकर, दिव्य महाअस्त्रोंके भूलजानेसे अर्जुन लज्जित हुआ ५६ हाथी, घोड़े और रथकी सवारीसे लड़नेवाले वृष्णियोंके शूरवीर उन नाश होनेवाली स्त्रियोंको बचाने में समर्थ नहीं हुए ५७ अधिक स्त्रियों के जहां तहां दौड़ने पर अर्जुन ने उनकी रक्षामें बड़े बड़े उपाय किये ५८ फिर सब शूरवीरों के आगे ही वे उत्तम स्त्रियां चारों ओर खींची गईं और बहुतसी स्वेच्छा से अपने आप चली गईं ५९ फिर व्याकुलता पूर्वक पाण्डव अर्जुन ने वृष्णियोंके नौकरों की सहायता से गाण्डीवधनुष से बाण छोड़कर चोरों को मारा ६० हे राजन् ! उसके वे बाण एक क्षणभर में ही चुक गये। पूर्व समय में रुधिर के पीनेवाले वे अविनाशी बाण अब नाशवान् हो गये ६१ उस इन्द्र के पुत्रने अपने बाणोंको नाशवान् देख शोक और दुःख से व्यथित हो धनुष की

कोटियों से चोरोंको मारा ६२ हे जनमेजय! फिर वे म्लेच्छ अर्जुनकेही आगे से चारों ओरको देखते हुए वृष्णि और अन्धकोंकी स्त्रियोंको लेकर चले गये ६३ अर्जुन ने चित्त से उस होनहार को शोचा और महाशोकयुक्त होकर बारम्बार श्वासाएं लीं ६४ हे राजन्! अस्त्रोंकी विस्मरणता, भुजबलकी न्यूनता, धनुष की अनाकर्षणता और बाणोंकी समाप्तिसे ६५ होनहार को प्रबल जान अर्जुन उदास होकर लौटा और कहने लगा कि सब नाशवान् है ६६ फिर बड़ा बुद्धिमान् अर्जुन बची हुई उन स्त्रियोंको; जिनके कि बहुतसे रत्न नाश हो गये थे; अपने साथ लेकर कुरुक्षेत्र में उतरा ६७ इस प्रकार अर्जुन ने लुटने से बची हुई वृष्णियों की स्त्रियों को लाकर जहां तहां स्थानों में ठहराया। फिर उन्होंने कृतवर्मा के लड़के को मार्तिकावत नगर का राजा किया और बची हुई भोजराज की स्त्रियां उसे सौंपीं ६८–६६ अर्जुन ने वीरों से रहित उन सब स्त्रियों और बालक, वृद्धोंको लाकर इन्द्रप्रस्थ में ठहराया ७० धर्मात्माने सात्यकी के प्यारे पुत्र को; जिसके अग्रभागमें वृद्ध और बालक थे; सरस्वती के तटपर ठहराया ७१ रुक्मिणी, गान्धारी, शैव्या, हेमवती, देवी जाम्बवती, ये सभी अग्नि में प्रवेश कर गईं ७२ फिर उस शत्रुहन्ता ने वज्र को इन्द्रप्रस्थका राजा किया। वज्रसे रुकी हुईं अक्रूरकी स्त्रियां वनवासिनी हुईं ७३ हे राजन्! इसी प्रकार श्रीकृष्णकी सत्यभामा आदिक प्यारी स्त्रियां और अन्यान्य स्त्रियां तपस्या का निश्चयकर वनमें चलीगईं ७४ वहां जाकर फल मूलादिक भोजन करनेवाली वे स्त्रियां हरिके ध्यान में संलग्न हो हिमालयकी परिक्रमा करके कलाप ग्राममें पहुँचीं ७५ जो द्वारकावासी मनुष्य अर्जुनके यहां गये, उनको अर्जुनने योग्यता के समान भागकर वज्रके सुपुर्द किया ७६ अश्रुसे पूर्ण नेत्र अर्जुनने समयानुसार सब काम करके कृष्ण द्वैपायन व्यासजीको आश्रममें बैठे हुए देखा ७७॥

इति श्रीमहाभारतेशतसाहस्र्यांसंहितायांवैयासिक्यांमुशलपर्वणि सप्तमोऽध्यायः ७॥

आठवां अध्याय।

वैशम्पायन बोले, कि हे राजन्! सत्यवक्ता ऋषिके आश्रममें प्रवेश करते हुए अर्जुन ने व्यासमुनि को एकान्तमें बैठे हुए देखा १ अर्जुनने धर्मज्ञ महाव्रत के सम्मुख जाकर 'मैं अर्जुन हूं' कहकर दण्डवत् की २ व्यास मुनि ने कहा, कि तेरा आना शुभ, मंगलकारी हो और बड़े प्रसन्न मन से कहा, कि बैठो ३

व्यासजी ने अर्जुन को उदास, बारम्बार श्वास लेनेवाला और व्याकुल देख-
कर कहा, कि ४ हे अर्जुन ! तू बाल, नख और वस्त्रसे निचोड़े हुए जल अथवा
मुखके उच्छिष्ट जलसे छिड़का गया है या रजस्वला स्त्री से तू ने संभोग किया
है अथवा ब्राह्मण मारा है या युद्ध में पराजित हुआ है, जिससे कि तुम तेज-
हीन विदित होते हो । परन्तु मैं तुमको पराजित नहीं जानता हूं । हे भरतर्षभ !
यह क्या बात है ? हे अर्जुन ! जो मेरे सुनाने के योग्य हो तो मुझसे शीघ्र
कहो ५–६ अर्जुनने कहा, कि मेघवर्ण, शोभायमान दिव्य कमललोचन श्री-
कृष्णजी बलदेवजी समेत अपने शरीर को त्यागकर स्वर्ग को गये ७ फिर
प्रभासक्षेत्र में ब्रह्मशापसे उत्पन्न, नाशक और रोमाञ्च करनेवाले मूसल की
उत्पत्ति के द्वारा वृष्णि वीरोंका नाश हुआ ८ हे ब्राह्मणवर्य ! जो वे भोज, वृष्णि
और अन्धक शूरवीर महात्मा, बड़े पराक्रमी और सिंहके समान अहंकारी थे;
उन्होंने युद्धमें परस्पर एक दूसरे को मारा ९ परिघकी समान भुजाओंवाले;
गदा, परिघ और शक्तियों के सहनेवाले वे सब लोग पटेलों से मारे गये । इस
समयकी विपरीतताको देखो । वे पांच लाख शूरवीर परस्पर सम्मुख होकर काल-
वश हुए १०–११ मैं अब बारम्बार चिन्ता करता हुआ बड़े पराक्रमी यादवों
और यशस्वी श्रीकृष्णजीके नाशको नहीं सहसकता १२ जिस प्रकार समुद्र
की शुष्कता, पर्वतका चलना, आकाश का गिरना और अग्नि का शीतल
होना असम्भव है, उसी प्रकार १३ मैं शार्ङ्गधनुषधारी श्रीकृष्ण के नाशको
भी श्रद्धाके अयोग्य मानता हूं । मैं इस लोकमें श्रीकृष्ण से जुदा रहना नहीं
चाहता १४ हे तपोधन ! इससे अधिकतम जो दूसरा दुःख है उसको सुनो, कि
जिसके कारण बारम्बार चिन्ता करने पर मेरा हृदय फटाजाता है १५ हे ब्राह्मण-
वर्य ! पञ्चनद देशमें रहनेवाले हजारों आभीरों ने मेरे देखते हुए समीप आ-
कर वृष्णियों को हरण करलिया १६ मैं वहां धनुषके चढ़ाने में भी असमर्थ
होगया । पूर्व समयमें मेरी भुजाओं का जैसा भुजबल था; वह उस समय पर
नहीं हुआ । हे महामुने ! मेरे नानाप्रकारके अस्त्र भी स्मरण न हुए और मेरे
बाण क्षणमात्र में चारों ओर नष्ट होगये १७–१८ पुरीरूप शरीरों में नियत,
अप्रमेयात्मा, शंख, चक्र, गदाधारी, चतुर्भुज, श्याम दलके समान नेत्रोंवाला,
पीताम्बरधारी १९ जो महातेजस्वी पुरुष मेरे रथके आगे शत्रुओं की सेनाको
भस्म करता जाता था; मैं उस अविनाशीको नहीं देखता हूं २० जिसने पहले

ही अपने तेजसे शत्रुओं की सेनाओं को भस्म किया और तब मैंने उनको अपने गाण्डीव के छोड़े हुए बाणोंसे नाश किया २१ हे बड़े साधु ! उसको न देख मैं व्याकुल होकर घूमता हुआ शान्ति नहीं पाता हूं २२ मैं विना वीर श्रीकृष्णके अपना भी जीवन नहीं चाहता हूं। परमधाम में विष्णुका जाना सुनकर मेरी दिशाएं भी मोहित हो गईं २३ हे बड़े साधु ! आप मुझे कल्याणकारी उपदेश करने योग्य हैं क्योंकि मैं बल-पराक्रम से अपने सजातीय भाई-बन्धुओंसे रहित और अस्त्रादिकोंसे खाली होकर व्याकुल हूं २४ व्यासजी बोले, कि हे कौरव्य ! ब्रह्मशाप से भस्मीभूत, वृष्णि और अन्धक महारथी लोगोंका नाश हुआ। उनको शोचना तुम्हें योग्य नहीं है २५ वह उसी प्रकार भवितव्यता थी क्योंकि उन महात्माओं का वह प्रारब्ध भी हीन होगया कि शाप को दूर करने में समर्थ श्रीकृष्णजी ने भी ध्यान नहीं दिया २६ गोविन्दजी तीनों लोकोंके सम्पूर्ण जड़ चैतन्यों को भी विपरीत दशामें कर सकते थे। फिर उन महात्मा को शाप दूर करना कौन बड़ी बात थी ? जो चक्र-गदाधारी, पुराणपुरुष, चतुर्भुज वासुदेवजी प्रीतिसे तुम्हारे रथके आगे चलते थे २७-२८ उन बड़े नेत्रधारी श्रीकृष्णजी ने पृथ्वी का भार उतार, शरीर को त्यागकर अपना परमधाम पाया २९ हे पुरुषोत्तम, महाबाहु अर्जुन ! तुमने भी भीमसेन, नकुल और सहदेव के साथ देवताओं का बड़ा कार्य किया ३० हे कौरवों में श्रेष्ठ ! मैं तुमको कृतकृत्य और अच्छा सिद्ध मानता हूं। हे प्रभो ! तुम्हारा इस संसार का त्यागना समयके अनुसार कल्याणकारी है ३१ हे भरतवंशिन् ! इस ऐश्वर्यके समय में मनुष्योंकी बुद्धि तीक्ष्ण और अग्रशोची होती है और नाशके समयपर नष्ट होती है। यह सब कालको ही मूलरूप रखनेवाला है, फिर काल ही अपने आप इन संसारके बीजरूप पञ्चतत्त्वों को अपने में लय करता है ३२-३३ वही काल पराक्रमी होकर फिर निर्बल होता है। वही इस लोकमें ईश्वर होकर दूसरोंका भी आज्ञावर्ती होता है अर्थात् विजय भी काल से ही होती है ३४ अब वे अस्त्र कृतकर्मा होकर जहां से आये थे, वहीं चले गये। जब समय होगा तब फिर तुम्हारे हाथ में आवेंगे ३५ हे भरतवंशिन् ! आप लोगोंको भी मुख्य गति मिलनेका यही समय है। हे अर्जुन ! मैं इसीमें आप सब लोगों का परम कल्याण मानता हूं ३६ वैशम्पायन बोले, कि बड़े तेजस्वी व्यासजीके वचन को जानकर उनसे आज्ञा ले अर्जुन हस्तिनापुर नगरको

चले ३७ वीर अर्जुन ने पुरी में प्रवेश कर युधिष्ठिर के पास जा अन्धक और वृष्णियों का जैसा वृत्तान्त था, सब यथार्थ वर्णन किया ३८ ॥

इति श्रीमहाभारतेशतसाहस्र्यांसंहितायांमुशलपर्वण्यष्टमोऽध्यायः ८ ॥

इति मुशलपर्व समाप्त ॥

श्रीनिकुञ्जविहारिणे नमः ॥

महाभारतभाषामहाप्रस्थानपर्व ।

मंगलाचरणम् ।

श्लोक ॥ नव्याम्भोधरवृन्दवन्दितरुचिम्पीताम्बरालंकृतं प्रत्यग्रस्फुटपुण्डरीकनयनं सान्द्रप्रमोदास्पदम् ॥ गोपीचित्तचकोरशीतकिरणम्पापाटवीपावकं स्वाराएमस्तकमाल्यलालितपदं वन्दामहे केशवम् १ या भाति वीणामिव वादयन्ती महाकवीनां वदनारविन्दे ॥ सा शारदा शारदचन्द्रविम्बा ध्येयप्रभा नः प्रतिभां व्यनक्तु २ पाण्डवानां यशोवर्ष्म सकृष्णमपि निर्मलम् ॥ व्यधायि भारतं येन तं वन्दे बादरायणम् ३ विद्याविदग्रेसरभूषणेन विभूष्यते भूतलमद्य येन ॥ तं शारदालब्धवरप्रसादं वन्दे गुरुं श्रीसरयूप्रसादम् ४ विप्राग्रणीगोकुलचन्द्रपुत्रः सविज्ञकालीचरणाभिधानः ॥ तथैव प्रास्थानिकरम्यपर्वभाषानुवादं विदधाति सम्यक् ५ ॥

पहिला अध्याय ।

श्रीनारायणजी, नरोत्तम नर और सरस्वती देवीको नमस्कार कर इतिहास वर्णन करता हूं । कर्मों से कृतकृत्य, महाअसह्य दुःखों में फँसे हुए पुरुषों को महाप्रस्थानप्रभृति उपायों से शरीर त्यागना योग्य है; इसीको प्रकट करते हुए पर्वका प्रारम्भ करते हैं । इसमें स्वर्गप्राप्ति के हेतुओं के गुण और स्वर्ग की रुकावट के दोषोंका वर्णन करेंगे । जनमेजयने पूछा, कि इस प्रकार से अन्धक और वृष्णियों के घराने में मूसल सम्बन्धी युद्धको सुनकर और उस प्रकार श्रीकृष्ण के स्वर्ग जानेपर पाण्डवों ने क्या किया १ वैशम्पायन बोले, कि कौरवराज युधिष्ठिरने इस प्रकार वृष्णियोंका अत्यन्त नाश सुन स्वर्ग जानेका मनोरथ कर घरसे निकलनेमें विचार करके अर्जुनसे कहा, कि हे अर्जुन ! काल ही सब जीवोंको अपने में लय करता है । मैं कालरूपी फांसीको स्वीकार करता

हूं । तुम भी इसमें विचार करने योग्य हो २–३ इस प्रकार से आज्ञप्त और 'काल काल' कहते हुए अर्जुन ने बुद्धिमान् बड़े भाई के वचनको अंगीकार किया। इसी प्रकार भीमसेन, नकुल और सहदेवने अर्जुन के विचार को मनसे जानकर स्वीकार करलिया ४–५ धर्म की इच्छा से राज्यको त्यागनेवाले युधिष्ठिरने युयुत्सुको बुलाकर सब राज्य उसको सौंपा ६ फिर दुःखसे पीड़ित राजा युधिष्ठिर ने अपने राज्यपर परीक्षित का अभिषेक कराके सुभद्रासे कहा, कि यह तुम्हारा पौत्र कौरवराज होगा और नाश होने से बचा हुआ वज्रनाभ यादवोंका राजा किया गया ७–८ हस्तिनापुर में राजा परीक्षित और इन्द्रप्रस्थ में यादवों का राजा वज्रनाभ तुमसे रक्षा करने के योग्य है । देखो, अधर्म में कभी चित्त न करना । इस प्रकार उसे समझाकर निरालस्य धर्मात्मा युधिष्ठिरने भाइयों समेत उन बुद्धिमान् वासुदेवजी, बलदेवजी, वृद्ध मामा और सब यादवोंको जलदान कर विधिके अनुसार उनके श्राद्ध किये ९–११ उपाय करनेवाले युधिष्ठिर ने हरिके नाम से व्यास, नारद, तपोधन मार्कण्डेय, भारद्वाज और याज्ञवल्क्य को उत्तम स्वादयुक्त भोजनकराके शार्ङ्ग धनुषधारी का कीर्तन कर रत्न, वस्त्र, ग्राम, घोड़े और रथ ब्राह्मणोंको दिये १२–१३ उस समय हजारों दासियां और दास भी ब्राह्मणों को दान किये । हे भरतवंशियों में श्रेष्ठ, जनमेजय ! फिर पुरवासियों के अग्रवर्ती गुरु कृपाचार्यजी की पूजाकरके १४ उनके शिष्य परीक्षितको उन्हें सौंपा । राजर्षि युधिष्ठिर ने सब राज्य के अधिकारी, सेवक और प्रजाके लोगोंको बुलाकर १५ अपनी इच्छा प्रकाशित की । उनके वचन सुनकर अत्यन्त व्याकुलचित्त पुरवासियों और देशवासियों ने उस वचन को स्वीकार न किया । उन्होंने राजासे कहा, कि आपको ऐसा न करना चाहिये । पर धर्म और समय के ज्ञाता राजा युधिष्ठिर ने उस प्रकार न माना और पुरवासी तथा देशवासी मनुष्यों को सलाहकार बनाकर १६–१८ चलनेका विचार किया। उस समय सब भाइयोंने भी साथ चलना अङ्गीकार किया । तब धर्मपुत्र राजा युधिष्ठिर ने १९ भूषण और पोशाकें उतारकर बल्कल वस्त्र धारण किये । हे भरतवंशियों में श्रेष्ठ ! वे नरोत्तम राज्य त्यागने के समय विधिपूर्वक इष्टियज्ञ करके २०–२१ सब अग्नियोंको जलमें छोड़ चल दिये । फिर सब स्त्रियां प्रस्थान करनेवाले नरोत्तमों को, जिनमें छठी द्रौपदी थी, देखकर ऐसे विह्वल हो रोने लगीं २२ जैसे कि पूर्व समय में, द्यूतकर्म में हारे हुओं को देखकर रोई थीं ।

चलने में सब भाइयों को प्रसन्नता हुई २३ वृष्णियों का नाश देखकर और युधिष्ठिरका सम्मत जानकर–पांचों भाई छठी द्रौपदी और सातवें बड़े साधु कुत्ते २४ समेत राजा युधिष्ठिर हस्तिनापुर से निकले। सब पुरवासी और स्त्रियां दूरतक उनके पीछे पीछे गईं २५ उस समय कोई मनुष्य भी राजा युधिष्ठिरसे यह कहने में समर्थ नहीं हुआ, कि आप लौटिये । फिर सब नगरनिवासी लौट गये २६ कृपाचार्यआदिक युयुत्सुके पास रहे। हे कौरव ! सर्पकी पुत्री उलूपी गंगामें प्रवेश कर गई, चित्राङ्गदा मणिपुर नगर को गई और बची हुई अन्य माताएं परीक्षितके पास ही रहीं २७–२८ हे कौरव ! फिर उपवास करनेवाले पाण्डव यशस्विनी द्रौपदी सहित पूर्व की ओरको चले २९ योग से संयुक्त और धर्म संन्यास प्राप्त करने की इच्छा से महात्मा बहुतसे देशोंको देखते हुए नदी और सागरों पर गये ३० आगे आगे युधिष्ठिर, पीछे भीमसेन और इनके पीछे अर्जुन, नकुल और सहदेव चले ३१ सबसे पीछे कमलदल के समान नेत्रों वाली स्त्रियोंमें उत्तम श्यामा सुन्दरी द्रौपदी चलीं ३२ हे भरतवंशियों में बड़े साधु, जनमेजय ! एक कुत्ता वन जानेवाले पाण्डवोंके पीछे चला। वे वीर इस क्रमसे लोहती सागरको गये ३३ महाराज ! अर्जुनने रत्नोंके लोभसे दिव्य धनुष गाण्डीव और अक्षय तूणीरोंको नहीं त्यागा। वहां उन्होंने प्रत्यक्ष पुरुष-रूपसे पर्वतके समान आगे मार्गको रोके, खड़े हुए अग्निको देखा ३४–३५ अग्नि देवताने पाण्डवों से कहा, कि हे वीर पाण्डवो ! मैं अग्नि हूं ३६ हे महाबाहु युधिष्ठिर! हे परन्तप भीमसेन ! हे वीर अर्जुन, नकुल और सहदेव! तुम मेरे वचनको जानो ३७ हे उत्तम कौरव ! मैं अग्नि हूं। मैंने अर्जुन और नारायण के प्रभाव से खाण्डव वनको भस्म किया ३८ यह तुम्हारा भाई अर्जुन अपना श्रेष्ठ आयुध गाण्डीव छोड़कर वनको जाय। इससे अब कोई प्रयोजन नहीं है ३९ जो रत्नोंका चक्र महात्मा श्रीकृष्णजीके पास था, वह भी स्वर्गको गया। फिर काल पाकर दूसरे अवतार में वह उनके हाथ आवेगा ४० मैं पूर्वसमय में यह उत्तम गाण्डीव धनुष अर्जुनके लिये वरुणसे ले आया था। इसे आप मुझे वरुण को देनेके लिये दीजिये ४१ उन सब भाइयों ने अर्जुन को प्रेरणा की। तब उसने वह धनुष और दोनों अक्षय तूणीर जलमें डालदिये ४२ हे भरतर्षभ! फिर अग्नि देवता वहीं अन्तर्द्धान होगये और वे वीर पाण्डव दक्षिण की ओर चले ४३ इसके अनन्तर वे पाण्डव समुद्रके उत्तरीय तटसे दक्षिण और पश्चिमके

कोण नैर्ऋत दिशाको चले ४४ पश्चिम दिशा को लौटनेवाले पाण्डवों ने सागर से डूबी हुई द्वारका को भी देखा ४५ पृथ्वीकी परिक्रमा करने के अभिलाषी, योगधर्मधारी, भरतवंशियों में बड़े साधु पाण्डव लोग उत्तर दिशाको लौटकर चल दिये ४६ ॥

इति श्रीमहाभारतेमहाप्रस्थानपर्वणि प्रथमोऽध्यायः १ ॥

दूसरा अध्याय ।

वैशम्पायन बोले, कि फिर सावधानचित्त, योगसे संयुक्त पाण्डवों ने उत्तर दिशामें हिमालय पर्वतको देखा १ उसको भी उल्लंघन करके उन्होंने बालू के समुद्रको देखा और पर्वतों में श्रेष्ठ, बड़े मेरुपर्वतको भी देखा २ उन शीघ्रगामी, योगधर्म रखनेवालों के मध्य में, ध्यानसे चित्त हटानेवाली द्रौपदी पृथ्वी पर गिर पड़ी ३ महाबली भीमसेन ने गिरी हुई द्रौपदी को देख, विचार कर धर्मराज से कहा, कि हे परन्तप! इस पत्नीसे कभी कोई अधर्म नहीं हुआ। फिर यह द्रौपदी किस कारण से पृथ्वी पर गिर पड़ी ४-५ युधिष्ठिर बोले, कि हे पुरुषों में बड़े साधु, भीमसेन! इसकी प्रीति अधिकता से अर्जुन में थी; अब यह उसीके फलको भोगती है ६ वैशम्पायन बोले, कि भरतवंशियों में बड़े साधु, बुद्धिमान्, धर्मात्मा युधिष्ठिर इस प्रकार कहकर उसको विना देखे ही चित्त को समाधि में नियत करके चलदिये ७ फिर बुद्धिमान् सहदेव पृथ्वी पर गिरा। भीमसेन ने उसको भी गिरा हुआ देखकर राजा से पूछा, कि ८ हम सबकी सेवा करनेवाला यह सहदेव अहंकार से रहित है। यह पृथ्वीपर क्यों गिरा ९ युधिष्ठिर बोले, कि इसने अपने समान किसीको भी बुद्धिमान् नहीं माना। यह राजकुमार उसी अपने दोषसे पृथ्वीपर गिरा है १० वैशम्पायन बोले, कि कुन्ती के पुत्र युधिष्ठिर यह कह उसको भी छोड़कर भाइयों और कुत्ते समेत चलदिये ११ द्रौपदी और सहदेव के गिरने से पीड़ित बान्धवों का प्यारा, शूर नकुल भी गिरपड़ा १२ सुन्दर दर्शनवाले, वीर नकुल के गिरने पर भीमसेन ने फिर राजा से कहा, कि १३ धर्म में पूर्ण, गुरुका आज्ञाकारी, संसारभरे में अनुपम स्वरूपवान् नकुल भी पृथ्वी पर गिरपड़ा १४ भीमसेन से इस प्रकार सुनकर बुद्धिमानों में श्रेष्ठ, धर्मात्मा युधिष्ठिर ने नकुल के विषय में उत्तर दिया, कि १५ इसको निश्चय था, कि स्वरूप में मेरे समान कोई नहीं

हैं; मैं ही अकेला रूपमें सबसे अधिक हूं, यह इसके चित्तमें था १६ इसीसे नकुल गिर पड़ा। हे भीमसेन! तुम आओ। हे वीर! जिसका जो कर्म है, उसको वह अवश्य भोगता है १७ उन तीनोंको गिरा हुआ देख शत्रुओं के वीरोंका मारने वाला पाण्डव अर्जुन गिर पड़ा। इन्द्रके समान तेजस्वी, अजेय अर्जुन के गिरने और मरने पर भीमसेन ने राजासे कहा, कि १८-१९ मैं स्वतन्त्रता की दशामें भी महात्मा अर्जुनका कोई मिथ्या कर्म नहीं स्मरण करता। फिर यह किस कर्म के फलसे पृथ्वीपर गिरा २० युधिष्ठिर बोले-इसने कहा था, कि मैं एक ही दिनमें शत्रुओं का नाश करूंगा। पर इसने किया नहीं इससे अपने को शूरवीर माननेवाला यह अर्जुन पृथ्वी पर गिरा २१ अर्जुन ने सब धनुष-धारियों का जैसा अपमान किया, वैसा ऐश्वर्य चाहनेवाले मनुष्य को करना योग्य नहीं है २२ वैशम्पायन बोले, कि राजा यह कहकर आगे चले, तो भीमसेन गिरा। गिरे हुए भीमसेन ने धर्मराज से कहा, कि २३ हे राजन्! देखो, मैं आपका प्यारा होकर भी गिर पड़ा। मेरे गिरनेका कारण यदि आप जानते हों, तो कहिये २४ युधिष्ठिर बोले, कि भीमसेन! तुमने नियत परि-माण से अधिक भोजन किया और दूसरे को ध्यान में न लाकर अपने बल की तुम प्रशंसा करते रहे। इससे पृथ्वी पर गिरे हो २५ महाबाहु युधिष्ठिर ऐसा कहकर उसको भी विना देखे चलदिये। वह कुत्ता भी उनके पीछे गया जिसका कि मैंने बारम्बार उल्लेख किया है २६॥

इति श्रीमहाभारतेमहाप्रस्थानपर्वणि द्वितीयोऽध्यायः २ ॥

तीसरा अध्याय।

वैशम्पायन बोले, कि इसके पीछे इन्द्र देवता अपने रथके शब्दसे पृथ्वी और आकाशको शब्दायमान करते हुए सम्मुख आये और युधिष्ठिर से बोले, कि सवार होजाओ १ भाइयों के गिरने के शोकसे दुःखी युधिष्ठिर ने इन्द्र से कहा, कि २ हे देवेश्वर! यहांपर मेरे सब भाई गिरे हैं। वे भी मेरे साथ जायँ। मैं अपने भाइयों के विना स्वर्ग जाना नहीं चाहता ३ हे इन्द्र! वह सुखके योग्य सुकुमार राजपुत्री द्रौपदी भी हमारे साथ जाय। आप हमारी इस प्रार्थना को अंगीकार कीजिये ४ इन्द्रने कहा, कि तुम स्वर्ग में अपने सब भाइयोंको देखोगे। वे तुमसे भी पहले द्रौपदी समेत स्वर्ग को गये हैं। हे भरतर्षभ! तुम

शोच मत करो ५ हे श्रेष्ठ ! तुम्हारे सब भाई मनुष्यशरीर को त्यागकर स्वर्गको गये और तुम इसी शरीर से सदेह स्वर्ग को जाओगे ६ युधिष्ठिर बोले, कि हे भूत-भविष्य के ईश्वर ! यह कुत्ता सदैव से मेरा भक्त है । यह भी मेरे साथ जाय । इस समय मेरी बुद्धि दयासे पूर्ण है ७ इन्द्र बोले, कि राजन् ! अब तुमने मेरी समानता, अमर पदवी, बड़ी लक्ष्मी, बड़ी सिद्धि और स्वर्ग के सुखों को प्राप्त किया । तुम कुत्ते का त्याग करो–इसमें निर्दयता नहीं है ८ युधिष्ठिर ने कहा, कि हे श्रेष्ठ देवता, इन्द्र ! श्रेष्ठ पुरुष से नीच कर्म होना असम्भव है । चाहे उस लक्ष्मीकी प्राप्ति मुझको भले ही न हो जिसके कारण भक्तजन को त्यागना पड़े ९ इन्द्र बोले, कि स्वर्ग में कुत्ते पालनेवालों को स्थान नहीं है; क्योंकि 'क्रोधवशा' देवता उस अपवित्र मनुष्य के इष्टापूर्त्त यज्ञ, बावड़ी और कूपादिकों को नष्ट करदेते हैं । हे धर्मराज ! इसीसे विचारपूर्वक कर्म करो; कुत्तेको त्यागो, इसमें निर्दयता नहीं है १० युधिष्ठिर ने उत्तर दिया, कि हे महेन्द्र ! भक्तका त्यागना बड़ा अधर्म कहा है । वह लोकमें ब्रह्महत्या के समान है । इसीसे अब अपने सुखकी चाह से मैं किसी दशामें भी इस कुत्ते का त्याग न करूंगा ११ मैं अपने प्राणों के नाश होजाने पर भी भयभीत, भक्त, रक्षा-स्थानका प्रार्थी शरणागत, पीड़ित, घायल और प्राण की रक्षा चाहनेवाला–इतने लोगोंका मैं कदापि त्याग न करूंगा । यह मेरा पुराना व्रत है १२ इन्द्र बोले, कि 'क्रोधवशा' देवता कुत्ते की देखी हुई इन वस्तुओं को हर लेते हैं; किया हुआ दान, विस्तृत यज्ञ और होम इन सबको हर लेते हैं । इसलिये इस कुत्तेको त्यागो । कुत्ते के त्यागने से तुम देवलोक पाओगे १३ हे वीर ! तुमने भाइयों और द्रौपदी को भी त्याग करके अपने कर्म से लोकको पाया । इस कुत्तेको क्यों नहीं त्यागते हो ? तुमने जब सर्वस्व त्याग दिया है, तब यह कैसा मोह करते हो १४ युधिष्ठिर बोले, कि लोकों में मर्यादा है कि मृतक मनुष्योंसे सन्धि और विग्रह नहीं है । उनका जीवित करना मेरी शक्ति से बाहर था । इसीसे उनको त्याग दिया । मैंने जीवित लोगों को नहीं त्यागा है १५ शरणागत को भयभीत करना, स्त्रीको मारना, ब्राह्मणों का धन हरलेना और मित्र से शत्रुता करना–ये चारों और भक्तका त्यागना एक समान है । यह मेरा मत है १६ वैशम्पायन बोले, कि प्रीतियुक्त धर्मस्वरूप भगवान्ने धर्मराजके वचन सुनकर प्रशंसायुक्त मधुर वचनों के द्वारा उनसे कहा, कि १७

हे भरतवंशी राजेन्द्र ! तुम पूर्वजों की रीति, बुद्धि और सब जीवों में नियत दयासे कुलीन हो १८ हे पुत्र ! इससे प्रथम द्वैत वनमें मैंने परीक्षा ली थी, जहां जल की खोज में तुम्हारे भाइयों को मृतक रूप किया था । वहां तुमने अपनी दोनों माताओंकी समानता चाहकर अपने भाई भीमसेन और अर्जुन को त्याग नकुलका जीवन मांगा था १९–२० इस कुत्ते को भक्त जानकर तुमने देवरथ को त्याग दिया । हे राजन् ! इसीसे स्वर्ग में तुम्हारे समान कोई नहीं है २१ हे भरतवंशिन् ! इस हेतुसे ही तुमने अपने इसी शरीर से अविनाशी लोक प्राप्त किये । हे श्रेष्ठ ! तुमने दिव्य और उत्तम गति पाई २२ वैशम्पायन बोले, कि इसके पीछे सिद्ध, स्वेच्छाचारी, विहार करनेवाले, रजोगुणरहित, पवित्र, पवित्रभाषी, उत्तम कर्म और बुद्धिवाले, धर्म, इन्द्र, मरुद्गण, अश्विनीकुमार और देवर्षिलोग युधिष्ठिरको रथमें बिठलाकर अपने विमानों की सवारी से चले गये २३–२४ कौरववंश भरका उद्धार करनेवाले राजा युधिष्ठिर उस रथ में सवार हो अपने तेजसे पृथ्वी और आकाश को पूर्ण करके ऊपरकी ओर चले २५ फिर सब सृष्टि के ज्ञाता, महातपस्वी, ब्रह्मवादी और देवलोकमें विराजमान नारदजीने बड़े उच्चस्वर से कहा, कि २६ सब राजर्षियों को मैं जानताहूं; परन्तु यह युधिष्ठिर उन सबकी कीर्तिको भी ढककर सर्वोत्तम पद पर नियत है २७ युधिष्ठिर के सिवाय ऐसे किसी दूसरे राजाका सदेह स्वर्ग में आना नहीं सुना है जो अपने तेज, शुभकीर्ति और गुरुसेवादिक रीतियों से लोकोंको व्याप्तकर आया हो २८ धर्मात्मा राजा युधिष्ठिरने नारदजीका वचन सुनकर देवताओं और अपने पक्षवाले राजाओं के आगे कहा, कि २९ मेरे भाइयोंका स्थान चाहे शुभ अथवा पापरूप ही क्यों न हो परन्तु मैं उसीको पाना चाहताहूं–दूसरे को नहीं चाहता ३० देवराज इन्द्रने राजाका वचन सुनकर उसे उत्तर दिया, कि ३१ हे राजेन्द्र ! शुभ कर्मों से विजय होनेवाले इस स्थानपर निवास करो । क्या तुम अब भी मनुष्यभावकी प्रीति को काम में लाते हो ३२ हे कुरुनन्दन ! तुमने ऐसी परमसिद्धि पाई है, जैसी किसी दूसरे मनुष्य ने कभी कहीं नहीं पाई । तुम्हारे भाइयों ने वह स्थान नहीं पाया ३३ हे राजन् ! अब भी तुमको मानुषी प्रीति स्पर्श करती है । यह स्वर्ग है, यहां देवर्षियों और स्वर्गवासी सिद्धोंको देखो ३४ बुद्धिमान् युधिष्ठिरने इस प्रकार कहनेवाले देवेश्वर इन्द्रसे फिर कहा, कि ३५ हे दैत्यसंहारिन् ! मैं अपने भाइयों के विना

यहां रहने का उत्साह नहीं करता । मैं वहीं जाना चाहता हूं जहां मेरे भाई गये ३६ जहां पर बृहतीपुष्पके समान श्यामा, बुद्धिमती और स्त्रियों में श्रेष्ठ द्रौपदी गई है; मैं वहीं जाऊंगा ३७ ॥

इति श्रीमहाभारतेशतसाहस्त्र्यांसंहितायांवैयासिक्यांमहाप्रस्थानपर्वणि तृतीयोऽध्यायः ३ ॥

महाप्रस्थान पर्व समाप्त ॥
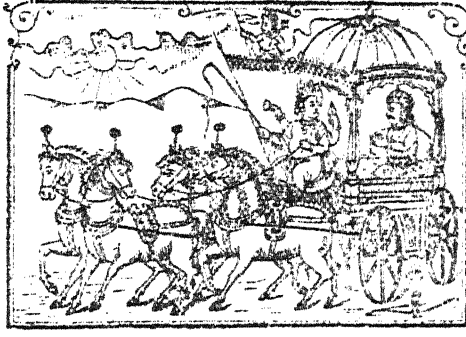
श्रीनिकुञ्जविहारिणे नमः ॥

महाभारतभाषास्वर्गारोहणपर्व ।

मंगलाचरणम् ।

श्लोक ॥ नव्याम्भोधरवृन्दवन्दितरुचिम्पीताम्बरालंकृतं प्रत्यग्रस्फुटपुण्डरीकनयनं सान्द्रप्रमोदास्पदम् ॥ गोपीचित्तचकोरशीतकिरणम्पापाटवीपावकं स्वाराण्मस्तकमाल्यलालितपदं वन्दामहे केशवम् १ या भाति वीणामिव वादयन्ती महाकवीनां वदनारविन्दे ॥ सा शारदा शारदचन्द्रबिम्बा ध्येयप्रभा नः प्रतिभां व्यनक्तु २ पाण्डवानां यशोवर्ष्म सकृष्णमपि निर्मलम् ॥ व्यधायि भारतं येन तं वन्दे बादरायणम् ३ विद्याविदग्रेसरभूषणेन विभूष्यते भूतलमद्य येन ॥ तं शारदालब्धवरप्रसादं वन्दे गुरुं श्रीसरयूप्रसादम् ४ विप्राग्रणीगोकुलचन्द्रपुत्रः सविज्ञकालीचरणाभिधानः ॥ तथैव स्वर्गारोहणरम्यपर्वभाषानुवादं विदधाति सम्यक् ५ ॥

पहिला अध्याय ।

श्रीनारायण, नरोत्तम नर और सरस्वती देवीको नमस्कार कर इतिहास वर्णन करता हूं। पहिले पर्व में युधिष्ठिरके दृष्टान्त से धर्मके फलरूप त्याग, दया आदिक गुणों का वर्णन किया; अब उनका उत्तम फल प्रकट करने के लिये स्वर्गारोहण पर्व का प्रारम्भ करते हैं । जनमेजय ने पूछा, कि मेरे पूर्व पितामह पाण्डव और धृतराष्ट्र के पुत्रोंने स्वर्ग को—जिसमें फलकी उत्तमतासे मानो तीनों भवन प्राप्त होते हैं—पाकर किन किन स्थानों में निवास किया १ मैं सब वृत्तान्त सुना चाहताहूं क्योंकि आप अपूर्वकर्मी व्यास महर्षि से आज्ञा दिये हुए और सर्वज्ञहो २ वैशम्पायन बोले, कि तुम्हारे पूर्व पितामह युधिष्ठिरआदिकने स्वर्गभवनमें जो कहा, उसको सुनो ३ धर्मराज ने स्वर्गभवन में दुर्योधन को स्वर्ग्य लक्ष्मी से सेवित और आसन पर बैठा हुआ देखा ४ वह सूर्य के समान प्रका-

शित वीरों की शोभा से संयुक्त, देवता और पवित्रकर्मी साध्य लोगों के साथ था ५ दुर्योधनको और उसके पास लक्ष्मीको भी देखकर अशान्तचित्त युधिष्ठिर अकस्मात् लौटपड़े । आशय यह है, कि स्वर्गमें भी क्रोधका त्यागना कठिन है । इससे संस्कारों की अत्यन्त प्रबलता बतलाई ६ युधिष्ठिर उच्चस्वर से यह कहते हुए, लौटे, कि मैं इस लोभी दुर्योधन के साथ लोकों को नहीं चाहता हूं ७ इसीके कारण प्रथम महावन में बड़े दुःख पा हम लोगों ने हठ करके सब पृथ्वी के मनुष्य-मित्र, नातेदार आदिको युद्धभूमि में मारा ८ यह धर्म-चारिणी, निर्दोष हमारी पत्नी पाञ्चाली द्रौपदी गुरुजनों के सम्मुख सभा में चारों ओर से खींची गई ९ हे देवताओ । मैं दुर्योधन को देखना भी नहीं चाहता । मैं वहीं जाना चाहता हूं, जहांपर मेरे भाई हैं १० तब हँसते हुए नारदजी ने युधिष्ठिर से कहा, कि ऐसा न कहना चाहिये । हे राजेन्द्र ! इस स्वर्गभवन में शत्रुता आदिक भी दूर होजाती हैं ११ हे महाबाहु, युधिष्ठिर ! तुम राजा दुर्योधन के विषयमें, किसी दशा में भी ऐसा मत कहो । अब तुम मेरी बात सुनो । राजा दुर्योधन की इन स्वर्गीय देवता और राजर्षियों में सन्मानपूर्वक प्रतिष्ठा है १२-१३ युद्धमें इसने अपने शरीर को होमकर वीरलोक पायाहै । यद्यपि देवताओं के समान तुम सब लोगों को सदैव इस दुर्योधन से दुःख मिला था १४ तथापि इसने क्षत्रियधर्म से इस स्थान को पाया है । यह राजा बड़े भयमें भी नहीं डरा १५ हे पुत्र ! जो तुमको द्यूतसे दुःख हुआ, उसको चित्तमें न रखना चाहिये और द्रौपदीके भी दुःखोंको भूल जाओ १६ अपने बिरादरीवालों से तथा दूसरों से भी जो दुःख युद्धोंमें अथवा अन्य स्थानों में हुए हैं, उनको स्मरण करना तुमको योग्य नहीं १७ हे राजन् ! तुम न्यायके अनुसार राजा दुर्योधनसे मिलो । यह स्वर्ग है, यहां शत्रुता नहीं होती १८ नारदजी से इस प्रकार आज्ञा पा बुद्धिमान् कुरुराज युधिष्ठिर ने भाइयों को पूछा और कहा, कि १९ सब संसार तथा मित्रोंके शत्रु, पापी और अधर्मी जिस दुर्योधनके २० कारण पृथ्वीके सब लोग घोड़े, मनुष्य और हाथियों समेत नष्ट होगये और शत्रुता का बदला लेने के अभिलाषी हमलोग क्रोधसे भस्म हुए २१ उसके तो ये सनातन वीरलोक हैं; बतलाइये, कि वीर, महात्मा, बड़े व्रतधारी, लोकमें विख्यात, शूर और सत्यवक्ता मेरे भाइयों के कौनसे लोक हैं । मैं उन लोकों को देखना चाहताहूं । हे नारदजी ! सत्यसंकल्प

भाई कर्ण २२–२३ धृष्टद्युम्न, सात्यकी, धृष्टद्युम्न के पुत्र और जिन राजाओं ने क्षत्रियधर्म के द्वारा शस्त्रोंसे मरण पाया २४ वे सब राजा कहां हैं? हे ब्रह्मन्! मैं उनको नहीं देखता हूं। विराट, द्रुपद, धृष्टकेतु आदिक २५ पाञ्चालदेशी, शिखण्डी, द्रौपदीके सब पुत्र, अजेय अभिमन्युप्रभृति सबको देखना चाहताहूं २६॥

इति श्रीमहाभारतेस्वर्गारोहणपर्वणि प्रथमोऽध्यायः १॥

दूसरा अध्याय।

युधिष्ठिर बोले, कि हे देवताओ! मैं यहांपर बड़े तेजस्वी कर्ण और युधामन्यु तथा उत्तमोजाको नहीं देखताहूं। जिन महारथियोंने शरीरों को रणरूपी अग्निमें हवन करदिया और जो राजा एवं राजकुमार युद्धमें मेरे निमित्त मारे गये १–२ वे सब शार्दूल के समान पराक्रमी महारथी कहां हैं? क्या उन बड़े साधु पुरुषोंसे भी यह लोक विजय किया गया है ३ जो उन सब महारथियोंने इन लोकों को पाया हो, तो हे देवताओ! मुझको भी उन महात्माओं के ही साथ नियत जानो ४ यदि उन राजाओं ने यह अविनाशी शुभलोक नहीं पाया है, तो मैं भी उन राजा, भाई और सजातीय लोगों से अलग यहां न रहूंगा ५ जलदान के विषयमें माताकी आज्ञा थी, कि तुम कर्णका जलदान करो। उसको सुनकर उस समय मैंने दुःख माना ६ हे देवताओ! मैं बारम्बार इसलिये पछताता हूं, कि उस बड़े बुद्धिमान् कर्णके दोनों चरणों को माताके चरणों के समान देखकर ७ उस शत्रुओं की सेनाओं के दुःखदाता के पास नहीं गया। यदि वह हमारा साथी होता तो स्वयं इन्द्र भी हम लोगोंको जीतने में समर्थ न होते ८ मैं जहां तहां नियत उस सूर्यके पुत्रको देखना चाहता हूं, जिसको पहिले मैंने नहीं जाना था। वह अर्जुन के हाथ से मारा गया ९ प्राणोंसे भी अधिक प्यारे, भयकारी, पराक्रमी भीमसेनको, इन्द्रके समान अर्जुन को और अश्विनीकुमारके समान दोनों नकुल-सहदेवको १० तथा धर्मचारिणी द्रौपदी को देखना चाहताहूं। यहां रहनेकी मैं इच्छा नहीं करता। यह सब मैं आपसे सत्य सत्य कहता हूं ११ हे श्रेष्ठ देवताओ! भाइयों से बिछुड़े हुए मुझको स्वर्ग से क्या प्रयोजन है? जहांपर वे सब हैं, वही स्थान मेरा स्वर्ग है। मैं इस स्वर्ग को स्वर्ग नहीं मानता हूं १२ देवता बोले, कि हे पुत्र! यदि उस स्थान में ही तुम्हारी श्रद्धा है, तो चले जाओ; विलम्ब मत करो। हम देवराज की

आज्ञासे तुम्हारा हितकारी कर्म करनेवाले हैं १३ वैशम्पायन बोले, कि हे परन्तप ! फिर देवताओं ने देवदूतको आज्ञा दी, कि तुम युधिष्ठिरको इनके भाई आदिक दिखाओ १४ हे श्रेष्ठ ! फिर राजा युधिष्ठिर और देवदूत दोनों साथ होकर वहां चले जहां वे पुरुषोत्तम थे १५ आगे देवदूत और पीछे राजा होकर महाअशुभ, दुर्गम्य, पापोंके उत्पत्ति स्थान १६ अन्धकार से पूर्ण, भयकारी, बाल के समान रूप शिवार—घासवाले, पापों की गन्धियों से युक्त, मांस-रुधिर की कीचवाले १७ डांस-उत्पातक-भल्लूक-मक्खी और मच्छरों से व्याप्त, इधर उधर चारों ओर मृतकों से घिरे हुए १८ अस्थि-केशोंसे युक्त, कृमि-कीटोंसे पूर्ण, अत्यन्त प्रकाशमान अग्नि से चारों ओर घिरे हुए १९ लोहे के समान तीक्ष्ण नोकवाले, काक-गृध्र आदिक के भ्रमण स्थान, विन्ध्याचल पर्वतके समान सूचीमुख, प्रेतोंसे संयुक्त २० रुधिर-मज्जासे युक्त, टूटे भुज-हाथ-उदर-चरणवाले जहां तहां पड़े हुए प्रेतोंसे संयुक्त मार्ग में होकर चले २१ मार्ग में बहुत विचार करते हुए धर्मात्मा राजा युधिष्ठिर मृतकों की दुर्गन्धिसे संयुक्त, अकल्याणरूप और रोमांच करनेवाले मार्ग में होकर चले २२ उन्होंने उष्ण जल से पूर्ण, अत्यन्त दुर्गम्य, नदीको भी देखा; पैने छुरोंसे संयुक्त, असिपत्र वाले वृक्षोंके जंगलको भी देखा २३ श्वेत और सूक्ष्म गरम बालू तथा लोहेकी शिलाओं को पृथक् पृथक् देखा और चारों ओर गरमतेल से भरे हुए लोहे के कढ़ावों को देखा २४ फिर युधिष्ठिरने पापोंके दण्डस्थान दुःखसे स्पर्श होनेवाले और पैने कण्टकोंवाले उस कूटशाल्मलिक वृक्षको भी देखा २५ उस दुर्गन्धि को देखकर धर्मराजने देवदूत से पूछा, कि हमको ऐसे मार्ग में और कितना चलना पड़ेगा २६ वे मेरे भाई कहां हैं, उनको मुझे बताओ । मैं जानना चाहता हूं, कि देवताओं का यह कौनसा देश है २७ देवदूत कहने लगा, कि तुम्हारा जाना केवल इसी स्थान तक है २८ हे राजेन्द्र ! अब मुझको लौटना उचित है । मुझको देवताओं ने इतनी ही आज्ञा दी है कि यदि आप श्रमित होजायँ तो लौटआना योग्यहै २९ हे भरतवंशिन् ! उस दुर्गन्धिसे अचेत और व्याकुल राजा युधिष्ठिर लौटे ३० दुःख और शोकसे घायल धर्मात्मा लौटे । लौटते समय उस स्थान में कहनेवालों के ये दुःखपूर्ण वचन सुने, कि ३१ हे पवित्र कुल वाले, धर्मपुत्र, राजर्षि पाण्डव ! हमारे ऊपर अनुग्रह करने के लिये एक मुहूर्त भर ठहरो ३२ हे अजेय तात ! आपके आनेपर, आपकी सुगन्धि से संयुक्त

होकर जो पवित्र वायु चलती है, उससे हमको सुख होता है ३३ हे राजाओं में बड़े साधु, पुरुषोत्तम युधिष्ठिर ! हम तुमको देखकर बहुत काल तक सुख पावेंगे ३४ हे महाबाहु, भरतवंशी कौरव ! एक मुहूर्त भर यहां निवास करो। तुम्हारे नियत होने पर दुःख दूर होजाने से यहां की वेदना हमको पीड़ा नहीं देती ३५ हे राजन् ! तब धर्मराज ने उस स्थानपर चारों ओर से दुखिया लोगों के इस प्रकार के अनेक कष्टयुक्त वचन सुने ३६ दयालु युधिष्ठिर उन दुखियों के दुःखित वचन सुनकर खड़े होगये और कहा, कि बड़ा खेद है ३७ उस पाण्डवने पहिले बारम्बार सुने हुए निर्बल दुखियों के वचनोंको नहीं जाना ३८ उन वचनोंको न जानते हुए धर्मपुत्र युधिष्ठिर ने कहा, कि आप कौनहैं और यहां क्यों रहते हैं ३९ राजाके वचनको सुनकर उन सबने चारों ओर से उत्तर दिया, कि "मैं कर्ण हूं, मैं भीमसेन हूं, मैं अर्जुन हूं ४० मैं नकुल हूं, मैं सहदेव हूं, मैं धृष्टद्युम्न हूं, मैं द्रौपदी हूं और हम द्रौपदीके पुत्र हैं।" वे सब इस रीतिसे पुकारे ४१ हे राजन् ! तब राजा युधिष्ठिर ने उस देशके वचनोंको सुनकर विचारा, कि यह क्या दैवकर्म है ४२ सुन्दरी द्रौपदी, द्रौपदी के पुत्र और कर्णआदिक महात्माओं से वह कौनसा पाप होगया है ४३ जो ये इस पापकी दुर्गन्धिवाले, बड़े भयकारी देशमें हैं । मैं इन सब पवित्रकर्मी पुरुषों के पापकर्मको नहीं जानता ४४ धृतराष्ट्रका महापापात्मा पुत्र राजा दुर्योधन अपने साथियों समेत कौनसा कर्म करके उस प्रकार ४५ महेन्द्रके समान लक्ष्मीसंयुक्त और बड़ा पूजित है । अब यह किस कर्म का फल है, जो ये नरक में वर्तमान हुए ४६ ये सब धर्मज्ञ, शूर, सच्चे, शास्त्रों के अनुसार कर्मकर्ता, सन्त, यज्ञों के करनेवाले और बड़ी दक्षिणा देनेवाले थे ४७ क्या मैं सोता हूं, जागता हूं और अचेत हूं । बड़ा आश्चर्यकारी यह चित्तका विभ्रम है अथवा मेरे चित्तकी ही भ्रान्ति है ४८ दुःख और शोकसे पूर्ण, सन्देह से व्याकुलचित्त, राजा युधिष्ठिरने इस रीति से अनेक प्रकारका विचार किया ४९ और बड़े क्रोधित होकर देवताओं समेत धर्मकी निन्दा की ५० बड़ी कठिन दुर्गन्धिसे दुःखी राजाने देवदूत से कहा, कि तुम जिनके आज्ञावर्ती हो, उनके पास जाओ ५१ मैं वहां न जाऊंगा; यहीं नियत हूं । हे देवदूत ! तुम जाकर उनसे कहो, कि ये मेरे भाई मेरे समीप रहने से सुखी हैं ५२ बुद्धिमान् युधिष्ठिर की आज्ञा से देवदूत देवराज इन्द्र के समीप गया ५३ उसने वहां

जाकर जैसा जैसा धर्मराजने कहा था और जो जो उसके चित्तकी इच्छाएं थीं, सब इन्द्रसे कहीं ५४ ॥

इति श्रीमहाभारतेस्वर्गारोहणपर्वणि द्वितीयोऽध्यायः २ ॥

तीसरा अध्याय।

वैशम्पायन बोले, कि हे कौरव ! वहां एक मुहूर्ततक धर्मराज युधिष्ठिर के नियत होनेपर इन्द्रप्रमुख सब देवता उस स्थानपर आपहुँचे १ स्वरूपवान् धर्म देवता भी राजाके देखने को वहां आये जहां पर कौरवराज युधिष्ठिर थे २ हे राजन् ! उन पवित्र कुल और कर्मवाले, प्रकाशरूप शरीरधारी देवताओं के आनेपर अन्धकार दूर होगया ३ पापियोंके दण्डका स्थान, वैतरणी नदी और कूटशाल्मली वृक्ष समेत दिखाई न दिया । चारोंओर से भयानक, गर्मतेल से भरे हुए लोहेके कढ़ाव और भयकारी शिलाएं भी दृष्टि से गुप्त होगईं ४-५ हे भरतवंशिन् ! देवताओंके सम्मुख नियत, अत्यन्त शीतस्पर्श से सुखदायक, पवित्र सुगन्धियों से भरी सुखदायक वायु चली । इन्द्रसमेत मरुद्गण, अष्ट वसु, अश्विनीकुमार ६-७ साध्यगण, ग्यारह रुद्र, द्वादश सूर्य, अन्यान्य देवता, सिद्ध और महर्षि सब वहां आये जहां बड़े तेजस्वी, धर्म के पुत्र राजा युधिष्ठिर थे । इसके पीछे बड़ी शोभा से युक्त देवराज इन्द्रने ८-९ विश्वासयुक्त युधिष्ठिर से कहा, कि हे महाबाहु युधिष्ठिर ! तुम्हारे लोक अविनाशी हैं १० हे पुरुषोत्तम ! आओ, आओ । इतने ही से कृतकृत्यता प्राप्त की । हे प्रभो ! तुमने सिद्धि प्राप्त की; हे महाबाहो ! इसीसे तुम्हारे लोक भी अविनाशी हैं ११ तुमको क्रोध न करना चाहिये । हे तात ! सब राजा लोगों को अवश्य नरक देखने के योग्य है १२ हे पुरुषोत्तम ! शुभ और अशुभ कर्मोंके दो ढेर हैं । जो प्रथम उत्तम फलों को भोगता है; वह पीछे नरकको भोगता है १३ और जो पहिले ही नरक भोगनेवाला है, वह पीछे स्वर्ग पाता है । जो बहुत पापकर्मी होता है, वह पहिले स्वर्गको भोगता है १४ हे राजन् ! इसीसे तुम्हारी शुभ कामना से मैंने तुमको नरकमें प्रवेश कराया; तुमने अश्वत्थामा के विषयमें द्रोणाचार्य से छल-संयुक्त बात की १५ हे राजन् ! तुम्हारे इतने छल करने से ही तुमको नरक दिखलाया गया । जैसा तुमने मिथ्या नरक देखा, वैसे ही भीमसेन, अर्जुन, नकुल, सहदेव १६ और कृष्णा द्रौपदी भी नरकमें आई । हे नरोत्तम ! आओ,

वे भी पापों से छूटे १७ तुम्हारी ओरके जो राजा युद्धमें मारे गये, वे सब स्वर्ग में गये । हे पुरुषोत्तम ! अब उनको भी देखो १८ बड़े धनुर्धारी, सब शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ कर्णने भी बड़ी सिद्धि पाई है । उसीके लिये तुम बड़े दुःखी होते थे १९ हे महाबाहु, प्रभु नरोत्तम ! उस सूर्यके पुत्र पुरुषोत्तम को अपने स्थानपर देखो और शोक दूर करो । भाइयोंको और अपने पक्षवाले अन्य राजाओं को भी अपने अपने स्थानपर वर्तमान देखो । तुम्हारे चित्तका ताप दूर हो २०–२१ हे कौरव ! प्रथम दुःख भोगकर अब विशोक और नीरोग हो मेरे साथ विहार करो २२ हे महाबाहु, तात, राजा युधिष्ठिर ! अपने तपसे पवित्र, कर्मफलोंसे युक्त, दान आदिकोंके उत्तम फलोंको प्राप्त करो २३ अब स्वर्गमें देवता, गन्धर्व और दिव्य अप्सराएं कल्याणरूप, दिव्य पोशाक और भूषणधारी तुम्हारे आज्ञावर्ती हों २४ हे महाबाहो ! तुम आपही खड्गबलके द्वारा वृद्धियुक्त और राजसूय यज्ञसे विजय किये हुए लोकों और अपने तपके बड़े फलको प्राप्त करो । हे राजा युधिष्ठिर ! हरिश्चन्द्र के लोकोंके समान तुम्हारे लोक और अन्य राजाओं के भी लोक पृथक् पृथक् हैं, जिनमें तुम विहार करोगे २५–२६ तुम उनमें विहार करोगे, जिनमें राजर्षि मान्धाता, राजा भगीरथ और दशरथ के पुत्र भरत हैं २७ हे राजेन्द्र, युधिष्ठिर ! यह देवताओं की पवित्र नदी, तीनों लोकों की पवित्र करनेवाली आकाशगंगा है; तुम इसमें स्नान करके जाओगे २८ इसमें स्नान करते ही तुम्हारा मनुष्यत्व दूर होगा; शोक, व्याकुलता और शत्रुता तुमसे अलग होजावेगी २९ कौरवेन्द्र युधिष्ठिर से देवराज के इस प्रकार कहने पर प्रत्यक्ष स्वरूपधारी धर्म ने अपने पुत्रसे कहा, कि ३० हे बड़े ज्ञानी, पुत्र, राजा युधिष्ठिर ! तुम्हारी भक्ति, सत्य, वक्तृत्व, सन्तोष और जितेन्द्रियपनसे मैं प्रसन्न हूं ३१ हे राजन् ! मैंने तुम्हारी यह तीसरी परीक्षा ली है । हे क्षत्रिय ! तुम राजा होनेके कारण अपने स्वभाव से हटाने को असम्भव हो ३२ मैंने प्रथम द्वैत वनमें युग्म अरणी काष्ठ के विषय में याचना के द्वारा तुम्हारी परीक्षा ली; तुमने उसको भी पूरा किया ३३ हे भरतवंशिन् ! फिर वहां तुम्हारे भाइयों और द्रौपदी के मृतक होजाने पर श्वानरूप प्राप्तकर मैंने तुम्हारी परीक्षा ली ३४ अब यह तीसरी परीक्षा है, जो तुम भाइयों के लिये यहां नियत होना चाहते हो । हे महाभाग ! तुम अत्यन्त पवित्र, निष्पाप और सुखी हो ३५ हे राजन् ! तुम्हारे भाई नरकके योग्य नहीं हैं । देवराज इन्द्रने यह माया प्रकट की है ३६

हे तात ! सब राजाओं से नरक अवश्य देखने के योग्य है; इसीसे तुमने दो मुहूर्ततक यह बड़ा दुःख पाया ३७ हे पुरुषोत्तम ! नकुल, सहदेव, भीमसेन और सत्यवक्ता शूर कर्ण, बहुत काल पर्यन्त नरक के योग्य नहीं हैं ३८ हे युधिष्ठिर ! राजपुत्री द्रौपदी भी नरक के योग्य नहीं है। हे भरतर्षभ ! आओ, आओ; तीनों लोकोंमें वर्तमान इस आकाशगंगाको देखो ३९ हे जनमेजय ! इस प्रकार से कहे गये तुम्हारे पूर्वपितामह राजर्षि धर्मराज सब देवताओं के साथ होकर चले। फिर ऋषियोंसे स्तूयमान राजाने पवित्र करनेवाली देवताओं की पवित्र नदी गंगाजी में ग़ोता लगाकर मनुष्य शरीरका त्याग किया। उस जलमें ग़ोता लगाकर धर्मराज युधिष्ठिर प्रकाशरूप शरीर पा शत्रुता और शोक से निवृत्त हुए ४०-४२ फिर देवताओं से घिरे हुए, महर्षियों से स्तुतियुक्त, बुद्धिमान् युधिष्ठिर धर्म के साथ वहां गये ४३ जहांपर क्रोधसे रहित, पुरुषोत्तम, शूर पाण्डव और धृतराष्ट्र के पुत्र अपने अपने स्थानपर नियत थे ४४ ॥

इति श्रीमहाभारतेस्वर्गारोहणपर्वणियुधिष्ठिरतनुत्यागे तृतीयोऽध्यायः ३ ॥

चौथा अध्याय।

वैशम्पायन बोले, कि इसके पीछे देवता, ऋषि और मरुद्गणोंसे स्तूयमान राजा युधिष्ठिर श्रेष्ठ कौरवोंके पास गये १ वहां उन गोविन्दजीको भी देखा, जोकि ब्रह्माजी से उपासना आदिके योग्य शरीर धारण किये हुए थे और पूर्व देखे हुए उस शरीर से दिखाई देते थे २ वे अपने शरीर से प्रकाशमान, दिव्य अस्त्र और भयानक पुरुष रूपधारी चक्रआदि दिव्य अयुधोंसे सेवित ३ तथा बड़े तेजस्वी वीर अर्जुनसे युक्त थे। युधिष्ठिरने उस प्रकार रूपधारी मधुसूदनजीको देखा ४ देवताओं से पूजित उन दोनों पुरुषोत्तमों ने युधिष्ठिर को देखकर विधिपूर्वक पूजन करके सम्मेलन किया ५ फिर कौरवनन्दनने दूसरे स्थानपर शस्त्रधारियों में श्रेष्ठ द्वादश सूर्य के समान कर्णको देखा ६ अन्य स्थानपर मरुद्गणों से युक्त, मूर्तिमान् वायु देवताकी गोदी में, दिव्य मूर्तिधारी बड़ी शोभासे युक्त परमसिद्धिको प्राप्त समर्थ भीमसेन को देखा ७-८ फिर उन्हों ने अश्विनीकुमारों के स्थानपर अपने तेजों से प्रकाशमान नकुल और सहदेवको देखा ९ (उत्पल) कमलकी मालावाली, सूर्यके समान तेजस्विनी, अपने तेजसे स्वर्गको व्याप्त किये द्रौपदीको भी देखा १० राजा युधिष्ठिर ने अकस्मात् सब वृत्तान्त पूछना

चाहा तो देवताओं के राजा इन्द्रने सब वृत्तान्त वर्णन किया, कि ११ हे युधिष्ठिर ! यह अयोनिजा, लोककी प्यारी, पवित्र, गन्धवती द्रौपदी स्वर्ग की लक्ष्मी है । इसने तुम्हारे लिये मनुष्य शरीर धारण किया था १२ शिवजी ने आपके सुसंगके अर्थ इसे उत्पन्न किया था । यह राजा द्रुपदके घरानेमें उत्पन्न होकर आपके भोगमें प्राप्त हुई १३ हे राजन् ! ये आपके और द्रौपदी के बड़े तेजस्वी पुत्र अग्निके समान प्रकाशमान, पांचो महाभाग गन्धर्व हैं १४ अब गन्धर्वों के राजा बुद्धिमान् धृतराष्ट्र को देखो; इन्हें तुम अपने पिता का बड़ा भाई जानो १५ यह सौर्य, कुन्तीका पुत्र, अग्नि के समान तेजस्वी, राधेय नामसे प्रसिद्ध बड़ा श्रेष्ठ तुम्हारा बड़ा भाई है १६ यह कर्ण विमान की सवारी में चलता है, इस पुरुषोत्तम को देखो । हे राजेन्द्र ! साध्यगण, विश्वेदेवा और मरुत् नाम देवताओं के समूहों में बड़े पराक्रमी सात्यकी आदि वीर, महारथी भोज, अन्धक और वृष्णियोंको देखो १७-१८ सुभद्राके पुत्र, अजेय, बड़े धनुर्धारी, चन्द्रमा के समान तेजस्वी अभिमन्युको चन्द्रमाके साथ में देखो १९ कुन्ती और माद्रीसे मिलनेवाला यह तुम्हारा पिता पाण्डु सदैव विमानमें सवार होकर मेरे पास आता है २० शन्तनु के पुत्र राजा भीष्मपितामहको वसुओं के साथ में देखो । इस गुरु द्रोणाचार्य को बृहस्पति के समीप देखो २१ हे पाण्डव ! ये अन्यान्य राजा और तुम्हारे शूरवीर यक्ष पवित्र पुरुष और गन्धर्वों के साथ विमान की सवारियों में जाते हैं २२ कितने ही राजाओंने गुह्यकोंकी गति पाई है । उन्हों ने शरीर त्याग करके पवित्र वाणी, कर्म और बुद्धिके द्वारा स्वर्ग को विजय किया २३ ॥

इति श्रीमहाभारतेस्वर्गारोहणपर्वणि चतुर्थोऽध्यायः ४ ॥

पांचवां अध्याय ।

पिछले अध्याय में वर्णन हुआ, कि किसने किस देवताके अंशसे अवतार लिया और शरीर त्यागनेपर किस देवताकी समीपता पाई । वहां सन्देह होता है, कि जिस प्रकार टहनी से उत्पन्न वृक्ष अपने मूलसे पृथक् नियत होते हैं, उसी प्रकार वे अंश भी पृथक् होकर रहे अथवा अपने अपने मूलमें लय होंगे । प्रथम सन्देहयुक्त यह बात है, कि जो शरीर कर्म से उत्पन्न है, उसका नाश ब्रह्मज्ञान के विना होना असंभव है । उस दशामें वे हम लोगों के समान ही नियत रहेंगे ।

दूसरे सन्देह में सिद्ध हुआ है, कि उन्होंने नर अवतारमें जो कर्म किये, उनका नाश होना सम्भव है । इस संशयसे जनमेजयने पूछा, कि महात्मा भीष्म, द्रोणाचार्य, राजा धृतराष्ट्र, विराट, द्रुपद, शंख, उत्तर १ धृष्टकेतु, जयत्सेन, राजा सत्यजित, दुर्योधनके पुत्र, शकुनी २ कर्ण के पराक्रमी पुत्र, राजा जयद्रथ और अन्यान्य घटोत्कच आदिक जिनका वर्णन नहीं हुआ ३ और दूसरे प्रकाशमान मूर्तिवाले वीर राजा जिनका वर्णन हुआ, वे स्वर्ग में गये । बतलाइये कि वे कितने समयतक स्वर्गवासी रहे ४ हे ब्राह्मणवर्य ! आश्चर्य है, कि वहां इन महात्माओं का प्राचीन स्थान है । इन नरोत्तमों ने कर्मफल समाप्त होने पर कौन गति पाई अर्थात् कर्मफल समाप्त होनेपर अपने योग से एकत्व, सायुज्यता या सनातन ब्रह्म को पाया अथवा पृथ्वी पर जन्म पाया ५ हे श्रेष्ठ, द्विजवर्य ! मैं इसको सुनना चाहता हूं क्योंकि तुम अत्यन्त प्रकाशित अपने तपके द्वारा सब वृत्तान्त जानते हो ६ हे राजन् ! महात्मा व्यासजी से आज्ञा लेकर उस ब्रह्मर्षि ने वर्णन करना प्रारम्भ किया ७ वैशम्पायन बोले, कि हे राजन् ! कर्मफल समाप्त होनेपर अपने मूल में सबका प्रवेश होजाना सम्भव नहीं—कोई अपने मूलको पाते हैं, कोई नहीं। जो सब उसमें लय होजायँ तो संसार कैसे नियत रहसकता है और शास्त्र व्यर्थ होजायँ । इससे कोई पुरुष ही मूल में लय होता है, सब नहीं होसकते । तुमने यह अच्छा प्रश्न किया ८ हे भरतर्षभ, राजा जनमेजय ! देवताओंके इस गुप्त रहस्यको सुनो । प्राचीन मुनि पराशरजी के पुत्र, बड़े व्रतधारी, अत्यन्त बुद्धिमान्, सर्वज्ञ और सर्व कर्मफलों के भोगों के ज्ञाता महातेजस्वी दिव्य चक्षुवाले व्यासजी ने इसका वर्णन किया है ९–१० महातेजस्वी बड़े पराक्रमी भीष्मजी वसुओं में लीन होगये । हे भरतवंशिन् ! आठ ही वसु दिखाई देते हैं—नवां कोई नहीं है ११ अंगिरावंशियों में श्रेष्ठ बृहस्पतिजी में द्रोणाचार्यजी लीन होगये, हार्दिक्यका पुत्र कृतवर्मा मरुद्गणों में प्रवेश कर गया १२ प्रद्युम्न सनत्कुमारजी में प्रविष्ट होगया । धृतराष्ट्रने बड़ी कठिनाई से प्राप्त होने योग्य कुबेर के लोकों को पाया १३ और यशस्विनी गान्धारी भी धृतराष्ट्रके साथ वहां गई। राजा पाण्डु अपनी दोनों स्त्रियों समेत महेन्द्रलोक को गया १४ भूरिश्रवा, शल, राजा भूरि, कंस, उग्रसेन, वसुदेव १५–१६ अपने भाई शंख समेत उत्तर ये सब नरोत्तम विश्वेदेवाओं में प्रवेश कर गये १७ चन्द्रमा का बड़ा तेजस्वी पुत्र प्रतापी वर्चा

था; वही अभिमन्यु के नामसे नरोत्तम अर्जुनका पुत्र हुआ १८ वह महारथी, धर्मात्मा, क्षत्रियधर्म से युद्ध में असादृश्य और अनन्य कर्म करके चन्द्रमा में विलीन होगया १९ हे पुरुषोत्तम ! कर्ण का भी सूर्य में लय होगया; शकुनी ने द्वापर को और धृष्टद्युम्न ने अग्नि को प्राप्त किया २० धृतराष्ट्र के सभी पुत्र बल में प्रमत्तरूप राक्षस थे। उन्होंने शस्त्रोंसे पवित्र हो स्वर्ग पाया २१ विदुर और राजा युधिष्ठिर धर्म में लय होगये; भगवान् अनन्त देवता बलदेवजी रसातल में प्रवेश कर गये २२ जिसने ब्रह्माजी की आज्ञासे योगसामर्थ्य के द्वारा पृथ्वी को धारण किया और जो देवताओं का भी देवता सनातन नारायण है, उसके अंशरूप वासुदेवजी कर्म के अन्त होने पर उसी में प्रवेश कर गये। हे जनमेजय ! वासुदेवजी की सोलह हज़ार स्त्रियां २३–२४ कालकी प्रेरणा से सरस्वती नदी में डूब गईं। वहां शरीर त्यागकर स्वर्ग में पहुँच अप्सरारूप होकर वे वासुदेवजी के पास गईं। उस बड़े युद्ध में जो वीर महारथी २५–२६ घटोत्कच आदिक मारे गये; उन्होंने देवता और यक्षोंको सेवन किया। हे राजन् ! दुर्योधन के सब साथी राक्षस थे २७ उन्हों ने भी क्रम से आगे लिखे हुए उत्तम लोक पाये। वे पुरुषोत्तम महेन्द्रके लोक, बुद्धिमान् कुबेर के भवन २८ और वरुणजी के लोकों में चले गये। हे भूपते ! यह सब ब्योरेवार वृतान्त मैंने तुम से कहा। यह सब कौरव और पाण्डवों का चरित्र है। आशय यह, कि ये सब क्रमपूर्वक उत्तम गति पाकर अन्तमें ब्रह्माजी के साथ मुक्त होते हैं। इसी हेतुसे देवभाव मिलने के निमित्त यज्ञ, दान, तप, आदिक अवश्य करने चाहिये। इन ऊपर लिखे हुए शूरवीर लोगों के विशेष जो अन्य शूरवीर हैं, वे स्वर्ग में जाकर भी फिर इसी पृथ्वी पर गिरकर आते हैं २९ सूत के पुत्र बोले, कि हे श्रेष्ठब्राह्मणो ! राजा जनमेजय यज्ञकर्मों के मध्यवर्ती समयों में इस इतिहासको सुनकर अत्यन्त आश्चर्य युक्त हुआ ३० फिर याजक ने उसके उस कर्मको समाप्त किया। आस्तीक भी सर्पोंको छुड़ाकर बहुत प्रसन्न हुआ ३१ तब राजाने सब ब्राह्मणों को दक्षिणाओं से प्रसन्न किया। राजा से पूजित ब्राह्मण भी प्रसन्न होकर अपने अपने घरों को चले गये। राजा जनमेजय उन ब्राह्मणों को बिदा करके तक्षकशिला से हस्तिनापुर को आया ३२–३३ राजा जनमेजय के सर्पयज्ञ में व्यासजी की आज्ञा से वैशम्पायन का वर्णन किया हुआ और अपना जाना हुआ यह सब इतिहास मैंने तुम से वर्णन

किया ३४ यह इतिहास बड़ा पवित्र, उद्धार करनेवाला और महाश्रेष्ठ है । यह सत्यवक्ता, सर्वज्ञ, धर्मज्ञानसम्बन्धी सब रीतियों के ज्ञाता, सत्पुरुष, इन्द्रियों के जालों से निकलकर योगसामर्थ्य से सर्व दर्शनमें सिद्ध, तपसे शुद्धचित्त व्यास मुनि का बनाया हुआ है ३५-३६ ऐश्वर्यवान्, सांख्ययोग के कर्ता, सब तन्त्रों से शुद्ध, लोकमें महात्मा पाण्डव और बड़े तेजस्वी दूसरे क्षत्रियों की कीर्ति को फैलानेवाले व्यासजीने दिव्यदृष्टि से देखकर इस इतिहास को बनाया ३७-३८ जो बुद्धिमान् सदैव हर एक पर्व में इसको सुनावेगा, वह निष्पाप स्वर्ग को विजय करनेवाला मनुष्य ब्रह्मभाव के योग्य होगा ३९ जो सावधान मनुष्य इस सब वेदको आदि से अन्त तक मूलसमेत सुनता है, उसके ब्रह्महत्या आदिक करोड़ों पाप नष्ट होजाते हैं । जो मनुष्य श्राद्ध में समीप बैठ कर श्राद्ध के ब्राह्मणों को इस इतिहासका चतुर्थांश सुनावे, उसकी श्राद्ध-सम्बन्धी खाने पीने की वस्तुएं अक्षय और अविनाशी होकर पितरों के पास पहुँचती हैं ४०-४१ जो पुरुष दिनमें इन्द्रियोंसे, अथवा मनसे पाप करता है; वह सायंकालकी सन्ध्यामें इस महाभारत के पढ़ने से उस पापसे छूटता है ४२ स्त्रियों समेत ब्राह्मण रात्रि में जो पाप करता है; वह प्रातःकालकी सन्ध्या में इस महा-भारतको पढ़कर पापसे शुद्ध होता है ४३ अर्थ एवं आशयकी गुरुता और वृद्धिके कारणसे यह भारत कहा जाता है । जो इस महाभारत अथवा साठ लाख महा-भारतके मूलको जानता है, वह सब पापोंसे छूट जाता है ४४ हे भरतवंशिन् ! श्रेष्ठ धर्म, अर्थ, काम और मोक्षका विषय जो इसमें है, वह दूसरे अष्टादश पुराणों में भी है और जो इसमें नहीं है, वह कहीं भी नहीं है । इसीकी छाया से सब पुराण बने हैं ४५ यह इतिहास मोक्षके चाहनेवाले ब्राह्मण, क्षत्रिय और गर्भ-वती स्त्रीसे सुननेके योग्य है ४६ स्वर्गका अभिलाषी स्वर्गको, विजयाभिलाषी विजय को और गर्भवती स्त्री पुत्र अथवा सौभाग्यवती कन्याको पाती है ४७ इस भारत की नित्य सिद्धिकी केवल मोक्षरूप प्रभु व्यासजीने धर्म प्रवृत्त करने की इच्छा से बड़ी चतुरता से रचना की है ४८ व्यासजी ने चारों वेदके विशेष अर्थ से संयुक्त साठ लाख संहिताको बनाया; उसमें से तीस लाख तो देवलोक में है ४९ पन्द्रह लाख पितृलोक में और चौदह लाख यक्षलोक में है । इस नरलोक में एक लाख वर्णन की है ५० यह संहिता नारदजी ने देवताओंको, असित देवल ऋषिने पितरों को, शुकदेवजी ने राक्षस और यक्षोंको तथा वैश-

म्पायन ने मनुष्यों को सुनाई। इन चारों पुरुषोत्तमों ने व्यासजी से पढ़कर उन स्थानों पर प्रकट की। ब्राह्मण को आगे कर जो मनुष्य इस पवित्र और वेदके समान बड़े अर्थवाले इतिहास को सुनता है, वह पुरुष इस लोकमें सब अभीष्ट सिद्धि और पदार्थों को पाकर शुभ कीर्तिमान् हो परम सिद्धि पाता है। इस में मुझको किसी प्रकारका भी सन्देह नहीं है। चौथाई पुस्तक अथवा चौथाई श्लोक के पढ़नेवाले को भी वह फल मिलता है या व्यासजी में बड़ी श्रद्धा भक्ति करके जो मनुष्य इसको सुनाता है, उसको भी वही फल मिलता है ५१-५४ यह सन्ध्या में भारत के पाठकी विधि वर्णन की। अब भारत के साररूप चार श्लोकों का अर्थ कहते हैं। हज़ारों माता-पिता, सैकड़ों पुत्र-स्त्री, बहुत से जन्मों में प्राप्त किये जो कि होगये, होते हैं और आगे होंगे ५५ उसीके हज़ारों स्थल और भयके सैकड़ों स्थान प्रतिदिन अज्ञानियों में हुआ करते हैं; पण्डितों में नहीं। ऊपर को भुजा उठाकर मैं पुकारता हूं पर कोई मेरी बात नहीं सुनता है, कि अर्थ और धर्म ये दोनों कामसे उत्पन्न होते हैं। वह धर्मके निमित्त अभ्यास नहीं किया जाता ५६-५७ मनुष्य को उचित है, कि इच्छा, भय और लोभ से कभी धर्मको न छोड़े और जीवन के निमित्त भी धर्मको न छोड़े। धर्म अविनाशी है और सुख दुःख आदिक नाशवान् हैं। जीवात्मा तो अविनाशी है पर उसका हेतु अविद्या नाशवान् है ५८ जो पुरुष प्रातःकाल उठकर चार श्लोकों की इस भारतसावित्री का पाठ करे, वह भारतका फल पाकर परब्रह्मको पाता है ५६ जैसे भगवान् समुद्र और हिमालय पर्वत दोनों रत्नाकर प्रसिद्ध हैं वैसेही यह महाभारत भी विख्यात है ६० जो अच्छा सावधान इस भारत इतिहास का पाठ करे वह निस्सन्देह परम सिद्धि पावे ६१ व्यासजी के ओष्ठोंसे निकली हुई, पवित्र, उद्धार करनेवाली, पापघ्नी, कल्याणरूप, अप्रमेय भारतकथाको जो समझता है, उसको पुष्करादिक तीर्थों के जल में मन्त्रपूर्वक स्नान करने से क्या प्रयोजन है ६२॥

इति श्रीमहाभारतेस्वर्गारोहणपर्वणि पञ्चमोऽध्यायः ५॥

छठा अध्याय।

जनमेजयने पूछा, कि भगवन्! ज्ञानियों को किस विधिसे भारतका सुनना योग्य है, इसका फल क्या है और उसकी पारणा में कौनसा देवता पूजने के

योग्य है १ भगवन्! प्रत्येक पर्व समाप्त होनेपर क्या देना योग्य है? वक्ता से कौनसा प्रश्न करना योग्य है, उसको भी मुझसे कहिये २ वैशम्पायन बोले, कि महाराज जनमेजय! इस विधि को सुनो और महाभारत सुननेके फलको भी श्रवण करो ३ हे राजन्! स्वर्गके देवता क्रीड़ा करनेको पृथ्वीपर गये और इस कार्य को करके फिर स्वर्ग में आये ४ सूर्य के पुत्र दोनों अश्विनीकुमार, देवता, लोकपाल, महर्षि, गुह्यक, गन्धर्व, नाग, विद्याधर ५ सिद्ध, धर्म, मुनियों समेत शरीर प्राप्त करनवाले ब्रह्माजी, पर्वत, सागर, नदी, अप्सराओंके समूह ६ ग्रह, संवत्सर, अयन, ऋतु, स्थावर-जंगम सब जगत्, असुर ७ ये सब भारत में नियत दिखाई देते हैं। हे भरतर्षभ! उन सबके अवतार को सुनकर, नाम और कर्म के कहने से ८ मनुष्य घोरपाप करके भी उसके द्वारा शीघ्र पापसे निवृत्त होता है। इस इतिहास को विधिपूर्वक क्रम से सुनकर ९ नियमवान् शरीर से पवित्र हो पारायण करके उनका श्राद्ध करना उचित है १० हे भरतवंशिन्! सामर्थ्य और भक्तिके अनुसार नाना प्रकार के रत्न और महादान ब्राह्मणों को देने योग्य हैं ११ गौ, कांस्य-दोहनपात्र, अच्छी अलंकृत सब अभीष्ट गुणयुक्त कन्या, नाना प्रकार की खाने पीनेकी वस्तुएं १२ विचित्र स्थान, पृथ्वी, वस्त्र, सुवर्ण, घोड़े, मदोन्मत्त हाथी और अनेक प्रकार की सवारियां देनी चाहिये १३ पलँग, पालकी, अच्छे अलंकृत रथ और घर के उत्तम वस्त्र, पृथ्वी से उत्पन्न रत्नआदिक १४ ये सब वस्तुएं, अपना शरीर, स्त्री और पुत्रआदिक पर्यन्त ब्राह्मणों को देने चाहिये। क्रमपूर्वक बड़ी श्रद्धासे दिये गये विषय की सब विधि सुनो। भारत का पारगामी १५ शुद्धचित्त, प्रसन्नमुख, सामर्थ्य के अनुसार सेवा करनेवाला, सन्देहसे रहित, सत्य और सत्यवक्तृत्व में प्रवृत्त, जितेन्द्रिय, बाह्याभ्यन्तरीय पवित्रतासे युक्त १६ श्रद्धावान् और क्रोधजित् होकर जिसप्रकार से सिद्ध होता है; उसको श्रवण करो। पवित्र, सुन्दर मधुरभाषी, आचारवान्, श्वेत वस्त्रधारी, इन्द्रियों का दमन करनेवाला १७ संस्कारी, सर्वशास्त्रज्ञ, श्रद्धावान्, पराये गुणों में दोष न लगानेवाला, स्वरूपवान्, ऐश्वर्ययुक्त, शिक्षित, सत्यवक्ता १८ कथा कहने वाला ब्राह्मण, कथा के काममें दान और प्रतिष्ठासे कृपालु होता है। स्थिरचित्त और अच्छे प्रकार से आसन पर बैठा हुआ अच्छा सावधान वक्ता ब्राह्मण कथा करे। विलम्ब से रहित, मन शीघ्रता रहित, धीरमूर्ति १९ और जिसके

उच्चारण में अक्षर तथा पद स्पष्ट विदित हों, स्वरभाव तथा तिरेसठ वर्णोंसे युक्त, आठों स्थानों से कथित हो २० ऐसा वक्ता श्रीनारायण, नरोत्तम और सरस्वती देवीको नमस्कार करके इतिहास वर्णन करे २१ हे भरतवंशी राजा जनमेजय ! ऐसे वक्ता से भारत की कथा सुननेवाला नियम में नियत, कानों को पवित्र करता हुआ फल पाता है २२ जो मनुष्य प्रथम पारणा करके ब्राह्मणोंको उनकी अभीष्ट वस्तुओं से तृप्त करे, वह अग्निष्टोम यज्ञ का फल पाकर २३ अप्सराओं के समूहों सहित बड़ा उत्तम दिव्य विमान पाता है और आनन्दपूर्वक देवताओं के साथ विहार करता है २४ दूसरी पारणा करके अतिरात्र यज्ञका फल पाकर सब रत्नों से जटित दिव्य विमान पर सवार होता है २५ दिव्य माला तथा पोशाकवाला, दिव्य सुगन्धियों से अलंकृत और दिव्य बाजूबन्द धारण कर वह पुरुष सदैव देवलोकमें पूजित होता है २६ तीसरी पारणा पाकर द्वादशाह यज्ञ का फल पाता है। वह देवताके समान प्रकाशमान होकर अयुत वर्षोंतक स्वर्ग में निवास करता है २७ चौथी पारणामें वाजपेय यज्ञका और पांचवीं पारणामें द्विगुणित यज्ञका फल पाता है और उदित सूर्य के समान, देदीप्त अग्नि के सदृश विमान में देवताओं के साथ सवार हो स्वर्ग में जाता है। वहां स्वर्ग के इन्द्रभवनों में अयुत वर्षोंतक आनन्द करता है २८-२९ छठीं पारणामें दूना और सातवीं में तिगुना फल है। कैलासशिखरके समान वैडूर्य मणिकी वेदीवाले ३० बहुत प्रकार से चलायमान, मणि-मूंगों से अलंकृत, स्वेच्छाचारी, अप्सराओं से संयुक्त विमान में सवार होकर ३१ दूसरे सूर्य के समान सब लोकों में घूमता है। आठवीं पारणामें राजसूय यज्ञका फल पाता है ३२ उदय होनेवाले चन्द्रमाके समान प्रकाशमान सुन्दर विमानपर सवार होता है जोकि चित्तके समान शीघ्रगामी और चन्द्रमाकी किरणों के समान प्रकाशित घोड़ों से युक्त ३३ तथा चन्द्रमुखी उत्तम स्त्रियों से भी सेवित होता है। श्रेष्ठ स्त्रियों के क्रोड़में सुखसे सोया हुआ वह पुरुष स्त्रियों की मेखला और नूपुरोंके शब्दों से जागता है। हे भरतवंशिन् ! नवीं पारणा में यज्ञोंके राजा अश्वमेधका फल पाता है ३४-३५ सुवर्ण स्तंभों से संयुक्त, वैडूर्य मणिसे बनी हुई वेदीवाले, सब ओर दिव्य स्वर्णमय जाली-झरोखों से युक्त, अप्सराओं और स्वर्गचारी गन्धर्वों के समूहों से सेवित, विमानपर सवार होकर बड़ी शोभासे प्रकाशमान ३६-३७ दिव्य माला और पोशाक धारण करनेवाला, दिव्य

चन्दनसे अलंकृत, दूसरे देवता के समान स्वर्गमें आनन्द करता है ३८ दशवीं पारणा पाकर ब्राह्मणों को नमस्कार करके, क्षुद्रघंटिकाओं के जालसे शब्दायमान,ध्वजापताकाआदि से शोभित ३९ रत्नोंकी वेदीवाले,वैडूर्य मणियोंके बन्दनवारों से संयुक्त, स्वर्णमय जालों से चारों ओर व्याप्त, मूंगे और उत्तम पन्नों से बने हुए छज्जों से शोभित द्वारवाले ४० गानविद्या में कुशल, गन्धर्व और अप्सराओं से शोभायमान शुभकर्मियों के विमानों को सुख से पाता है ४१ अग्निवर्ण जाम्बूनद सुवर्ण से अलंकृत, मुकुट से शोभित, दिव्य चन्दन से लिप्ताङ्ग, दिव्य मालाओं से शोभित ४२ देवताओं की क्रियाओं के कारण बड़ी शोभा और दिव्य भोगोंसे युक्त वह पुरुष दिव्य लोकों में घूमता है। वह पुरुष इसी प्रकार गन्धर्वों के साथ इक्कीस हजार वर्षतक स्वर्गलोक में पूजित होता है ४३-४४ और क्रीड़ा के योग्य अमरावती में इन्द्रके ही साथ विहार करता है। दिव्य विमानों की सवारी पाकर, नाना देशों की दिव्य स्त्रियों से व्याप्त हो देवताओं के समान निवास करता है। हे राजन्! फिर सूर्यलोक, चन्द्रलोक४५-४६और शिवलोकमें निवास करके विष्णुजीकी सायुज्यता पाता है। महाराज! यह इसी प्रकार है, इसमें किसी प्रकारका विचार न करना चाहिये। मेरे गुरुका कथन है,कि श्रद्धालु मनुष्य का ऐश्वर्यवान् होना सम्भव है और कथा कहनेवालेको वे सब पदार्थ देने चाहिये जिनको वह मनसे चाहता है ४७-४८ हाथी, घोड़ा, रथ, मुख्यकर दूसरी अनेक सवारियां, कुण्डल, कंकण, यज्ञोपवीत ४९ विचित्र पोशाक, अधिकतर चन्दन आदिक सुगन्धित वस्तुएं देना योग्य है। जो उसको इस रीतिसे देवता के समान पूजता है, वह विष्णुलोक पाताहै ५० हे राजन्! अब मैं वे वस्तुएं बतलाता हूं,जो कथाकी भेंटमें वेदपाठी ब्राह्मणोंको देनेके योग्य हैं ५१ स्वर्गवासी क्षत्रियों की ज्ञाति, सत्यता, वृद्धता, धर्म और चलनको जानकर उनके नाम से ब्राह्मणों को देना उचित है। कथा के प्रारम्भ में प्रथम ब्राह्मणों से स्वस्तिवाचन कराके पर्व समाप्त होनेपर अपनी सामर्थ्य के अनुसार ब्राह्मणोंका पूजन करे ५२-५३ हे राजन्! प्रथम पोशाक और सुगन्धित वस्तुओं से अलंकृत पौराणिक को विधिपूर्वक श्रेष्ठ तस्मई और मिष्टान्न भोजन करावे ५४ फिर मृतफलयुक्त तस्मई घी और शक्कर के साथ आस्तिक्य ब्राह्मणको खिलावे और (गुड़ौदन) भोजनकी वस्तुएं दान करे ५५ सभापर्व में अपूप और मोदकसे युक्त (हविष्य) भोजनकी वस्तु ब्राह्मणों को खि-

लावे ५६ वनपर्व के समाप्त होनेपर मूल फलोंसे ब्राह्मणों को तृप्त करे और इसको समाप्त करके जलकुम्भों का दान करे ५७ उत्तम उत्तम भोजन की वस्तुएं वनके मूल फल और सब अभीष्ट गुणोंसे युक्त भोज्य पदार्थ वेदपाठी ब्राह्मणोंको दे ५८ विराट्पर्वकी समाप्ति में नाना प्रकारके वस्त्रोंका दान दे। हे भरतर्षभ ! उद्योगपर्व के समाप्त होनेपर अभीष्ट गुणों से युक्त ५९ भोजन चन्दन और पुष्पमालाओं से अलंकृत वेदपाठी ब्राह्मणों को खिलावे और हे राजेन्द्र ! भीष्मपर्व के अन्त में अनुपम सवारी का दान करके ६० सब गुणों से युक्त, श्रेष्ठ रीति से बनाई हुई भोजनकी वस्तुएं देना चाहिये । हे राजन् ! द्रोणपर्व की समाप्तिमें वेदपाठी ब्राह्मणों के लिये अच्छा भोजन ६१ पलँग, धनुष और उत्तम खड्ग देने योग्य हैं । सावधानचित्त मनुष्य कर्णपर्वके समाप्त होनेपर सब उपकारी अभीष्ट वस्तुओं सहित ६२ अच्छी रीति से बना हुआ भोजन वेदपाठी ब्राह्मणों को दे । हे राजेन्द्र ! शल्यपर्व समाप्त होनेपर लड्डू, गुड़ौदन ६३ अपूप और सब खाने पीने की वस्तुएं देवे । गदापर्व समाप्त होनेपर मूंगयुक्त अन्नका दान करे ६४ स्त्री पर्वकी समाप्तिमें ब्राह्मणोंको रत्नोंसे तृप्त करे ६५ ऐषिकपर्व के आरम्भमें घृतौदन का दान करे,पर्व गुणयुक्त श्रेष्ठ रीतिसे बनाई हुई भोजनकी वस्तुएं देवे । शान्ति-पर्व समाप्त होनेपर ब्राह्मणोंको (हविष्) घृतयुक्त वस्तुओंका भोजन करावे ६६ अश्वमेधपर्व को समाप्त करके सब अभीष्ट वस्तुओं से युक्त भोजन दे । आश्रम-वासपर्व समाप्त होनेपर भी ब्राह्मणों को हविष् भोजन करावे ६७ मुशलपर्वकी समाप्तिमें सर्वगुणयुक्त गन्धमाला और चन्दनआदि से प्रसन्न करे । महाप्रास्था-निकपर्व में सब अभीष्ट गुणयुक्त भोजन देवे ६८ और स्वर्गारोहणपर्व समाप्त होनेपर ब्राह्मणों को हविष्यान्न भोजन करावे । हरिवंश की समाप्ति में हजार ब्राह्मणों को भोजन करावे ६९ और निष्क समेत एक गौ भी ब्राह्मणको दे । हे राजन् ! यह कहा हुआ दान दरिद्रीको भी आधापर्धा करना योग्य है ७० सावधान श्रोता प्रत्येक पर्व के समाप्त होनेपर सुवर्णसहित पुस्तक कथा कहने वाले को भेंट करे ७१ हे भरतवंशियों में श्रेष्ठ, राजा जनमेजय ! हरिवंशपर्व के प्रत्येक पारणमें विधिपूर्वक तस्मई के भोजन करावे । शास्त्रमें सावधान,रेशमी अथवा सनकी श्वेत पोशाकसे अलंकृत, मालाधारी, अच्छाअलंकृत पुरुष शुभ देशमें बैठकर सब पर्वों को समाप्त करके फिर नियम सहित न्यायके अनुसार गन्धमालाओं से संहिता की पुस्तकों की पृथक् पृथक् पूजा करे ७२ भक्षण की

वस्तु मांस आदिक और पीने की वस्तु आदि अनेक प्रकार के शुभ मनोरथों से तृप्त करके सुवर्ण की दक्षिणा देवे ७३ यह मनुष्य अतिरात्र यज्ञ का फल पाता है, जोकि सब देवता और नर नारायणका कीर्तन करे; फिर गन्ध और मालाओं से उत्तम ब्राह्मणों को अच्छे प्रकार अलंकृत करके नाना प्रकारकी अभीष्ट वस्तुओं सहित विविध दानों से तृप्त करे ७४-७५ हे भरतर्षभ ! इस प्रकार शुद्ध तथा स्पष्ट अक्षरों और पदों का उच्चारण करनेवाला वक्ता ब्राह्मण भी हर एक पर्व में उसी प्रकारका फल पावेगा ७६ हे राजन् ! जब वह ज्ञानी ब्राह्मण भविष्य समय से सम्बन्ध रखनेवाली इस भारत कथा को सुनावे तब श्रेष्ठ ब्राह्मणों के भोजन करनेपर विधिपूर्वक दान देना योग्य है ७७ फिर वक्ताको अच्छी रीति से अलंकृत कर भोजन कराके, उसके प्रसन्न होनेपर शुभ और उत्तम प्रीति होती है। ब्राह्मणों के प्रसन्न होने से सब देवता प्रसन्न होजाते हैं ७८ हे भरतर्षभ ! इसी कारण साधुओंकी ओरसे न्याय और पृथक् पृथक् विधिके अनुसार सब अभीष्ट वस्तुओं द्वारा ब्राह्मणोंको तृप्त करना योग्य है ७९ हे श्रेष्ठ ! यह विधि मैंने तुमसे कही। श्रद्धावान् से ही कर्म होना सम्भव है ८० हे नृपश्रेष्ठ, जनमेजय ! परम कल्याण चाहने और सदैव उपाय करने वाले मनुष्य को यह भारत श्रवण करना और पारण में उपाय करना चाहिये ८१ सदैव भारतको सुने और भारत का ही पाठ करे। जिसके स्थानमें महाभारत है, उसके हाथमें विजय है ८२ भारत बहुत उत्तम और पवित्र है। भारतमें नाना प्रकारकी कथाएंहैं; यह भारत देवताओंसे सेवन किया जाताहै। भारत परमपद है ८३ हे श्रेष्ठ भरतवंशिन् ! यह महाभारत सब शास्त्रोंमें उत्तम है। भारत से ही मोक्षसिद्धि मिलती है, यह सिद्धान्त मैं तुम से कहता हूं ८४ महाभारतकी कथा, पृथ्वी, गौ, सरस्वती, ब्राह्मण और केशवजी का कीर्तन ये कभी पीड़ा नहीं देते ८५ हे श्रेष्ठ ! वेद, रामायण और पवित्र महाभारतके प्रारम्भ, मध्य और अन्तमें सर्वत्र हरि ही गाये जाते हैं। इस लोकमें परमपद चाहनेवाले मनुष्य को भारत का श्रवण करना योग्य है, जिसमें विष्णु की दिव्य कथा और सनातन सरस्वती हैं ८६-८७ यह परमपवित्र है, यही धर्मशास्त्र है, यही सर्वगुणसम्पन्न है। यह भारत पुराण ऐश्वर्य चाहनेवाले को श्रवण करने के योग्य है ८८ शरीर, मन और वाणी आदिक से इकट्ठा किया हुआ पाप ऐसे नाश होजाता है जैसे कि सूर्योदय होनेसे अन्धकार ८९ अठा-

रह पुराणोंके सुनने का फल केवल महाभारतके श्रवण करनेसे वैष्णव अवश्य पाता है ६० स्त्री और पुरुष वैष्णव पदको प्राप्त करें, सन्तान चाहनेवाली स्त्रियों को हरिवंश सुनना योग्य है ६१ पूर्वोक्त फलों की इच्छावाले पुरुषको उचित है, कि यहां सामर्थ्य के अनुसार पांच निष्क सुवर्ण इसके वक्ता को दे ६२ अपना कल्याण चाहनेवाले को स्वर्णशृङ्गी, वस्त्रों से अलंकृत, सवत्सा गौ कथा के वक्ताको विधिपूर्वक देनी योग्य है ६३ हे भरतर्षभ ! हाथ एवं कर्ण के भूषण और मुख्य करके भोजनकी वस्तुएं भी देवे । हे राजन् ! उस वक्ता ब्राह्मण को भूमिदान देना योग्य है । भूमिदानके समान दान न हुआ, न होगा ६४–६५ जो मनुष्य सदैव इसे सुनता है या सुनाता है वह सब पापों से छूटकर वैष्णव-पदको पाता है ६६ हे भरतर्षभ ! वह पुरुष अपनी ग्यारह पुश्तों समेत स्त्री-पुत्रों सहित अपना भी उद्धार करता है । हे राजन् ! इस पारणामें दशांश हवन करना भी योग्य है ६७–६८ ॥

इति श्रीमहाभारतेशतसाहस्र्यांसंहितायांवैयासिक्यांस्वर्गारोहणपर्वणि सर्वपर्वानु-कीर्त्तनं नाम षष्ठोऽध्यायः ६ ॥

स्वर्गारोहणपर्व समाप्त ।
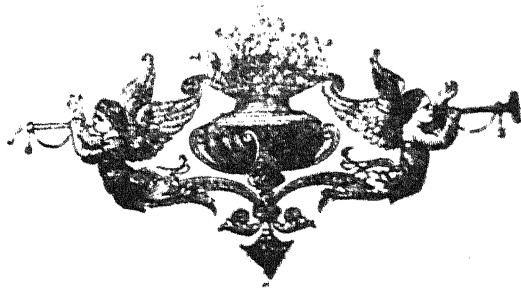
विक्रयार्थ पुस्तकें ।

महाभारतवार्त्तिक कामिल, २०)

आदिपर्व, ... १।=)

सभापर्व, ... ॥)

वनपर्व, ... २।=)

विराटपर्व, ... ॥)

उद्योगपर्व, ... १॥)

भीष्मपर्व, ... १।)

द्रोणपर्व, ... १॥।)

कर्णपर्व, ... १)

शल्यपर्व, गदापर्व, ... ॥।)

अनुशासनपर्व. .... १॥)

सौप्तिकपर्व, यौषिकपर्व, स्त्रीपर्व ।=)

शान्तिपर्व, मय राजधर्म, आपद्धर्म, मोक्षधर्म, ... ३।)

अश्वमेधपर्व, ... ॥≡)

आश्रमवासिकपर्व, मुशलपर्व, महाप्रस्थानपर्व, स्वर्गारोहणपर्व, ... ।≡)

हरिवंशपर्व, ... ३)

महाभारत काशीनरेश. ६)

महाभारत सबलसिंह चौहान

कागज़ सफ़ेद गुन्दा मुजल्लद १॥।)

तथा कागज़ रस्मी .... १।-)॥।

आदिपर्व, ... =)

सभापर्व, ... =)

वनपर्व, ... -)

विराटपर्व, ... =)

उद्योगपर्व, ... ≡)॥

भीष्म, द्रोण, कर्ण, शल्य, गदापर्व, ... ।)॥

सौप्तिकपर्व, यौषिकपर्व,)॥

स्त्रीपर्व, ...)॥

शान्तिपर्व, ... -)

अश्वमेधपर्व, ... ≡)॥

आश्रमवासिक, मुशलपर्व, -)

स्वर्गारोहणपर्व, ...)॥

तारीख़ रूसिया भाषा, २)

तथा मुजल्लद, ... २॥)

तारीख़ इंग्लिस्तान हिंदी, ॥।)